मणिभद्र

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ, जयपुर
का
वार्षिक मुख-पत्र

अंक : अट्ठाईसवां   वि. सम्वत् : २०४३

सम्पादकीय मण्डल

नरेन्द्रकुमार लुणावत	सुरेशकुमार मेहता
राकेशकुमार मोहनोत	विमलकान्त देसाई
मनोहरमल लुणावत	नरेन्द्रकुमार कोचर

कु. सरोज कोचर

: मुद्रक :
त्रिवेणी प्रिन्टर्स
मोतीसिंह भोमियों का रास्ता,
जौहरी बाजार, जयपुर

कार्यालय :
श्री आत्मानन्द सभा भवन
घी वालों का रास्ता, जयपुर - ३०२००३

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ, जयपुर

संघ की स्थायी प्रवृत्तियाँ

- श्री सुमतिनाथ जिन मन्दिर सम्वत् १७८४ में प्रतिस्थापित २५७ वर्षीय सर्वाधिक प्राचीन मन्दिर जिसमे आठ सौ वर्ष पुरानी विभिन्न प्राचीन प्रतिमाओ सहित ३१ पाषाण प्रतिमायें, पंच परमेष्ठी के चरण व नवपदजी का पाषाण पट्ट, अधिष्ठायक देव परम प्रभावक श्री मणिभद्रजी, श्री गौतम स्वामी, आचार्य विजयहीरसूरीश्वरजी आ श्री विजयानन्द सूरीश्वरजी म० की पाषाण प्रतिमायें शासन देवी (महाकाली देवी) एवं अम्बिका देवी की अति प्राचीन एवं भव्य प्रतिमाओ सहित स्वर्ण मण्डित सम्मेद शिखर, शत्रुन्जय, नन्दीश्वर द्वीप, गिरनार, अष्टापद महातीर्थ एवं बीशस्थानक के विशाल एवं अद्भुत दर्शनीय पट्ट।

- भगवान श्री ऋषभदेव स्वामी का मन्दिर, बरखेडा तीर्थ जयपुर-टोंक रोड पर जयपुर से ३० कि मी दूर एवं शिवदासपुरा से ७ कि मी पर बाई ओर स्थित बरखेडा ग्राम मे यह प्राचीन मन्दिर स्थित है। इसका इतिहास लगभग तीन सौ वर्ष पुराना बताया जाता है। प्रतिवर्ष श्रीसंघ के तत्वावधान में फाल्गुन माह मे आयोजित वार्षिकोत्सव मे प्रातःकालीन सेवा पूजा, दिन में प्रभु पूजन एवं सायंकाल को साधर्मी वात्सल्य का आयोजन श्रीसंघ की ओर से सम्पन्न होता है। जिनेश्वर भगवान की प्रतिमा अत्यन्त भव्य और दर्शनीय हैं। तीर्थ स्थल सुरम्य सरोवर के किनारे स्थित होने से रमणीक तो है ही आगन्तुकों के लिए शांत वातावरण एवं आल्हादपूर्ण स्थिति का सृजन करता है।

- भगवान श्री शांतिनाथ स्वामी का मन्दिर चन्दलाई यह मन्दिर भी शिवदासपुरा से २ कि मी दाहिनी ओर चन्दलाई कस्बे मे स्थित है। इस मन्दिर की प्रतिष्ठा सम्वत् १७०७ मे होना ज्ञातव्य है। लगभग साठ हजार की लागत से मन्दिर जी का जीर्णोद्धार व मूल गम्भारे का नव निर्माण करवाकर मिगसर वदी ५ सं० २०३६ को आ श्रीमद्विजय मनोहरसूरीश्वरजी म सा की निश्रा में पुनः प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई है।

- भगवान श्री सुपार्श्वनाथ स्वामी का मन्दिर, जनता कालोनी, जयपुर इस मन्दिर की स्थापना डॉ भागचन्द छाजेड़ द्वारा सन् १९५७ में की गई और सन् १९७५ में यह मन्दिर श्रीसंघ को सुपुर्द किया गया। यहां पर जो श्री सीमंधर स्वामी के शिखरबन्द भव्य मन्दिर का निर्माण कार्य १९८२ मे प्रारम्भ किया गया था, उसका भव्य अजनशलाका प्रतिष्ठा महोत्सव १९८५ मे हो चुका है और कार्य जारी है, दान दाताओं का आर्थिक सहयोग प्रार्थनीय है।

- श्री जैन कला चित्र दीर्घा भारतवर्ष के प्रमुख तीर्थ स्थानो मे प्रतिष्ठित जिनेश्वर

भगवानों एवं जिनालयों के भव्य एवं अलौकिक चित्र, जैन संस्कृति के स्रोत विभिन्न संकलनों का अपूर्व संकलन।

- **भगवान महावीर का जीवन परिचय भित्ति चित्रों में :** स्वर्ण सहित विभिन्न रंगो मे कलाकार की अनूठी कला का भव्य प्रदर्शन। अल्प पठन एवं दर्शन मात्र से भगवान के जीवन मे घटित घटनाओं की पूर्ण जानकारी सहित अत्यन्त कलात्मक भित्ति चित्रो के दर्शन का अलभ्य अवसर।

- **श्री आत्मानन्द सभा भवन :** विशाल उपाश्रय एवं आराधना स्थल जिसमे शासन प्रभावक विभिन्न आचार्य भगवन्तों, मुनिवृन्दो एव समाजसेवकों के चित्रो का अद्वितीय संग्रह एवं आराधना का शांत एवं मनोरम स्थल।

- **श्री वर्धमान आयम्बिल शाला :** परम पूज्य उपाध्याय श्री धर्मसागरजी महाराज की सद्प्रेरणा से सम्वत् २०१२ में स्थापित आयम्बिल शाला मे प्रतिदिन आयम्बिल की समुचित व्यवस्था के साथ उष्ण जल की सदैव पृथक् से व्यवस्था।

  आयम्बिल शाला के हाल का पुनर्निर्माण कराया गया है। स्वयं अथवा परिजनों में से किसी का भी फोटो लगाने का ११११) रु० नगरा। इससे कम योगदानकर्ताओं के नाम पट्ट पर अंकित किये जाते हैं। स्मृति को स्थायी रखने सहित आयम्बिलशाला मे योगदान का दो तरफा लाभ।

- **श्री आत्मानन्द जैन धार्मिक पाठशाला :** चरित्र निर्माण एवं धार्मिक शिक्षा की सायंकालीन व्यवस्था जिसमें सुयोग्य प्रशिक्षिका द्वारा शिक्षण की व्यवस्था।

- **श्री जैन श्वे० मित्र मण्डल पुस्तकालय एवं वाचनालय :** श्रीमान् रतनचन्दजी कोचर के सद् प्रयत्नो से सन् १९३० मे स्थापित पुस्तकालय। दैनिक, साप्ताहिक, मासिक जैन-अजैन समाचार पत्रो सहित धार्मिक पुस्तकों का विशाल संग्रह।

- **श्री सुमति ज्ञान भण्डार :** पं० भगवानदास जी जैन द्वारा प्रदत्त एवं दुर्लभ अन्य ग्रन्थो का संग्रहालय।

- **उद्योगशाला :** महिलाओ के लिए सिलाई बुनाई प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था।

- **साधर्मी भक्ति :** साधर्मी भाई बहिनो को गुप्त रूप से सहायता पहुंचाने का सुलभ साधन। जरूरतमन्द साधर्मी भाई-बहिनो के भरण-पोषण में सहायक बनने, जीविकोपार्जन में सहयोग देने, शिक्षा एव चिकित्सा हेतु सहायता देने और लेने का अद्वितीय संगम साधर्मी भक्ति की कामना रखने वाले भाई बहिनों के लिए इस संस्था के माध्यम से गुप्त दान का अपूर्व क्षेत्र। इस कोष से शीघ्र ही भोजनशाला आदि कार्य शुरु किये जा रहे हैं।

- **मणिभद्र :** इस संस्था की निःशुल्क वार्षिक स्मारिका जिसमें आचार्य भगवन्तो, साधु-साध्वियों, विद्वानो, विचारकों के सारगभित एवं पठनीय लेखो सहित संस्था की वार्षिक विभिन्न गतिविधियों का विवरण, संस्था का वार्षिक आय-व्यय का विवरण, कलात्मक चित्रो सहित विभिन्न प्रकार की हमेशा संग्रहणीय सामग्री का प्रकाशन।

□

गीत

□ डॉ० शोभनाथ पाठक
एम ए (हिन्दी सस्कृत)
पी-एच डी साहित्य रत्न

मणिभद्र का अठाईसवा, अक अभ्युदय की आशा।
महावीर का मन प्रचारक, विश्व शाति की परिभाषा॥

आत्मानद सभा का सम्बल, तपागच्छ सघों की थाती,
जैन जगत् का जीवनदाता, मन वाणी जिसका गुण गाती।
आध्यात्मिक उत्थान समर्पित, नैतिकता का नित्य निखार,
स्नेह-समन्वय, सुख समष्टिमय, प्रेम, परस्पर, युग उपकार॥

इस विशिष्ट साहित्यिक कृति से, मिट जाती सपूर्ण निराशा।
मणिभद्र का अठाईसवा, अक अभ्युदय की आशा॥

वार्षिक विशेषाक बनकर यह, जैन जगत् का है आलोक,
भरत भूमि ही नही, किंतु, गर्वित इस पर पूरा भूलोक।
आगम, अग, उपाग आदि का, इसमे तत्त्व समाहित है,
दर्शन की दिव्यता समाहित, इससे जन-जन का हित है॥

मनोकामना पूरा करने वाले मन की अभिलाषा।
मणिभद्र का अठाईसवा, अक अभ्युदय की आशा॥

महावीर का जन्म वाचना दिवस, अक को अर्पित है,
सभी सत सतियां जी को यह अनुपम कृति समर्पित है।
सपादक मडल की महिमा, महावीर अमृत वाणी,
'मणिभद्र' को अपना करके, सुखी बनेगा हर प्राणी।

कौन जौहरी इस हीरे को, इतना सुदर तराशा,
मणिभद्र का अठाईसवा, अक अभ्युदय की आशा।

———

महाविदेह क्षेत्र विहरमान परमतारक श्री जिनेश्वर भगवत श्री सीमंधर स्वामी

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ मन्दिर, जनता कालोनी, जयपुर
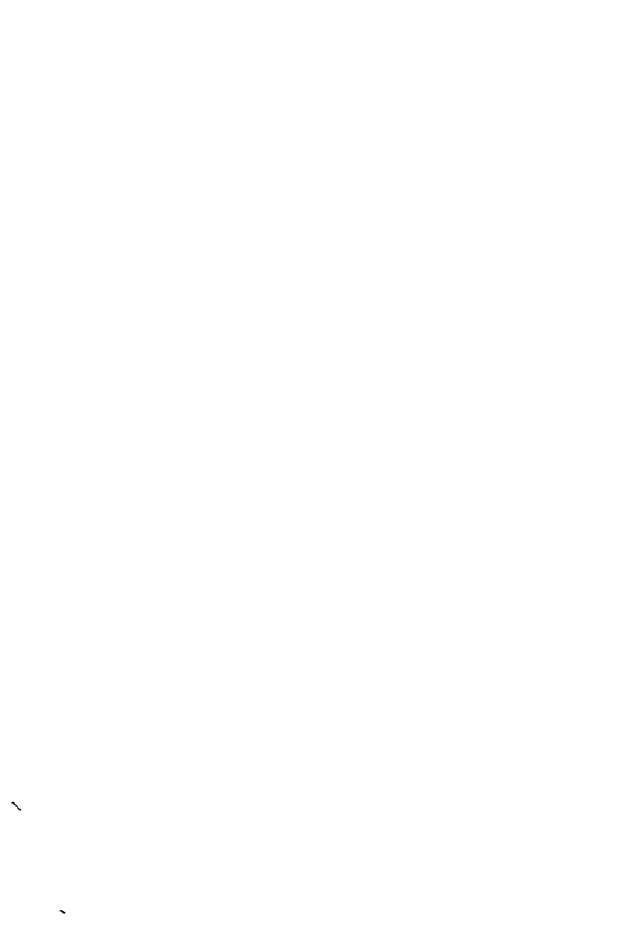
❋ मंगल पाठ ❋

चत्तारि मंगलं, अरिहंता मंगलं,
सिध्दा मंगलं, साहू मंगलं,
केवलि पन्नत्तो धम्मो मंगलं।

अर्थ—चार पदार्थ मंगल अर्थात् कल्याणकारी है—अरहिंत, सिद्ध, साधु और केवली प्ररूपित धर्म।

चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंता लोगुत्तमा,
सिध्दा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा,
केवलि पन्नत्तो धम्मो लोगुत्तमो।

अर्थ—चार पदार्थ लोक में उत्तम है—अरिहंत, सिद्ध, साधु और केवलि प्ररूपित धर्म।

चत्तारि सरणं पवज्जामि, अरिहंते सरणं पवज्जामि,
सिध्दे सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि,
केवलिपन्नतं धम्मं सरणं पवज्जामि,

अर्थ—चार वस्तुयें शरण रूप है। भय से बचने के लिए मैं चार की शरण लेता हूं—अरिहंत, सिद्ध, साधु और केवली प्ररुपित धर्म।

अनुक्रमणिका

✶

सम्पादकीय

(1) श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ जयपुर के वार्षिक मुख पत्र मणिभद्र का यह २८वा पुष्प महावीर स्वामी के वाचना उत्सव के दिन आपकी सेवा मे प्रस्तुत करते हुये हमे अति हर्ष की अनुभूति हो रही है।

(2) परम पुज्य आचाय भगवत श्रीमद विजय कलापूर्ण सूरी की पावन निश्रा मे गत वर्ष का चातुर्मास जयपुर सघ के लिये वडा ही महत्वपूर्ण, यादगारी एव चिरस्मरणीय रहा है। आपकी ही शुभ निश्रा मे जयपुर नगर के जनता कालोनी मे नवनिर्मित भव्य शिखर वद्ध जिन मन्दिर में परमतारक श्री जिनेश्वर भगवत श्री सीमधर स्वामी आदि जिन विम्बोका प्राण प्रतिष्ठा स्वरुप अजनशलाका प्रतिष्ठा महोत्सव अत्यन्त उल्लास एव आनन्द के वातावरण मे सम्पन्न हुआ।

(3) श्री सघ के प्रवल पुण्योदय से इस वर्ष भी आचायदेव श्रीमद विजय भक्ति सूरीश्वरजी महाराज के प्रशिष्य परम पुज्य शासन प्रभावक पुज्य मुनिराज श्री अरुण विजय जी महाराज साहब ठाणा 3 का तथा पुज्य साध्वी लावण्य श्री जी महाराज साहब की शिष्या पुज्य साध्वी श्री नयप्रज्ञा श्रीजी महाराज साहब आदि ठाणा ६ का चातुर्मास है।

(4) इस चातुर्मास काल मे परमपुज्य मुनिराज श्री अरुण विजय जी महाराज साहब की प्रेरणा, मार्गदर्शन एव निश्रा मे सघ ने सर्व प्रथम बार चातुर्मासिक रविवारीय धार्मिक शिक्षण शिविर आयोजित किया है। उक्त शिक्षण शिविर मे पुज्य मुनिराज के प्रति रविवार दिये गये 'कर्म की गति न्यारी' विषयक प्रवचन की पुस्तिका भी प्रकाशित की जा रही है। समस्त जैन समाज ने इस शिविर योजना को काफी सराहा है एव लोग वडी सख्या मे इसमें सम्मिलित होकर लाभ ले रहे हैं।

(5) मणिभद्र के इस २८वें पुष्प को सुन्दर, पठनीय एव ज्ञानवर्धक वनाने मे पुज्य आचाय भगवतो साधु साध्वीयो एव विद्वान लेखको ने अपने लेख देकर जो सहयोग हमे प्रदान किया है उसके लिये सम्पादक मण्डल सभी के प्रति हार्दिक आभार एव कृतज्ञता प्रगट करता है। लेखो मे प्रकाशित विचार लेखको के व्यक्तिगत हैं अत सम्पादक मण्डल उसके लिये जिम्मेदार नही है।

(6) उक्त अक मे जनता कालोनी के नव जिनालय के मूलनायक श्री सीमधर स्वामी भगवन्त का चित्र भी प्रकाशित किया गया है जो वडा ही आकर्षक एव दर्शनीय है।

(7) अन्त मे सम्पादक मण्डल इस अक के प्रकाशन मे विज्ञापन दाताओ एव प्रेस सामग्री सग्रह मे सहयोगकर्त्ताओ के प्रति भी अपना धन्यवाद एव हार्दिक आभार व्यक्त करता है।

—सम्पादक मण्डल

आचार्य देव श्रीमद् विजय भक्ति सूरीश्वरजी महाराज के प्रशिष्य
प. पू. मुनिराज श्री अरुणविजयजी महाराज

जैन शासन की सौरभ और राजस्थान का गौरव

"प पू. मुनिराज श्री अरुणविजयजी महाराज"

❀ व्यक्तित्व एवं प्रतिभा ❀

लेखक : श्री नरेन्द्रकुमार लुनावत

राजस्थान राज्य के पाली जिले के गोडवाड देश के बाली तहसील का विजापुर गांव पूज्यश्री की जन्मस्थली रही है। विजापुर के सुप्रसिद्ध श्री चन्दुलाल खुशालचन्द झवेरी परिवार के सुप्रसिद्ध श्रेष्ठीवर्य स्व श्रीमान झवेरचन्दजी चन्दुलालजी झवेरी के सुपुत्र भद्रिक परिणामी धर्मनिष्ठ श्रेष्ठि श्रीमान गुलाबचन्दजी झवेरचन्दजी झवेरी पिता एवं तपस्वीनि बारह व्रतधारी सुश्राविका शान्तिदेवी के आप प्रथम ज्येष्ठ पुत्र हैं। वि. सं. २००६ मे शुभ दिन जन्म पाकर इस अवनी पर अरुणोदय करने वाले आप बाल्यवय में अरुण कुमार नाम के होनहार बने। बम्बई निवासी इस परिवार में व्यावहारिक शिक्षण आपने बम्बई में पूर्ण किया।

प. पू. वैराग्योपदेशक तपोमूर्ति १००८ स्व. आचार्यदेव श्रीमद् विजय भक्तिसूरीश्वरजी महाराज के पट्टप्रभावक समुदायाधिपति प. पू. आचार्यदेव श्रीमद् विजय प्रेमसूरीश्वरजी महाराज एव प. पू. आचार्य श्रीमद् विजय सुबोधसूरीश्वरजी महाराज के सदुपदेश से यौवन में ही आपका मन संसार से उठ गया। यौवन वय में संसार से विरक्त होकर भागवतीनिष्क्रमण करके पूज्य आचार्यदेव के पास भागवती प्रव्रज्या ग्रहण की। साधु जीवन में मुनि अरुणविजय महाराज के नाम से आप पहचाने गये।

भगवान महावीर के सिद्धान्त को रोम रोम में ठोसे हुए ज्ञान गर्भित वैराग्यवासित हृदयवाले आपने अप्रमत्त भाव से ज्ञानोपासना की। संस्कृत-प्राकृत का अभ्यास करते हुए आगे बढे। "राष्ट्र-भाषा रत्न" की परीक्षा वर्धा से देकर आप हिन्दी भाषाविद् बने। प्रयाग से "साहित्यरत्न" की परीक्षा देकर, उपाधि प्राप्त की एव अच्छे साहित्य-विद् बने। भारतीय विद्या भवन बम्बई के दर्शन स्नातक रहकर सम्पूर्ण सस्कृत माध्यम से न्याय दर्शन शास्त्री एवं न्याय-दर्शनाचार्य की परीक्षा प्रथम श्रेणी मे प्रथम नम्बर से पास कर आप दर्शन शास्त्र के ज्ञाता बने। भारतीय एवं पाश्चात्य दर्शनो का तुलनात्मक अभ्यास आपका प्रशस-नीय है।

आबाल ब्रह्मचारी विशुद्ध चारित्रधारी शिष्य संपदा सम्पन्न पूज्यश्री अरुणविजयजी महाराज ने जैन शासन में एक अच्छे प्रवचनकार का स्थान प्राप्त किया है। तात्विक एवं सैद्धान्तिक विषयो को ब्लेक बोर्ड के माध्यम से तर्क युक्तिपूर्वक चार्ट चित्रों के साथ प्रवचन मे समझाना आपकी एक विशिष्ट विशेषता है। विविध भाषाओं में प्रवचन करने की क्षमता रखते है। संस्कृत भाषा में भी धारा प्रवाह रूप से आप बोलते हैं। आपके द्वारा आयोजित शिविर "विद्वत् परिषद" एवं "संस्कृत

पण्डित परिषद्" मे दार्शनिक विषयो की चर्चा आपने सस्कृत भाषा मे की है। महाराष्ट्र प्रात मे विहार एव चातुर्मास करते हुए आपने मराठी भाषा मे वर्षों तक प्रवचन दिए हैं। सूरत-बडौदा-जामनगर आदि गुजरात के चातुर्मासो मे आपने गुजराती भाषा मे प्रवचन दिये हैं एव साहित्य लिखा है। वर्तमान मे राजस्थान प्रान्त मे प्रथम बार ही पधारे हैं। उदयपुर एव जयपुर के चातुर्मासो मे हिन्दी भाषा मे प्रवचन एव लेखन आप कर रहे हैं। इस तरह महाराष्ट्र, गुजरात, सौराष्ट्र, राजस्थान आदि प्रान्तो के विविध शहरो मे एव बम्बई मे आपके प्रशसनीय—यशस्वी अनेक चातुर्मास हुए हैं।

आप केवल प्रसिद्ध प्रवचनकार एव मधुर वक्ता ही नहीं अपितु अच्छे लेखक भी हैं। तात्विक-सैद्धान्तिक विषयों पर आयोजित प्रवचन माला की पुस्तकें हिन्दी गुजराती भाषा में आपने स्वय लिखी है। (१) कर्म तणी गति न्यारी, (२) भावना भव नाशिनि, (३) सचित्र गणधरवाद (दो भागों में) (सभी गुजराती) पाप की सजा भारी (दो भागो मे हिन्दी), तथा वर्तमान मे जयपुर के चातुर्मास मे "कर्म की गति न्यारी" हिन्दी में लिख रहे हैं। आगम साहित्य भी आपने सपादित करके छपवाये हैं। आपकी शुभ निश्रा में प्रतिवर्ष ग्रीष्मावकाशकालीन एव चातुर्मासिक रविवारीय धार्मिक शिक्षण शिविरो का सुन्दर आयोजन होता है। जिससे सैंकडो युवको ने तत्वज्ञान प्राप्त किया है। व्रत—नियम लेकर जीवन परिवर्तन किया है।

आपके सदुपदेश एव प्रेरणा से 'श्री महावीर विद्यार्थी कल्याण केन्द्र" बम्बई मे विद्यार्थी जगत एव युवा पीढी के हितार्थ कार्यरत है। साहित्य प्रकाशन आदि का कार्य करता है। "श्री महावीर जैन साधर्मिक कल्याण केन्द्र" नामक दूसरी सस्था जो साधर्मिक बन्धुओ के लिए आज तक २० लाख रुपये वितरित कर चुकी है। ऐसी सस्थाओं के प्रेरक कर्णधार—सूत्रधार भी आप ही हैं।

वर्तमान मे पूज्यश्री के सदुपदेश एव मार्गदर्शनानुसार लाखो की लागत से "श्री महावीर वाणी समवसरण मदिर" श्री हथूण्डी तीर्थ मे निर्माण हो रहा है। जैन इतिहास एव सस्कृति का यह जीवन्त प्रतीक राजस्थान राज्य मे अपने प्रकार का एकमेव—अद्वितीय बनेगा।

जब तपागच्छ सघ जयपुर ने आपके उदयपुर चातुर्मास की प्रसिद्धी सुनी तो सघ की महासमिति ने आपका आगामी चातुर्मास जयपुर मे कराने का विचार किया और सघ के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष तथा मैं, सघ मन्त्री की हमीयत से आपकी सेवा मे उदयपुर उपस्थित हुये और आपसे आगामी चातुर्मास जयपुर में करने की विनती की।

जयपुर सघ का यह बडा ही प्रबल पुण्योदय एव सौभाग्य है कि आप जैसे गुणवान एव विद्वान मुनिराज का यह चातुर्मास राजस्थान की राजधानी जयपुर में हो रहा है। आपका विद्वतापूर्ण ओजस्वी प्रवचन लोग मन्त्र मुग्ध होकर सुन रहे हैं और अनेको विद्वानों को यह कहते हुये सुना गया है कि इस प्रकार तर्कपूर्ण और जैन दर्शन का भारतीय एव पाश्चात्य दर्शनो से तुलनात्मक विवेचन किसी जैन साधु मुनिराज से नहीं सुना। आज के वातावरण मे जबकि विज्ञान की आधी और भौतिकवाद का प्रचण्ड तूफान आध्यात्मिक और नैतिक मूल्यो को ग्रस्त व्यस्त कर रहा है, तब इस प्रकार के प्रवचनो की अधिक उपयोगिता है ताकि धार्मिक श्रद्धा का दीप बुझने के बजाय अधिक तेजी से प्रज्वलित होता रहे।

प्रतिभा वैविध्य से सम्पन्न ऐसे व्यक्तित्व एव कृतित्व को राजस्थान के गौरव रूप मे पाकर हम कृतकृत्य हैं।

अन्त में मेरी शासन देव से यही प्रार्थना है कि पूज्य मुनिराज जैन शासन के साररूप रत्नत्रयी की आराधना तथा प्रभावना करने हेतु दीर्घकाल पर्यन्त जैन शासन मे जयवन्त रहे। शतश वदना।

नवकार महामंत्र स्मरण पर शिवकुमार का दृष्टांत

लेखक : आचार्य श्री विजय इन्द्र दिन्न सूरीश्वरजी महाराज

"द्यूतं च मांसं च सुरा च वेश्या,
पापर्द्धि चौर्यं परदारसेवा ।
एतानि सप्तव्यसनानि लोके,
घोरातिघोरं नरकं नयन्ति" ।।

जूआ खेलना, माँस खाना, शराब पीना, वेश्या गमन करना, शिकार करना, परस्त्री गमन करना, चोरी करना, झूठ बोलना । यह सात व्यसन है । एक बहुत बड़े सेठ का शिव कुमार नाम का लडका इन मे फंसा हुआ था बुरे मित्रों की संगति से उसने अपना जीवन बहुत कलंकित कर लिया । वह अपने माता-पिता और बड़ों का कहना भी नही मानता था । माता-पिता को पूछे बिना, घर में से धन चोरी करके अपने ऐसे कुव्यसनो में फंसे हुए मित्रो को खिलाता । इस प्रकार वह खूब धन उड़ाता था । पिता ने बहुत बार शिक्षा दी । परन्तु वह ठीक रास्ते पर नही आया ।

पिता की अब मरने की तैयारी थी । इस समय सगे सम्बन्धी रिश्तेदार आदि सब मिलने के लिए आकर बैठे थे । इसलिए वह लड़का भी आ गया । सभी सम्बन्धी उसको पहचानते ही थे । इस में उन सब के बीच मे वह अपने पिता से कहने लगा, पिताजी अन्तिम समय मेरे हित के लिए कोई शिक्षा देते जाओ । सभी सगे-सम्बन्धी यह समझ रहे थे कि लड़का अपने मां बाप की आज्ञा में है । परन्तु सभी बातें तो उसका पिता ही जानता था । इसलिए व्यवहार-कुशल पिता ने कहा :

"नासेइ चोर-सावय विसर
जल-जलण-बंधण-भयाइं ।
चितिज्जंतो रक्खस रण
राय-भयाइं भावेण" ।।

अर्थात् नवकार महामंत्र के स्मरण से चोर, सिंह, सर्प, पानी, अग्नि, बंधन, राक्षस, संग्राम, राजभय आदि सभी भय दूर हो जाते हैं । पिता ने ऐसी शिक्षा दी । और कहा बेटा कोई संकट आवे तो नवकार महामंत्र का स्मरण करना । तेरे सभी दुःख दूर हो जाएंगे । ऐसा कह कर पिता ने सब के सामने अपने लडके के सिर पर हाथ रख कर आशीर्वाद दिया और परलोक सिधार गए । पिता का पीछे का मरण-क्रिया आदि का जो भी कार्य करना था, सब को अच्छा दिखाने के लिए सब व्यवहार लडके ने संभाल लिया । माता समझी कि मेरा लड़का अब ठीक हो जाएगा । परन्तु वह सब कुछ दुनियां को दिखावे के लिए ही कर रहा था । पिता के मरने के पश्चात् उसने अपने पिता का एकत्रित किया हुआ धन अपने मित्रो के साथ जूआ, शराब, वैश्यावृत्ति आदि मे उड़ा दिया और अब स्वयं भिखारी बन गया ।

उसके मित्र भी उसको अब धनहीन देखकर चले गए। अब वह अकेला ही रह गया। और स्वय के खाने-पीने की भी समस्या खडी हो गई। कुछ सम्बन्धी उस पर दया करके कभी २ भोजन भी करा देते तो उनके घर मे भी वह चोरी कर लेता। उसके इस व्यवहार से उन्होंने उसको भोजन देना भी छोड दिया। अब वह इधर उधर भटकने लगा।

किसी दुष्ट आचार विचार वाले योगी के कहने पर वह उसका उत्तर साधक बनने के लिए तैयार हो गया। योगीराज ने उसको काली चौदस रात्रि का समय दिया। और एक मुर्दा शरीर भी योगीराज ने वहा से मगवा लिया शमशान मे गए। योगी ने अपने हाथ मे एक खुली तलवार रखी और मुर्दे को सुलाने के लिए एक बडा पट्टा भी मगवा लिया। अपने पास वह पट्टा रखवाया। एक खड्डा खोदा उसमे दा-२ के अगारे जलाये। जब अग्नि दगदगायमान होने लगी तब योगीराज ने अपनी तुबी मे रखा हुआ पानी अपने हाथ मे ले कर के तीन फेरी देकर कुछ मत्र पढा। बाद मे वह पानी मुर्दे पर छिडक दिया। योगी का मत्र सिद्ध हो चुका था। पानी छिडकने पर पट्टे पर सुलाया हुआ मुर्दा खडा हो गया। परन्तु फिर वापस सो गया। उस समय योगीराज ने लडके को हुक्म लगा रखा था कि मुर्दे के बाये पैर का अगूठा पकड कर के पैर के निचले हिस्से को छोट-२ हाथ से रगडते जाना। लडका ऐसा ही कर रहा था। लेकिन उसके मन मे कुछ शका उत्पन्न हो गई कि अब मेरी मौत हो जाएगी। अब उसको पिता ने अपने अतिम समय मे जो शिक्षा दी थी, वह याद आ गई। मन ही मन मे वह नवकार महामत्र का स्मरण करने लगा। योगी के मत्र से से नवकार मत्र अधिक बलवान था। इसलिए योगी का सिद्ध हुआ मत्र भी उस लडके को मार नहीं सका। योगी के मत्र के प्रभाव से दो बार मुर्दा तलवार लेकर खडा तो हो गया लेकिन लडके झटका नहीं मार सका। ऐसा लगा कि लडका कुछ पढता लगता है। उसने पूछा अरे लडके, क्या तू कुछ पढ रहा है। लडके ने जवाब दिया हे योगीराज मैं क्या जानता हू जो पढू गा। योगी समझा कि मेरी ही सिद्धि म कुछ कमी है। यह बेचारा लडका क्या जानता है। योगीराज न फिर अपने मत्र का जाप करके तीन बार फेरी दी। तुबी मे से पानी लेकर छिडका। सरत आवाज देकर के मुर्दा खडा हो गया। तलवार शिवकुमार पर वार करने वाली ही थी, परन्तु नमस्कार महामत्र के प्रभाव से लडके का कुछ भी नहीं बिगडा। उसने योगीराज के ही तलवार द्वारा टुकडे कर दिए, इस मत्र मे सिद्धि ऐसी थी, जिसको झटका मार वह मुर्दा का स्वर्ण पुरुष बन जाता। उसका बाँया अग काटने पर फिर वैसा का वैसा बन जाता। ऐसे स्वर्ण पुरुष का प्राप्त होना कोई पुण्य का ही चमत्कार है। वह लडका अब व्यसनो से मुक्त हो गया और नवकार मत्र गिनता हुआ अपने पिता का नाम उज्ज्वल बनाया और बहुत खुशी हुआ। □

सर्वोत्कृष्ट मंगल 'धर्म'

※ लेखक : अध्यात्मयोगी पू. पन्यास प्रवरश्री भद्रंकर विजयजी गणिवर्य
हिन्दी अनुवादक : मुनि रत्नसेन विजयजी महाराज

धर्म उत्कृष्ट मंगल है। धर्म से सर्व कार्यों की सिद्धि होती है।

धर्म की स्तुति और प्रशंसा श्री तीर्थंकर और गणधर भगवन्त भी करते हैं। "इस जगत् में धर्म उत्तम और शरणभूत है।" यह बात तीर्थंकर भगवन्त बतलाते हैं क्योंकि उन्होने स्वयं धर्म की महिमा को साक्षात् देखा है, अनुभव किया है, और स्वीकार किया है, और अन्य को भी स्वीकार कराने में सतत् प्रयत्नशील रहे हैं।

धर्म अचिंत्य शक्ति-सम्पन्न है और वह अपना कार्य प्रतिसमय अविरत गति से करता रहता है···· परन्तु जब तक उसके माहात्म्य को श्रद्धापूर्वक स्वीकार न किया जाय·······तब तक उसका लाभ उठाना सम्भव नही है।

धर्म को छोड़कर अन्य वस्तुओं का प्रभाव मनः कल्पित है··· परन्तु धर्म का फल तात्विक है। धर्म के तात्त्विक फल के अनुभव के लिए उसका स्वीकार जरूरी है और यह स्वीकार जिन-वचन से···· अपनी बुद्धि से······· ऊहापोह और स्व-संवेदन से भी हो सकता है। किसी भी प्रकार से धर्म के प्रभाव का स्वीकार श्रद्धापूर्वक हो तो तुरंत ही आत्मा का कल्याण हो जाय····यह निश्चित बात है।

द्विविध धर्म

धर्म दो प्रकार का है—(१) श्रुत धर्म और (२) चारित्र धर्म। श्रुत रूप धर्म वस्तु के स्वभाव को बतलाता है और चारित्र धर्म वस्तु-स्वभाव से उत्पन्न ज्ञान के अनुसार आचरण करने की प्रेरणा देता है। इसी आचरण से मोक्ष की प्राप्ति होती है। ज्ञान रूप धर्म से वस्तु के स्वभाव का बोध होता है। चारित्र रूप धर्म अपने स्वभाव-अनुसार आचरण कराकर जीव को उसके फल का भोक्ता बनाता है।

वत्थुसहावो धम्मो

वस्तु का स्वभावरूप धर्म उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यात्मक है। वस्तु-मात्र प्रति समय उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य (ध्रुवता) से युक्त है।

पूर्व पर्याय का व्यय, उत्तर पर्याय का उत्पाद वस्तु (द्रव्य) रूप में उसका सदाकाल अस्तित्व यह वस्तु का धर्म है। 'जड़ की तरह चेतन में भी यह धर्म प्रतिसमय अपना कार्य कर रहा है।'—इस प्रकार का ज्ञान होना······ श्रद्धा से स्वीकार करना और उसका आचरण करना, यह मुक्ति-प्रदायक है और इससे विपरीत ज्ञान, श्रद्धा और आचरण भव-प्रदायक हैं।

चेतन में पाँच भाव

जड़ का धर्म जड़ स्वरूप है, चेतन का धर्म चेतन स्वरूप है।

सुख और दुःख का, पुण्य और पाप का, बंध और मोक्ष का अनुभव जड़ को नहीं, चेतन को होता है।

जड मे केवल पारिणामिक और औदयिक भाव है, जबकि चेतन मे पारिणामिक और औदयिक के अलावा औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिक भाव भी रहे हुए हैं।

जीव मे कर्म के साथ सम्बन्ध मे आने की योग्यता है और कर्म पुद्गल मे भी जीव के साथ सम्बन्ध मे आने की योग्यता है। पारस्परिक इस योग्यता के कारण जीव मे औदयिक उपरान्त क्षायिक आदि भाव उत्पन्न होते हैं।

स्वभाव रूप धर्म के ज्ञान से, उस धर्म की श्रद्धा और श्रद्धानुसार आचरण करने से आत्मा औदयिक आदि भावो मे से छूटकर क्षायोपशमिक और क्षायिक भावों को प्राप्त करती है।

प्रतिक्षण उत्पाद, व्यय और ध्रौव्यात्मक स्व-स्वरूप के ज्ञान श्रद्धान और आचरण से आत्मा मोक्ष सन्मुख बनती है।

धर्म का और ज्ञानश्रद्धा

वस्तु में रहे दो धर्म उत्पाद और व्यय अनुक्रम से राग और द्वेष के उत्पादक हैं। ध्रौव्य धर्म से राग और द्वेष मे मध्यस्थ परिणाम प्रगट होते है परन्तु यदि मात्र एक ध्रौव्य धर्म को ही स्वीकार किया जाय और उत्पाद-व्यय धर्मों को स्वीकार न किया जाय तो वह मोहोत्पादक बनता है।

ध्रौव्य धर्म से उत्पन्न मोहमूर्च्छा के निवारण का सामर्थ्य उत्पाद-व्यय धर्मों मे है और उत्पाद व्यय धर्मों से जन्य राग-द्वेष के भावो के निवारण का सामर्थ्य वस्तु के ध्रौव्य धर्म मे है।

इस प्रकार राग, द्वेष और मोह जो चित्त के सक्लेशकारक परिणाम हैं, उन तीनों का निवारण उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य से युक्त वस्तु स्वभाव के चिंतन मे रहा हुआ है।

राग, द्वेष, रति अरति, हर्ष शोक आदि के जनक उत्पाद-व्यय धर्म हैं, उसमे ध्रौव्य धर्म के ज्ञान के मिश्रण से उन द्वन्द्वों मे माध्यस्थ्य भाव पैदा होता है और अकेले ध्रौव्य धर्म के स्वीकार मे जन्य मोह और मूर्च्छा के निवारण का सामर्थ्य उत्पाद-व्यय धर्म के चिन्तन मे रहा हुआ है।

त्रिधर्मयुक्त वस्तु स्वभाव से औदासीन्य भाव उत्पन्न होता है। इसी कारण धर्म का अन्तिम लक्षण "वत्थु सहावो धम्मो" कहा गया है। वस्तु का स्वभाव ही धर्म है। धर्म, वस्तु-स्वभाव से भिन्न नही है और वस्तु स्वभाव, धर्म से भिन्न नहीं है।

धर्म, नया पैदा करने का विषय नही है, वह तो अनादि सिद्ध सहज स्वभाव रूप है। उसके अज्ञान और अश्रद्धान से ही आत्मा, समस्त भार अपने ऊपर लेकर भय, शोक, चिंता, उद्वेगादि द्वन्द्वों के अधीन बनती है। उन सब से मुक्त बनने का उपाय वस्तु-स्वभाव रूप धर्म के स्वीकार मे रहा हुआ है।

इस प्रकार के स्वीकार मे करने का कुछ भी नहीं है मात्र उसका ज्ञान कर, उसे स्वीकार कर, उस ज्ञान और श्रद्धा मे स्थिर रहना है। यह स्थिरता ही चारित्र है। वस्तु धर्म के ज्ञान और स्वीकार से वह स्थिरता स्वत प्रगट होती है। जितने अंश मे वह स्थिरता उत्पन्न हो उतने अंश मे धर्म है और जितने अंश मे अस्थिरता रहती है उतने अंश मे अधर्म है। अधर्म को दूर करने और धर्म को पालन करने का साधन वस्तु-स्वभाव के ज्ञान और श्रद्धा मे रहा हुआ है।

श्रद्धा का स्वरूप

प्रयत्न फलदायी है इस प्रकार के विश्वास को श्रद्धा कहते हैं। कृपा फलदायी है—इस प्रकार के विश्वास को भक्ति कहते हैं। कृपा यह प्रभु के सामर्थ्य का सूचक शब्द है। 'यत्न' यह भक्त की श्रद्धा का सूचक शब्द है। श्रद्धा और भक्ति दोनो के मिलन से कार्य-सिद्धि होती है। भक्ति के अनुपात मे श्रद्धा का जन्म होता है और श्रद्धा के अनुपात में भक्ति फलीभूत बनती है।

'गतिमान हुए बिना इष्ट स्थान की प्राप्ति संभव नही है।' यह मान्यता गतिशील व्यक्ति की श्रद्धा का सूचक है। इष्ट स्थल में इष्टत्व की बुद्धि ही न हो तो चलने की क्रिया कैसे सम्भव है? इष्टत्व की बुद्धि में इष्ट स्थल की प्रधानता है। प्रधान इष्ट स्थल से भक्ति पैदा होती है। चलने की क्रिया किए बिना इष्ट स्थल पर पहुँच नही सकते है, यह ज्ञान, क्रिया की मुख्यता सिद्ध करता है। इस प्रकार क्रिया का मूल श्रद्धा है……श्रद्धा का मूल भक्ति है…… भक्ति का मूल प्रभु के माहात्म्य का ज्ञान और उसका मूल आत्मा का माहात्म्य है।

भक्ति का स्वरूप

आत्मा महिमावंत द्रव्य है……अतः उसकी पहिचान कराने वाले परमात्मा के प्रति भक्ति जागृत होती है। इस भक्ति से क्रिया के प्रति आदर पैदा होता है और यह आदर प्रयत्न में परिणत होता है।

क्रिया के बिना फल नहीं है—यह श्रद्धा जिस ज्ञान की अपेक्षा रखती है, वह ज्ञान आत्मा तथा आत्मा के शुद्ध स्वरूप का ज्ञान है। और उस शुद्ध स्वरूप के ज्ञान से परमात्मा की भक्ति जागृत होती है। परमात्मा के नाम स्मरण से शुद्ध आत्मा का स्मरण होता है और परमात्मा की मूर्ति के दर्शन से आत्मा के शुद्ध स्वरूप का दर्शन होता है।

आत्मा के शुद्ध स्वरूप की प्रतीति कराने वाले प्रभु के दर्शन और स्मरण प्रभु की मूर्ति और प्रभु के नाम से होता है; अतः उसके होने में प्रधान अनुग्रह प्रभु का गिना जाता है। इस प्रकार के अनुग्रह की शक्ति प्रभु सिवाय अन्य में न होने से भव्य जीव के लिए प्रभु सेव्य है…… उपास्य है…… आराध्य है और उनके वचन शिरसा वद्य हैं। प्रभु के अनुग्रह से आत्म ज्ञान सत् क्रिया और सत् श्रद्धा उत्पन्न होती है, यह दृढ़ निर्णय सम्यग्दृष्टि जीव को होता है।

□

जीवन किसलिए

यह जीवन, जीवन को मिटा देने के लिए है, इस बात को हृदय में धारण करके ही तुझे जीना है, इसे तू भूल मत जाना।

अर्थात् तुझे उस स्थिति में पहुँचना है कि जहां पहुँच कर जीवन जीने के लिए एक भी बाह्य पदार्थ की आवश्यकता न रहे! जड़पुद्गल की लेशमात्र भी सहायता के बिना केवल चैतन्य के सहारे ही जीना है।

इसलिए आज से ही जीवन जीने के लिए बाह्य आवश्यकता पर रोक लगा।

जब कोई भी जरूरत नहीं रहेगी, तब जीवन मिट जायेगा!

चातुर्मास में धर्माराधना क्यों ?

लेखक मुनिराज श्री जिनोत्तम विजयजी महाराज

मानव-जीवन और धर्म—

मानव-जन्म की दुर्लभता से भला कौन अपरिचित है ? ऐसा दुर्लभ मानव जीवन यदि सफल करना हो तो जीवन में धर्म की अत्यधिक आवश्यकता है। यह एक महत्वपूर्ण पाथेय है। जिसकी जीवन मे कदम-कदम पर आवश्यकता होती है। यह धर्म ही जीवन की बाह्य एव आभ्यन्तर रूप से रक्षा करता है। धम की यह विशेषता बताने के लिये महर्षि गौतम का सूत्र है कि— 'धम्मोय ताणं' धर्म मानव-जीवन का त्राता है, रक्षक है।

धर्म आवश्यक क्यों ?

यदि मानव मे से धर्म निकाल दिया जाये तो शेप शून्य रहता है। धम व्यक्ति का विकास-साधक है। यह समाज को सुव्यवस्थित रखता है, राष्ट्र की उन्नति करता है और विश्व को एक परिवार मानने की बुद्धि उत्पन्न करता है। धम अत्यन्त ही व्यापक तत्व है। धर्म ही व्यष्टित मानव की आत्मा को, उसके जीवन को, मानव से बने समष्टि-समाज को, देश को, समग्र ससार को धारण किये हुए है। कहना तो यह चाहिये कि यह ब्रह्माड ही एक धर्म एक नियम के आधार पर चल रहा है। इसलिये व्यक्ति मे, समाज मे, इस विश्व मे जहाँ और जब धर्म का व्यभिचार होता है, अधर्म अनियम का पालन होता है, वहा और उस समय अशाति की सृष्टि होती है। आज विश्व में अशान्ति का मूल कारण धम का सर्वांग रूप से पालन न होना ही है।

हमारा यह जीवन कुछ इस प्रकार से विनिर्मित है कि इसमें सघर्ष, दीनता, परिस्थितियों मे उतार चढाव, विपरीत अनिष्ट सयोग, अनिष्ट अप्रत्याशित आक्रमण आदि सहन करने पडते हैं। जब कष्टो-कष्टो-परेशानियां की आँधी आती है तो सामान्य मनुष्य किंकर्त्तव्यविमूढ हो जाता है, उसकी समस्त शक्तियाँ कुण्ठित हो जाती हैं, बुद्धि समुचित प्रकार से काम नहीं करती और निराशा चारो ओर से उसे घेर लेती हैं। ऐसे समय में रक्षा की एक चाह उत्पन्न होती है। कौन हमारी रक्षा करे ? कौन हमारा उद्धार करे ? कौन हमे यथार्थ ज्ञान प्रदान कर हमे आश्वस्त करे ? तब उत्तराध्ययन सूत्र मे इस समस्या का समाधान सुझाया गया—

चातुर्मास काल मे व्यक्ति कस कर धर्माराधना कर ले तो फिर वर्ष भर ही क्या, भविष्य में आजीवन एव जन्म-जन्मान्तर तक उन चार माह की आराधना का फल प्राप्त करता रहेगा।

'एगो हु धम्मा नर-देव ! ताणं' अर्थात् हे राजन् ! इस ससार मे एक मात्र धम ही जीवन का रक्षक है।

मोक्ष प्राप्त करने का एक मात्र उपाय धम ही है। एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जो धम के बिना मोक्ष तक पहुचा हो सिद्धशिला पर अधर्मी

व्यक्ति पहुंच ही नहीं सकता, यह सनातन सत्य है।

धर्म की शक्ति—

कर्म सत्ता को तोड़ने वाला केवल धर्म है। शक्तिशाली कर्मसत्ता से वीरता-पूर्वक युद्ध करने वाला यदि कोई है तो वह धर्म ही है।

कर्म के साथ संघर्ष मे धर्म ही विजय होता है, इसलिये धर्म की सत्ता है, धर्म का सम्मान है और उसकी प्रशंसा है। अशरण मनुष्यों का शरण धर्म है।

चातुर्मास का महत्त्व एवं नियम —

चातुर्मास में जीवोंत्पत्ति अधिक होती है तथा विकारों की, प्रबलता होती है और व्यापार धंधा मन्द एवं गुरु महाराज का योग होने से धर्माराधना का काल होता है। अतः चातुर्मास के लिये विशेष नियम निश्चित किये जाते हैं। १८ देश के राजा कुमारपाल चातुर्मास में नित्य एकासणा, घी के अतिरिक्त पांच विगइ का त्याग, हरे साग का त्याग, चारों माह ब्रह्मचर्य और पाटण नगर से बाहर नहीं जाने के नियमों का पालन करते थे।

चातुर्मास काल ही धर्म-धन उपार्जित करने का अपूर्व अवसर है और इस काल मे आधारित धर्म विशेषतः फलदायक होता है।

गणित का एक प्रश्न है कि बारह में से चार गये तो शेष कितने रहे ? व्यावहारिक गणित में तो इसका उत्तर आठ होता है, परन्तु आध्यात्मिक गणित के अनुसार इसका उत्तर 'शून्य' होता है। यदि हम कृषक को कहें कि तू चातुर्मास मे चार महीने आराम करे और आठ महीने खेती करे तो क्या आपत्ति है ? तब वह कहेगा कि आठ माह आराम करना स्वीकार है, परन्तु चार माह तो खेती अवश्य करूंगा।

धर्माराधक के लिये भी यही बात है कि इन चार माहों में व्यक्ति कस कर धर्माराधना कर ले तो फिर वर्ष भर ही क्या, भविष्य में आजीवन एवं जन्म-जन्मान्तर तक उन चार माह की धर्माराधना का फल प्राप्त करता रहेगा क्योंकि— 'वावणी नी वेला छे, वावी ल्यो, भाई वावी ल्यो।'

जिस प्रकार खेती के लिये तीन बातें आवश्यक हैं—(१) खेड़ी हुई भूमि, (२) वर्षा ऋतु का समय और (३) उत्तम बीज: उसी प्रकार से धर्माराधक व्यक्ति के लिये भी (१) मन की स्वच्छता, (२) प्रवचनों की अभी वर्षा और (३) तप-त्याग के बीज की आवश्यकता होती है।

इसलिये श्रावक को चातुर्मास में ज्ञानाचार दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार और वीर्याचार की शुद्धि एवं वृष्टि के लिये अनेक प्रकार के नियमों को ग्रहण करके चातुर्मास में धर्माराधना करनी चाहिये। धर्म की उचित अराधना से पांचों इन्द्रियों में पूर्णता प्राप्त होती है; सौभाग्य, दीर्घ आयु, बल, निर्मल यश एवं विद्या तथा सम्पत्ति प्राप्त होती है। अतः सामायिक, आवश्यक, पौषध देव-पूजा, स्नात्र-विलेपन, ब्रह्मचर्य-पालन, क्रिया, दान और तप को अपनाकर धर्माराधना के द्वारा अपना मानव-जन्म सार्थक करना चाहिये। □

क्या गुण स्थानकों का १४ स्वप्न के साथ कोई सम्बन्ध होगा ?

लेखक मुनिश्री मुनिचन्द्रविजयजी

१४ स्वप्न अनादि-अनत कालीन है। प्रत्येक तीर्थंकरो की माताओ को यही स्वप्न आते ही है। क्या इस १४ स्वप्न के साथ १४ गुण स्थानको का कोई सबध होगा ? विचार करने पर ऐसा जान पडता है कि १४ स्वप्न के साथ १४ गुण स्थानको का कुछ तो साम्य होगा ही।

इस लेख मे यह साम्य-दर्शक विचार प्रस्तुत है। हो सकता है इसमे क्षति भी हो, लेकिन विचारको को विचारणीय सामग्री अवश्य मिलेगी।

(१) प्रथम स्वप्न हाथी है। प्रथम गुण स्थानक मिथ्यात्व है। जहा काम-क्रोधादी दोषों की बहुलता हैं। वह यह सबसे निम्न स्तर का गुणस्थानक है। हाथी मे सबसे ज्यादा काम-वासना होती हैं। हाथी की इस दुर्बलता को ध्यान मे रखकर ही हथिनी के चित्र द्वारा लोग उसे पकडते हैं।

सबसे ज्यादा काम हाथी मे ? सबसे ज्यादा दोषों की उत्कटता मिथ्यात्व गुणस्थानक मे।

(२) दूसरा गुणस्थान सास्वादन। यह गिरते हुए जीवो को होता है। दूधपाक खाने के बाद उसकी उल्टी मे जैसा स्वाद होता है, वैसा सम्यक्त्व का स्वाद यहा पर होता है। अत इसका नाम सास्वादन है।

दूसरा स्वप्न बैल है। हाथी से बैल कम कामी होता है। खाये हुए सग्रहीत अन्न को वह दुबारा चबाया करता है।

(३) तीसरा मिश्र गुणस्थानक चढनेगिरते दोनो समय हो सकता है। इसका समय है अन्तमूहूर्त। यहा पर रहे हुए जीव को सत्य तत्त्व के प्रति राग भी नहि होता, न दोष ही।

तीसरा स्वप्न है सिह (शेर)। जात्य (सर्वश्रेष्ठ) सिंह जीवन मे एक ही बार विषय-सेवन करता है। और सिह मे उत्तमता-अधमता का मिश्रण भी होता है। वह क्रूर भी है, सत्वशील भी। घातकी भी है और पेट भर जाने के बाद किसी की भी हत्या नही करने वाला भी है। इसमे गुण-दोष का मिश्रण है। मिश्र गुणस्थानक मे भी सत्य-असत्य का मिश्रण है।

(४) चौथा गुणस्थानक अविरति सम्यग्दर्शन है। आत्मादि तत्त्वो की रूचि-श्रद्धा का नाम सम्यग्दर्शन है। जैसी आत्म-समृद्धि परमात्मा मे है, वैसे ही मेरे मे भी है, इसी श्रद्धा का नाम सम्यग्दर्शन है।

चतुर्थ स्वप्न लक्ष्मी है। वह सम्यग्दृष्टि देवी है। चतुर्थ गुणस्थानक की स्वामिनी है। लक्ष्मी देवी से यहा चतुर्थ गुणस्थानक मे आत्म-लक्ष्मी का परिचय होता है ऐसा सूचित होता है।

(५) पांचवां गुणस्थानक देशविरति है। यहां आत्म-स्वरूप की श्रद्धा होने के बाद उस स्वरूप को प्रकटित करने के लिए दैशिक-आंशिक प्रयत्न है। यह गुणस्थानक व्रतधारी श्रावक को होता है।

पांचवा स्वप्न फूलों की माला है। श्रावक जब उपधान करता है संघ निकालता है, तब तीर्थमाला पहिनता है। यह पुष्पमाला मानों ऐसे कह रही है कि आप आत्म स्वरूप की प्राप्ति करने के लिए जो प्रयत्न कर रहे हो, उसका मैं अभिनन्दन करती हूं। आप विजय प्राप्त करें—ऐसी भावना के साथ आपके कंठ में मैं स्थापित होती हूं।

(६) छट्ठा गुणस्थानक प्रमत्त संयत है। आत्म स्वरूप की श्रद्धा और ज्ञान होने के बाद उस स्वरूप की प्राप्ति के लिए जो सर्वतोमुखी प्रयत्न वह सर्वविरति है। वह मुनिओं को होती है। सर्वतोमुखी प्रयत्न होने पर भी इस गुणस्थानक पर प्रमाद की संभावना है, अतः इसका नाम प्रमत्त संयत है छट्ठा स्वप्न चन्द्र है। चन्द्र प्रमादी है। पूर्णिमा के दिन ही सिर्फ वह समयसर उदित होता है। फिर वह प्रतिदिन विलम्ब ही विलम्ब करता रहता है। और पूर्ण प्रकाशित होने पर भी चन्द्र कलंकी है। यहां मुनी अवस्था होने पर भी प्रमाद का कलंक है क्या कलंक प्रमाद का परिचायक नहि है?

(७) सातवां गुणस्थानक अप्रमत्त संयत है। यहां रहे हुए मुनिको आत्म-विशुद्धि प्रकृष्टतम होती है। ७वां स्वप्न सूर्य है। सूर्य की तरह मुनिकी विशुद्धि अत्यन्त देदीप्यमान है। चन्द्र प्रमादी है, वह उदय पाने में एक दम नियमित है, एक मिनिट भी देरी नहि करता। यहां रहे हुए मुनिको भी प्रमाद नहि होता, उन्हें सतत्-सतत् पल भी आत्म जागृति होती है। सूर्योदय होने से अन्धकार विलीन होता है, सुषुप्त जगत जागता है, मुर्झित कमल खिलते है, उल्लू आदि अधकार प्रिय पक्षी छिप जाते हैं, कादव-कीचड़ सूख जाता है, सत्यासत्य मार्ग का भेद विदित होता है। वैसे ही ऐसे महान विशुद्धि के स्वामी मुनिराज के अतर में अविद्या का अंधकार दूर होता है, सुषुप्त आत्मा जाग पड़ती है, आत्मगुण विकसित होते है, मोहादि दोष छिप जाते हैं, प्रमाद का कादव सूख जाता है सत्य मार्ग का स्पष्ट दर्शन होता है।

क्या अप्रमत्त मुनिके साथ सूर्य का कुछ संबंध नहि दिख पड़ता?

(८) आठवां अपूर्वकरण गुणस्थानक है। यहां आये हुए मुनिराज क्षपक श्रेणि या उपशम श्रेणि शुरू करने के लिए कर्म सैन्य पर विजय प्राप्त करने के लिए प्रस्थान करते हैं। भवचक्र में ऐसा कभी नही किया है, अतः इसका नाम 'अपूर्वकरण' है (अपूर्व क्रिया का नाम अपूर्वकरण)

८ वां स्वप्न है : ध्वज। हां......भाई...... ! कर्मसैन्य पर विजय पाने के लिए प्रस्थान करना हो तब झंडा (ध्वज) तो फहराना ही पड़ता है न?

इस स्वप्न का ध्वज विजय-प्रस्थान के समय विजय-पताका का प्रतीक नही है क्या?

(९) नवों गुण स्थानक है : अनिवृत्ति बादर। यहा पर कषायों का बादर (स्थूल) अंश होते हैं अतः इसका नाम अनिवृत्ति बादर है।

(१०) ९ वां स्वप्न है : पूर्ण कलश। कलश माने कुंभ। अभी तो जीवात्मा श्रेणी में आगे ही आगे बढ़ रहा है। थोड़े ही केवलज्ञान सुन्दरी के साथ लग्न होगा। किन्तु उस वक्त महोत्सव भी अनिवार्य है न? और हां.......महोत्सव के समय कुम्भ स्थापना भी आवश्यक है न? यह कलश क्या कुम्भ स्थापना का परिचायक नहीं है?

(११) दसवां गुण स्थानक है : सूक्ष्म संपराय। संपराय का अर्थ है : कषाय। कषायों के सूक्ष्म अंश यहां विद्यमान होने से इसका नाम है : सूक्ष्म

सपराय। १० वा स्वप्न है पद्म-सरोवर। यह पद्म सरावर क्या कहता है ? जो ग्रात्मा रूपी मरोवर ग्रनक गुणो के कमलो के मघमघायमान है, शाभायमान है, उसमे मुनिराज सपूर्णतया निमग्न है, डूब गये हैं।

(१२) ग्यारहवाँ गुणस्थानक है उपशान्त मोह। यहा मोह पूर्णतया उपशान्त हो जाने से उसका नाम है उपशान्त मोह। हा याद रहे कि यहा मोह का उपशम ही हुग्रा है, क्षय नही। ग्रत मोह के उदय की पूर्ण शक्यता है। ग्रौर माहादय होते ही यहा रही हुई ग्रात्मा गिर जाती है। कोई ६-७ गुणस्थानक पर ठहर जाय। कोई ४ गुणस्थानक पर ठहर जाय तो कोई गिरता-गिरता मिथ्यात्व तक भी पहुच जाय। ग्रौर ग्रगर किसी का ग्रायुष्य यहा पर (11 गुणस्थानक म) ही समाप्त हो जाय तो वह कालधम पाकर ग्रनुत्तर विमान मे भी पहुच जाय।

१३ वा स्वप्न है समुद्र। उसमे मत्स्य, ग्राह ग्रादि भयकर जलजतु रहे हुये हैं। मुनिरूपी महान व्यापारी व्यापार करने के लिए समुद्र की सफर करता है। समुद्र मे ग्रगर तूफान हुग्रा ग्रौर गिर गये तो खलास सीधा नीचे (मिथ्यात्व मे) ग्रौर कोई काष्ठ मील जाय तो जीवन बच भी जाय (४-६-७ गुणस्थानक मे ग्राकर) ग्रौर समुद्र पार करके रत्नद्वीप म पहुच गये ता रत्नो के ढेर भी मील जाय। (काल धम पा जाय ता ग्रनुत्तर विमान के सुखो का स्वामी हो जाय)

(१४) बारहवा गुणस्थानक है क्षीण मोह। यहा स्थित महात्मा का मोह क्षीणनष्ट हो जाने से इसका नाम है क्षीणमोह। १२ वा स्वप्न है विमान। मोह का ग्राकर्षण-बल तदन नष्ट हो जाने से ग्रब तो ग्रात्म-विमान जल्दी-जल्दी ऊचे ही ऊचे चला जाता है। ११वें गुणस्थानक पर ग्राया हुग्रा जीव गिरता ही है लेकिन यहा पर गिरने का काई सवाल ही नही है। हा यह ग्रात्म-विमान ग्रब तो वह प्रदेश मे उतरने वाला है जहा केवलज्ञान की ज्योति जोरो स प्रकाशित है, पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण से मुक्त रॉकेट जिस तरह ग्रति वेग से ग्रागे बढता है, वैसे ही मोह से बिलकुल मुक्त ग्रात्म-विमान भी बहुत ही द्रुतगति से, जहा क्रोड सूय ग्रौर चाद के प्रकाश भी फीके दिखते हैं ऐसे स्थान पर प्रयाण कर रहा है—ऐसा विमान का स्वप्न मानो सूचित कर रहा है।

(१५) तेरहवा गुणस्थानक है सयोगी। यहा ग्राई हुई ग्रात्मा ग्रनत केवलज्ञान ग्रौर केवल दशन को पाती है। यहा मन-वचन-काया के योगो की उपस्थिति एव प्रवृत्ति होने से इसका नाम 'सयोगी' है। १३ वा स्वप्न है रत्नपुज। केवलज्ञान ग्राने पर ग्रात्मा दोष-मुक्त ग्रौर गुणपूर्ण बनती है। ग्रात्मगुण ही तो रत्न है। सच्चे रत्नो का पुज-ढेर यहा पर ही प्राप्त होता है।

(१६) चौदहवा गुणस्थानक है ग्रयोगी। यहा मन-वचन-काया के योगो का निरोध होने से इसका नाम ग्रयोगी है ग्रयोगी=योग रहित ध्यान रहित ऐसा ग्रथ नही है, किन्तु ग्रयोगी योगातीत का नाम है। जहा ग्रब कोई योग या ध्यान की जरूरत नही है वह ग्रयोगी गुणस्थानक। साइकिल या मोटर की ग्रावश्यकता वहा तक ही है, जहा तक मजिल प्राप्त न हो। योग ग्रौर ध्यान की वहा तक ही जरूरत है, जहा तक योगातीत ग्रवस्था प्राप्त न हो। बीज जब वृक्ष बन जाता है तब वहा नष्ट हो जाता है। ग्रथवा यो कहिए कि बीज का काय ही वृक्ष है। काय-फल मिलते ही कारण ग्रदृश्य हो जाता है। ध्यान योग की निष्पत्ति होते ही वह (योग) नष्ट हो जाता है। ध्यान या योग स्वय साध्य नही है, लेकिन साधन ही है। साध्य तो है ग्रात्म स्वरूप की प्राप्ति हो गई है उन्हें ग्रब ध्यान क्या है ? योग क्या ? १४ वा स्वप्न है निधूम ग्रग्नि। क्या कभी ग्रापने ऐसी ग्रग्नि-ज्वाला देखी है, जिसमे धूग्रा न हो ? हा शुद्ध ग्रात्मा

अब यहां ऐसी बनी है, जहां दोष के धुयें अस्त हो गये हैं। अग्नि शिखा का स्वभाव ऊंचे उठने का है। पानी का स्वभाव नीचे जाने का है। पानी के बूंद बूंद में मानो ऐसी अभीप्सा है : मुझे नीचे ले जाइए। अग्नि के कण-कण में ऐसी अदम्य झंखना है : मुझे जाना है मेरे मूल स्थान पर। मेरा निवास स्थान है ऊपर सूर्यलोक मे। वैसे यहां शुद्ध आत्म-ज्योति की भी मानो पुकार है। बस अब मुझे यहां नही रहना है। अब मेरा स्थान यह नहीं है। चल ओ आत्मन् ! चल तेरे ही निवास-स्थान पर, जहां अनंत सिद्धों की निर्मल आत्माएँ विराजमान हैं, वहां चल-ऊपर चल। इस शरीर के पिंजरे को तोड़ दे—इससे मुक्त हो जा। सीमित में रहना तेरा स्वभाव नहीं है—अनंत में—असीम में लीन होना ही तेरा स्वभाव है। चल आत्मन् ! चल।" ऐसा उपदेश अग्निशिखा सम आत्मा दे रही हो ऐसा प्रतीत नहीं हो रहा ?

कर्म से भारी बनी हुई आत्मा पानी की तरह नीचे जाती है और कर्ममुक्त आत्मा अग्नि शिखा की तरह ऊपर सिद्धशिला में जाती है। आप पानी जैसे नही, अग्नि जैसे बने। खड्डे की ओर नहीं, पर्वत की ओर प्रयाण करें, अनुस्रोत मे नही, प्रति स्रोत में जायें। नीचे नहीं ऊपर आगे बढ़ें। अग्नि शिखा की यह सतत् उद्घोषणा है। यह उद्घोषणा क्या हमारे कानों में कभी पड़ेगी ? क्या हम कभी ऊपर की ओर उठने के लिए उद्यत होंगे ?

□

क्रोध शमन

क्रोध क्यों करते हो ? क्रोध करके तुम अपनी आत्मा मे अशान्ति पैदा करते हो। इसलिये क्रोध जागृत हो, उस समय क्षमा धारण करो। नीचे लिखे उपाय इसके लिए उपयोगी सिद्ध होंगे—

(१) क्रोध पैदा होते ही मौन धारण कर लो।

(२) जिस प्रसंग के कारण क्रोध उत्पन्न हुआ हो, उस प्रसंग को याद मत करो।

(३) उस स्थान से चले जाओ।

(४) श्री नवकार मंत्र का स्मरण करो।

(५) अपने पापोदय का विचार करो।

(६) जिसके प्रति क्रोध जगा हो, क्षणभर उसके विशुद्ध आत्म-रूप को ध्यान मे लाओ।

(७) क्रोध करने से स्व-पर आत्मा में अशांति बढ़ती है उसका विचार करो।

इस प्रकार बलपूर्वक भी यदि तुम क्रोध पर नियन्त्रण करोगे तो बाद में तुम्हारे हृदय में क्रोध पैदा भी नहीं होगा। क्रोध को दबाने का साधन क्षमा है।

प्रतिज्ञा का पुण्य प्रभाव

❀ लेखक मुनि रत्नसेन विजय
दानसूरि ज्ञान मंदिर-अहमदाबाद

वर्षा ऋतु का प्रारम्भ हो चुका था, मेघ घनघोर गर्जना करते हुए बरस रहा था। मार्ग कीचड़-ग्रस्त बन चुका था, चारों ओर हरियाली फैल चुकी थी मानो धरती मां ने हरी चादर ओढ ली हो। अनेकविध रंग-बिरंगे फूल खिल खिलाकर हंस रहे थे। प्रातःकाल व्यतीत हो चुका था, परन्तु अभी तक सूर्य नारायण के दर्शन नहीं हो पा रहे थे। काली श्याम बादलियों ने आज सूर्य से संघर्ष मेला था। और आज के इस संघर्ष में वे विजेता सी प्रतीत हो रही थीं। उनके विजयोत्सव के आनन्द को धूमिल न करने के इरादे से प्रचंड सूर्य ने भी कुछ समय के लिए मौन धारण कर लिया था।

इसी बीच एक मुनि-वृन्द उस वन मार्ग में प्रसार हो रहा था, मुनियों की यह कतार अत्यन्त ही यतनापूर्वक आगे बढ़ रही थी परन्तु वे अब आगे जाने में असमर्थ थे, क्योंकि वर्षा के कारण चारों ओर का वातावरण जीव-जन्तुमय बन चुका था, छोटे-छोटे जन्तुओं की तो बाढ़ सी आ गयी थी, जीव-रक्षा के वेश को धारण किए होने से अब उनके लिए आगे कदम बढ़ाना अशक्य था। उन्हें १०० मील की दूरी पर रहे गांव में चातुर्मास के लिए जाना था, व इसी संकल्प पर निकले थे कि समय पर पहुंच जाएंगे। परन्तु कई बार प्रकृति के आगे मानवीय संकल्प को घुटने टेकने ही पड़ते हैं। आषाढ़ मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी दीन चुकी थी, अब उन्हें अपने निर्धारित क्षेत्र में पहुंचना कठिन प्रतीत हो रहा था।

इसी समय एक मुनि की नजर पहाड़ की तलहटी की ओर पहुंची, और उन्हें वहां भवनों की पंक्तियां नजर आने लगी।

गुरुजी! अब उस गांव तक पहुंचना तो कठिन है तो क्यों न उन भवन पंक्तियों की ओर आगे बढ़ें, शायद वहां बस्ती भी हो सकती है और।

गुरुदेव ने उस मुनि की बात में अपनी सहमति प्रगट की और अपने शिष्यों से बोले चलें, अपन उन भवन पंक्तियों की तरफ चलें।

आचार्य धर्मघोष सूरि म. अपने शिष्य वृन्द के साथ उन भवन-पंक्तियों की ओर आगे बढ़ने लगे। भवन-पंक्तियों के निकट पहुंचते ही उन्हें एक तेजस्वी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति से भेंट हो गई। उसकी हृष्ट-पुष्ट काया थी उसकी भुजाओं में बल था और मुख पर तेजस्विता था।

आचार्य श्री ने देखा कि वह युवान उन्हीं की ओर आ रहा है।

आगंतुक युवान थोड़ी ही देर में आचार्य श्री के निकट पहुंच गया, उसने कहा—महात्मन्! इस वर्षा ऋतु में आप इस जंगल में कहां से? चातुर्मास के लिए कहां पहुंचना है? क्या आप मार्ग तो नहीं भूल गए हैं?

युवान की इस बात को सुनकर आचार्य श्री को लगा कि हो न हो यह युवान जैन साध्वाचार

से परिचित होना चाहिये, अन्यथा इस प्रकार की बात वह कैसे करे ?

गुरुदेव ने कहा—बंधु ! हमारा लक्ष्य तो अमुक गांव तक पहुँचने का था, परन्तु बीच मार्ग में हम रास्ता भूल गए, वर्षा भी हो गई, वर्षा के कारण जो पगडंडियां थी, वे भी साफ हो गईं । अतः अब उस गांव तक तो पहुँचना कठिन है, क्या यही आसपास में चातुर्मास रहने के लिए कोई सुयोग्य स्थान नही मिल सकेगा ? जहाँ रहकर हम चातुर्मास काल तप-जप की आराधना मे व्यतीत कर सकें ।

आचार्य श्री के मुख कमल में से निकली हुई इस गंभीर और स्नेहार्द वाणी ने उस युवान के पत्थर हृदय को भी पिघला दिया और उस युवान ने कहा—महात्मन् ! ये जो आपके सामने भवन-पंक्तियाँ दिखाई दे रही है, यह चोरों की पल्ली है, चोरी और लूट यह सब इनका धंधा है और मैं भी उन्हीं में से एक हूं ।

महात्मन् ! आप रहने के लिए वसती की मांग कर रहे हैं, मैं देने के लिए तैयार हूं, किन्तु एक शर्त है ।

भाई ! वह कौन सी शर्त है तुम्हारी ? महात्मन् ! हम तो रहे लुटेरे और आप रहे महात्मा हमारी और आपकी दिशा भिन्न-भिन्न है । हमारा काम लूटने का और आपका काम धर्मोपदेश देने का । आप हमारा संग करें तो आपको नुकसान और हम आपका संग करें तो रोटी की चिंता ? फिर भी आप वसती मांग रहे हैं तो मैं वसती देने के लिए तैयार हूं, परन्तु शर्त यह है कि आप यहां रहते हुए—मेरी सीमा में मुझे या मेरे साथी को धर्म का उपदेश न दें ।

महात्मन् ! मैं जानता हूं कि आपका मार्ग अच्छा है, परन्तु लूट और चोरी यह तो हमारा [illegible] का धंधा है और इसका त्याग करना हमारे लिए असंभव है ।

आचार्य श्री ने उस युवान की शर्त स्वीकार कर ली 'उन्होंने सोचा' धर्म तो जिज्ञासु को देने की वस्तु है, बलात्कार से किसी पर थोपने की वस्तु नही है, अतः यदि धर्म श्रवण की इनकी इच्छा न हो तो उन्हें नही सुनाना चाहिये, हमें तप-जप और ध्यान मे अपना समय व्यतीत करना चाहिये ।

पल्लिपति ने मुनि वृंद के रहने के लिए एक विशाल भवन सौंप दिया । मुनि वृंद ने वसती मे प्रवेश किया और सभी मुनि त्यागतप और स्वाध्याय मे जुट गए ।

स्वाध्याय यह तो मुनि-जीवन का प्राण है इससे रहित श्रमण जीवन तो प्राण रहित कलेवर की भांति ही है ।

स्वाध्याय और ध्यान मे लयलीन मुनियों को समय का पता ही नही चल रहा था, दिन पर दिन व्यतीत होते जा रहे थे ।

सभी मुनि आत्म कल्याण के मार्ग में उत्साही थे, तो ये चोर चोरी और लूट के मार्ग मे उत्साही और जागरुक थे ।

देखते देखते जल-प्रवाह की भांति चातुर्मास काल समाप्त हो गया ।

कार्तिकी पूर्णिमा का दिन आ गया और आचार्य श्री प्रस्थान की तैयारी करने लगे ।

मुनियों के मौन में भी उपदेश की धारा बह रही थी । ग्रीष्म ऋतु मे नदी तट से प्रसार होने पर शीतलता का अनुभव होता है तो क्या साधुता के तट पर रहे डाकुओं के हृदय मे शीतलता का स्पर्श न हो ?

साधु की साधुता तो वचन में भी शीतल है, उसके सान्निध्य में रही आत्मा को प्राण दान न हो, यह कैसे संभव है ?

विदाई की घड़ी निकट आ रही थी । पल्लि-पति सरदार सोचने लगा—'अहो ! ये मुनि चार

चार मास तक मेरी पल्ली मे रहे। कितने शात और गभीर हैं ? इन्होने मेरी शर्त का पूर्ण पालन किया है।'

सभी मुनि विहार यात्रा के लिए तैयार हो चुके थे, शुभ-मुहूर्त मे विहार-यात्रा प्रारम्भ हो गई। पल्लिपति भी आचार्य श्री को छोडने के लिए कुछ समय के लिए साथ हो गया।

पल्लिपति आचार्य श्री के साथ साथ ही आगे कदम बढा रहा था।

पल्लिपति के बाह्य व्यक्तित्व और अतरग गुण समृद्धि के दर्शन करते हुए आचार्य श्री ने मधुर स्वर से कहा—बधु ! तुम्हारा परिचय ? भले ही वर्तमान मे तुम चोरी और लूट का धधा कर रहे हो, परन्तु तुम्हारी आकृति और प्रकृति से तो तुम किसी उत्तम कुल-वश के प्रतीत हो रहे हो।

आचार्य श्री की मधुर वाणी से पल्लिपति का कठोर हृदय भी पिघल चुका था। उसने सोचा 'इन सतो से छुपाने जैसी क्या चीज है ? इनके आगे अपने जीवन की किताब को खुल्ली करने मे कोई एतराज नही है।'

पल्लिपति ने अपना परिचय देते हुए कहा—प्रभु ! मेरा जन्म त्रिपुरी के महाराजा विमलयश के वहा हुआ था मेरी माता का नाम सुमगला था, मेरा नाम पुष्पचूल और मेरी बहिन का नाम पुष्पचूला।

'अपने पिता का मै इकलौता पुत्र होने मे मेरे लाड प्यार मे कोई कमी न रही, मुझे हर प्रकार की स्वतत्रता थी। सभी लोग मेरा आदर करते थे। परन्तु जिस प्रकार एक श्रीमत दूध और घी को नही पचा सकता हैं, उसी प्रकार मै भी अपनी स्वतत्रता को नही पचा सका और वह स्वतत्रता स्वच्छदता के रूप मे बदल गई। मैं मन चाहे ढग से लोगो के साथ व्यवहार करने लगा। मुझे किसी के सुख-दुख की चिंता नही थी, परन्तु यदि कोई मेरे सुख मे बाधक बनता तो उसे मात के घाट भी उतार देता।'

मैं शराब और शिकार के व्यसनो का सगी बन गया, मुझे न आत्मा हित की चिंता थी और न ही प्रजा-हित 'दिन प्रतिदिन प्रजाजनो के साथ मेरा दुर्व्यवहार-अत्याचार बढता गया।'

अनेक बार प्रजाजनो ने महाराजा को फरियाद की कई बार तो महाराजा उन फरियादो को टाल देते थे, परन्तु जब बारबार फरियादें आने लगी तो कई बार महाराजा मुझे स्नेह भरी वाणी से हित-शिक्षा देते, परतु पत्थर-दिल मुझ हृदय पर उस वाणी का कोई प्रभाव नही पडता। जल सिंचन से पत्थर कोमल बनें तो सद्वाणी से मेरा हृदय पिघले।

एक बार तो मेरी घुड सवारी में एक निर्दोष बालक मारा गया, प्रजा मेरे इस आतक से अत्यन्त सतप्त हो उठी 'प्रजाजनो ने महाराजा से शिकायत की, आखिर थककर पिता ने कह दिया—चल' निकल जा मेरे राज्य से, मैं तेरा मुँह देखना नही चाहता हू !

पिता की ओर से इस आदेश को पाते ही मैं राजभवन से निकल पडा, भाई के स्नेह से मेरी बहिन पुष्पचूला भी मेरे साथ निकल पडी। हम भाई-बहिन के साथ प्रेम का अगाढ सबध था, वह सबध महल की भाति वन मे भी कायम रहा।

हम दोनो राजमहल से निकलकर आगे बढे और अत मे इस पल्ली के निकट आ गए। यहा के पल्लिपति ने मुझे आश्रय दिया और चोर-लुटेरो के सग से मैं भी बेजोड डाकू बन गया, चोरी करना, लूटना और मार डालना यह हमारा नित्य का व्यवसाय बन चुका है।

अपने भूतकाल की स्मृतियो को ताजी करते-करते उस पल्लिपति का हृदय भर आया। उसने कहा—प्रभु ! मैं पल्लिपति के सानिध्य मे रहा, उसके सानिध्य मे कुल 500 डाकू हैं, कुछ महीनो पूर्व पल्लिपति की मृत्यु हो गई और इन डाकुओ ने मिलकर मुझे अपना सरदार बना दिया है।

प्रभु ! आज मैं इन चोरों का सरदार हूँ, चारों ओर मेरे नाम की धाक है। प्रभु ! एक बात मैं भूल गया, मेरा नाम तो पुष्पचूल था, परन्तु मेरे आंतक से पूर्व प्रजाजनों ने मेरा नाम वंकचूल रख दिया था।

प्रभु ! आज जब मेरे वात्सल्य मूर्ति माता-पिता की याद आती है तो मेरा हृदय विषाद से भर जाता है, उस समय मैंने उनकी एक न सुनी, उनकी हर प्रेरणायें मुझे कर्ण-कटु लग रही थी परन्तु आज मुझे उनकी याद आती है तो मेरा हृदय भर आता है। वे हमारे वियोग से अत्यंत संतप्त बने और अन्त मे उनका सदा के लिए वियोग हो गया। प्रभु........! यह मेरी जीवन कहानी है।

आचार्य श्री ने स्नेह सभर वाणी से कहा—पुष्पचूल ! जीवन यह बहती हुई नदी है, कभी वह समतल भू भाग पर सरलता से बहती है तो कभी उसे उतार-चढाव के विकटतम प्रदेशों से भी गुजरना पड़ता है। मैं जानता हूं तेरा जीवन पंथ एक विकट मार्ग से गुजर रहा है, परन्तु फिर भी तू नियम/संयम की मर्यादा के द्वारा अपने जीवन को उत्थान के मार्ग मे आगे बढा सकता है।

पुष्पचूल ! आज मेरा हृदय पुकार रहा है कि मैं तुझे जीवन-पाथेय की कुछ भेंट धरूं।

प्रभो ! हिंसा-लूट-झूठ और चोरीमय इस जीवन में मैं क्या नियम ग्रहण कर सकता हूं ? और नियम ले भी लिया तो वह मेरी जीवन यात्रा में बाधक बन जाएगा।

पुष्पचूल ! मैं तुझे ऐसे चार नियम देना चाहता हूं जो न तेरी जीवन यात्रा में बाधक बनेंगे और न ही तेरे व्यवसाय में........ फिर भी वह तेरे जीवन का अनमोल पाथेय बन जाएगा।

प्रभो ! यदि ऐसे ही नियम हैं तो मैं उन्हें अवश्य स्वीकार करूंगा, कृपया वे नियम मुझे बताइए।

आचार्य श्री ने कहा—मेरी तो इच्छा है कि तू किसी की भी हिंसा मत कर, परन्तु यह तेरे लिए शक्य न हो तो किसी की हिंसा के पूर्व एक बार' सात कदम पीछे हट जाना, बोल कबूल है न।

हाँ ! महाराज ! इसमें तो मुझे कोई तकलीफ नही हैं, मुझे स्वीकार है।

2. मेरी इच्छा हैं कि तू सात्विक आहार ग्रहण कर, परन्तु यह शक्य न हो तो अज्ञात फल का त्याग कर दो।

गुरुदेव ! यह भी मुझे स्वीकार है।

3. मेरी इच्छा है कि तू पवित्र जीवन व्यतीत कर, परन्तु इतना शक्य न हो तो कम से कम राजा की रानी का त्याग करना।

पुष्पचूल ने सोचा—'राजा रानी के सम्बन्ध ? बिल्कुल असंभव बात है।' उसने कहा—प्रभो ! यह भी मुझे स्वीकार है।

चौथा नियम कौनसा है ? गुरुदेव ! अत्यन्त उत्सुकता से पुष्पचूल ने पूछा।

पुष्पचूल ! मेरी इच्छा हैं कि तुम सर्वथा मांसाहार का त्याग करो, परन्तु यदि यह शक्य न हो तो कम से कम कौए के मांस का त्याग कर दो।

गुरुदेव ! यह भी मुझे स्वीकार है। पुष्पचूल/वंकचूल ने कहा

गुरुदेव ने वंकचूल को ये चार नियम प्रदान किए और उन्होंने वहां से अपनी विहार-यात्रा प्रारम्भ कर दी।

जब तक आचार्य श्री की पीठ दिखाई दी, तब तक वंकचूल उन्हें देखता ही रहा, सोचने लगा 'कितना निर्मल और पवित्र जीवन है ? और साथ मे हमारा जीवन ! धन्य है उन महात्माओं के जीवन को।'

पूर्णिमा का चाँद गगन-मण्डल मे प्रकाश फैला रहा था। वकचूल अपने मित्रजनो के साथ किसी दूर प्रदेश मे चोरी-लूट के लिए गया हुआ था। अपार धन-सपत्ति को लूट कर वह अपने भवन की ओर लौट रहा था। उसके हृदय मे सम्पत्ति प्राप्ति का आनन्द उछल रहा था। चादनी रात थी, अत उसे अपने घर तक पहु चने मे कोई तकलीफ नही पड़ी।

वह अपने द्वार के निकट आया। दरवाजा वद था, कमरे मे चारो ओर दीपक का प्रकाश था, पुष्पचूल ने छिद्र मे से अन्दर नजर डाली और उसके अग अग मे आग फैल गई। अहो! यह कौन दुष्ट मेरी पत्नी के पलग पर सोया हुआ है? अहो। क्या मेरी पत्नी भी अन्य के प्रेम की पिपासु वनी है? धिक्कार हो उसे। उसने दरवाजा खाल दिया।

वकचूल आग ववुला हो उठा, उसने म्यान मे से तलवार निकाल दी और शय्या पर सोए हुए दोनो की हत्या की तयारी कर दी परन्तु तत्काल उसे अपनी प्रतिज्ञा की याद आ गई और वह अपने स्थान से 7 कदम पीछे हट गया, वार के लिए उसने तलवार ऊँची की और वह तलवार दिवाल पर टगें हुए वर्तन से टकरा दी। वरतन की आवाज के साथ ही शय्या मे से पुरुष वेपधारी पुष्पचूला एकदम जाग गई और वोली—अरे। यह क्या? क्या कर रहे हो, वडे भैया। अरे कौन? पुष्पचूला? तू इस पुरुष-वेप मे कैसे? आखिर क्या मामला है? अभी तो मैं तुम दोनो के सिर को धड से अलग कर देता, उपकार है उस महात्मा का, जिनके नियम पालन से तुम दोनो के प्राण वच सके।

पुष्पचूल की पत्नी वसतसेना भी निद्रा का त्याग कर शय्या मे बैठी हो गई थी।

पष्पचूल ने पूछा—वहिन! आज तुन पुरुष वेप पहनकर यह क्या नाटक कर डाला?

पुष्पचूला ने कहा—भैया! गत सध्या जब आप लूट के लिए निकल पडे, तव हमने नाट्य मण्डली के आगमन के समाचार सुने उस नाट्य मण्डली का आज एक भव्य कार्यक्रम था, उसको देखने के लोभ को मैं रोक न सकी, परन्तु रात्रि के समय हम दोनो को घर से निकलने मे समस्या थी, चूकि हम दोनो स्त्रिया थी मार्ग मे किसी प्रकार की तकलीफ न पडे, इसलिए मैंने आपका वेप धारण कर लिया। मध्य रात्रि तक उस नाट्य मण्डली का कार्यक्रम चला, मध्य रात्रि मे घर लौटते समय हम अत्यत थक चुकी थी, आखों मे नीद थी और पैरो मे थकावट। अत घर आने के वाद मैं अपने वस्त्र उतारना भूल गई और भाभी के पास ही सो गई।

पुरुष वेप धारण के रहस्य को जानकर पुष्पचूल की सभी शकाए दूर हो चुकी थी। उसने कहा—वहिन! तुम्हारे पुरुष वेप को देखकर मेरे दिल मे अनेक प्रकार की गलत कल्पनाएँ आ चुकी थी और मैं तो तुम दोनो के वध के लिए तैयार हो चुका था, परन्तु याद है न तुम्हे?

उन महात्मा ने मुझे एक नियम दिया था 'किसी को मारने के पूर्व सात कदम पीछे हटने का' वस, उसी नियम ने आज मुझे वचा दिया, अन्यथा आज हाथो से एक भयकर दुष्कृत्य हो जाता।

वकचूल के हृदय मे गुरुदेव के प्रति श्रद्धा का दीप प्रज्वलित हो उठा।

इस वात को व्यतीत हुए एक महिना वीत चुका था और वकचूल अपने साथियो के साथ किसी दूर क्षेत्र मे रहे नगर को लूटने के लिए निकल पडा। वकचूल ने अपने २५ मित्रो के साथ उस नगर पर डाका डाला, नगरवासी किसी महोत्सव के प्रसगवश अन्यत्र गए हुए थे, वकचूल ने अपने साथियो के साथ उस नगर को लूटा—

अपार धन सम्पत्ति की गठडियां बांधकर वंकचूल अपने मित्रों के साथ अपनी पल्ली की ओर चल पड़ा, परन्तु बीच में वह मार्ग भूल गया और वह एक जंगल में आ पहुंचा।

रात्रि का अंतिम प्रहर चल रहा था, वंकचूल तथा उसके साथियों को कडकडाहट की भूख लगी हुई थी। वंकचूल ने अपने मित्रों को आदेश दिया— 'आसपास के वृक्षों पर से फल ले आओ!'

वंकचूल के साथी फल लेने के लिए निकल पड़े। उन्हें अधिक दूरी तक नही जाना पड़ा क्योंकि आसपास में ही अनेक वृक्ष फलों से लदे हुए थे।

वंकचूल के साथी थोड़ी ही क्षणों में ढेर सारे फल लेकर आ गए।

वंधु! बड़े मीठे और सुगन्धी फल लगते हैं।'

इनका नाम?

नाम तो हमें पता नही है।

'तो फिर मैं इन फलों को नही खाऊंगा।'

वंधु! नाम से क्या मतलब है? बस, पेट भरना चाहिये। कितनी खुशबुदार सुगंध आ रही है?

वंकचूल ने कहा—साथियों! अज्ञात फल नही खाने की मेरी प्रतिज्ञा है" मैं तो इन फलों को नहीं खाऊंगा।

मित्रों ने कहा—हमारा तो मन ललचा रहा है, इन फलों को खाने के लिए।

.........परन्तु मैं तो नहीं खाऊंगा।' वंकचूल ने कहा।

"हम तो खाते हैं बड़ी भूख लगी है। इतना कहकर वंकचूल के सभी साथियों ने बड़े चाव से वे फल खाए और उस वृक्ष की छाया में सो गए।

वंकचूल भी थक चुका था, अतः उसने भी अपना देह लम्बा किया और वह भी निद्रा देवी की गोद में सो गया।

एक प्रहर की शांत निद्रा के बाद वंकचूल जाग उठा, उसने देखा पूर्व में अरुणोदय की लालिमा फैल चूकी है।

उसने अपने साथियों को पल्ली की ओर चलने के लिए आवाज दी, किन्तु उनमें से कोई नही उठा, सभी साथी चिर निद्रा में सो चूके थे, अब उन्हे जगाना किसी के वश की बात नहीं थी।

वंकचूल ने जब अपने सभी २४ साथियों के मृत देह को देखा तो उसका हृदय हर्ष और शोक के मिश्र भावों से भर आया शोक इस बात का था कि उसके सब साथी अकाल ही मृत्यु को वर चूके थे और हर्ष इस बात का था कि गुरुदेव के नियम ने उसके प्राण बचा दिए थे।

अंत में पल्लिपत वंकचूल अपनी पल्लि की ओर चल पड़ा, उसने सोचा 'मेरे मित्रों ने जो फल खाए हैं, वे विषैली होने चाहिये, इसी कारण उनकी मृत्यु हुई है,............गुरुदेव ने मुझे यह नियम प्रदान कर मेरे प्राणों का रक्षण किया है। धन्य हो उन गुरुदेव को!

वंकचूल अपनी पल्लि में पहुंचा, उसने अपने अन्य साथियों को मित्रों की मृत्यु की घटना कह सुनाई, सभी को बडा खेद हुआ।

धीरे २ समय बीतने लगा।

एक दिन वंकचूल के हृदय में महारानी के कीमति 'नवलखाहार' को चोरने की इच्छा पैदा हो गई। बड़ी हिम्मत करके वह अपनी पल्लि से निकल पड़ा और अपने विविध साधनों के बल से राजमहल के एक खंड में पहुंच गया।

उस खंड में महारानी आराम कर रही थी, चारों ओर प्रशान्त वातावरण था, चंद्रमा की धवल किरणें महारानी के रूप-सौंदर्य में अभिवृद्धि कर रहे थे।

वंकचूल की पदचाप ध्वनि से महारानी झट से जाग गई और उसने चांदनी रात के प्रकाश में

वकचूल के तेजस्वी रूप का देखा " देखने के साथ बिजली की भाति उसके अ ग अ ग मे काम का ज्वर फैल गया ।

महारानी ने पूछा—तू कौन हैं ?

चोर के वेष को देखकर महारानी समझ गई की यह चोरी करने आया है, परन्तु वकचूल के अद्भुत रूप पर मोहित बनी महारानी वकचूल का सग चाहती ह, उसने वकचूल से काम की प्राथना की ।

इसी वक्त वकचूल को अपनी प्रतिना याद आ गई । ओहो । यह तो महारानी है अपने आप पर नियन्त्रण लात क्षण मे वह बोला—

महारानी ! आप तो राज-माता हो ! आपके साथ यह दुर्व्यवहार उचित नही ह ।

अरे युवान तुझे पता है, तूँ कहा खडा है ? यदि मेरी बात का स्वीकार नही करेगा तो तेरे लिए मौत की आपत्ति खडी हो सकती है, अ ग रक्षका के भालो से तेरा देह विध लिया जाएगा ।

नारी का हृदय सौम्य होता है, किंतु जब वह भडक उठती हैं तो प्रचड आग से अधिक भयकर हो जाती है ।

वकचूल को अपनी प्रतिना याद थी वह अपने दृढ सकल्प के प्रति स्थिर था वह लेश भी चलित नही हुआ ।

तभी महारानी ने अपने ही हाथो से अपन ही नाखुनों से अपने देह पर विविध घाव करत हुए जोर से आवाज दी बचाओ ! बचाओ ! यह दुष्ट मेरा शील लूटने आया है ।

महारानी की चिल्लाहट की आवाज के साथ ही आसपास के सैनिक दौड आए और तत्काल वकचूल का कद कर लिया ।

महारानी मन ही मन खुश थी कि मेरी इच्छा का स्वीकार न करन मे अब उसकी कैसी दुदशा होगी ?

मनुष्य अपनी मन कल्पनाओ के अनुसार कुछ और ही सोचता है और प्रकृति को कुछ और ही स्वीकार होता है ।

महाराजा पास के खड मे ही सोए हुए थे उन्होने वकचूल और महारानी के पारस्परिक वार्तालाप का सुन लिया था ।

सैनिको ने वकचूल का कारावास मे बद कर दिया था ।

प्रात काल की मधुर वेला के प्रशात वाता-वरण मे सैनिका न वकचूल का महाराजा के समक्ष उपस्थित किया ।

महाराजा ने उससे महारानी पर बलात्कार के सदभ मे विविध प्रश्न किए ।

परतु वकचूल मान था ।

उसका निर्दोष हृदय पुकार रहा था यदि मैंन महारानी का नाम दिया तो महाराजा महा-रानी पर रूष्ट हो जाएगे और उस शायद राज्य मे निकाल भी दे।' अत वकचूल ने एक मात्र मौन का ही आश्रय लिया ।

महाराजा ने उसके मौन मे "" उसके आभ्यतर व्यक्तित्व के दशन किए और तत्काल महाराजा ने उसे सेनापति के पद पर नियुक्त कर दिया । वकचूल के पवित्र जीवन की उन्होन कद्र की और सोचा 'जो व्यक्ति अपन आप पर नियन्त्रण रख सकता है वही व्यक्ति प्रजा का हित कर सकता है ।

वकचूल को इस बात की कोई कल्पना भी नही थी कि आज उसे इस प्रकार सेनापति के पद पर नियुक्त कर दिया जाएगा ।

महाराजा ने महारानी को सजा दी ।

वकचूल का हृदय पुन पुन गुरु चरणो मे झुक पडा—धन्य हो गुरुदेव को जिन्होन इन प्रतिज्ञाओ के बहान मेरी आत्मा के उत्थान की हित चिता की ।

'नगर का भक्षक ही रक्षक बन गया', जानकर प्रजा भी भयमुक्त बन गई।

जिस निष्ठूरता से वंकचूल पहले चोरी और लूट करता था, आज उसका हृदय प्रजा के रक्षण की जिम्मेदारियों से जुड़ गया वह स्वयं चोर/डाकू था, चोरों को पकड़ने में उसे अत्यंत सरलता थी।

धीरे २ नगर में चोर/डाकुओं का आतंक समाप्त होने लगा और वंकचूल के नेतृत्व में प्रजा संपूर्ण भयमुक्त जीवन व्यतीत करने लगी।

वंकचूल की जीवन नैय्या आगे बढ़ती जा रही थी।

एक बार महाराजा को समाचार मिले—राज्य के सीमावर्ती इलाके में पड़ौसी राजा हस्तक्षेप कर रहा है और वह किसी न किसी तौर तरिकों से वहाँ की प्रजा को परेशान कर रहा है।

महाराजा ने तत्तकाल वंकचूल को बुलाया। और पड़ौसी राजा की शान ठिकाने लाने की आज्ञा कर दी।

वंकचूल एक छोटे सैन्य दल के साथ शत्रुओं से निपटने के लिए निकल पड़ा।

आतंकवादियों पर उसने हमला किया, दोनों ओर से पारस्परिक युद्ध चला। अंत में इस युद्ध में वंकचूल विजेता बना, परन्तु उसके जर्जरित देह पर भी कुछ घाव पड़ गए।

वंकचूल विजेता बनकर अपने नगर में लौट आया।

परन्तु शरीर पर पड़े घावों के कारण दिन प्रतिदिन उसका स्वास्थ्य गिरने लगा, अनेकविध उपचारों के बावजूद भी वह पूर्ण स्वस्थता को पुनः प्राप्त न कर सका।

आयुर्वेदिक के एक निष्णात वैद्य का आगमन हुआ, उसने वंकचूल के देह का निरीक्षण किया और दवा से एक उपाय बताते हुए कहा—'कौए के मांस के साथ यदि यह औषधि दी जाय तो वंकचूल के देह के घाव भर सकते हैं और वे पूर्ण स्वस्थता प्राप्त कर सकते हैं।

जब यह बात वंकचूल ने सुनी तो उसकी भूजाओं में बल आ गया, वह बैठा हो गया और वैदराज से बोला—वैद जी। यह देह रहे या न रहे, इसकी मुझे परवाह नही है, किंतु मेरी प्रतिज्ञा का भंग नही होगा, मैं कौए का माँस नहीं लूंगा।

सेनापतिजी! जीवन-मरण का प्रश्न है, ऐसी परिस्थिति में नियम में कुछ शिथिलता भी······ वैदजी आगे कुछ बोल न सके।

वैदजी! जिस वस्तु को ग्रहण करने में मेरे वीरत्व का अपमान है, प्रतिज्ञा तो मेरा प्राण है, उसका कभी भंग नही हो सकेगा।

वैदजी आगे कुछ भी बोल न सके। महाराजा मंत्री तथा नगर के विशिष्ट जन सेनापति की मृत्यु-शय्या के इर्द गिर्द खड़े थे। सेनापति के अंगों में पीड़ा थी, किंतु उसके मुख पर प्रसन्नता थी, उसे इस बात का आनंद था कि मैंने जीवन में गुरुदेव से ग्रहण की प्रतिज्ञा का पूर्ण रूप से पालन किया है, यही मेरे लिए परलोक का पाथेय हैं, जिसे लेकर मुझे यहां से विदाई होना है।

और थोड़ी ही देर में मृत्यु-शय्या पर सोया हुआ पंछी उड़ गया और उसका पिंजरा यहीं पड़ा रहा गया।

वंकचूल का जीवन-दीप बुझ गया। नहीं। नहीं! कौन कहता है, उसका जीवनदीप बुझ गया वह तो और अधिक प्रज्वलित बना है। वंकचूल की आत्मा पर से विदाई ली और वह बारहवें देवलोक में पुष्पशय्या पर से देव के रूप में उठ खड़ा हुआ।

यह है प्रतिज्ञा की दृढ़ता का साक्षात् प्रभाव।

राजस्थान का एक प्राचीनतम ऐतिहासिक तीर्थ–

卐 श्री हथूंडी राता महावीरस्वामी तीर्थ 卐

– ऐतिहासिक परिचय –

लेखक मुनि अरुणविजय महाराज
(साहित्य रत्न, न्यायदर्शनाचार्य)

प्राचीनता का प्रमाण

"प्राचीन जैन लेख सग्रह" पुस्तक के द्वितीय भाग मे पृष्ठ १७५ से १८५ तक हस्तिकुण्डी (हथूण्डी) तीर्थ का वर्णन करते हुए इसके मन्दिर व शिलालेख को राजस्थान के ५५६ जैन मंदिरो के शिलालेखो मे सबसे प्राचीन माना है। ये इतिहासवेत्ता मुनिश्री जिनविजयजी के शब्द हैं। शिलालेख सख्या ३१८, ३१६, ३२०, ३२२, ३२३, इन सख्या के शिलालेखो मे से ३१८, व ३१६ "एपिग्राफिका इडिया" के १० वें भाग मे पृष्ठ सख्या १६ व २० पर मकनित है। शिलालेख सख्या ७५८ अजमेर सग्रहालय मे मौजूद है। अवशिष्ट शिलालेखो का सग्रह राजस्थान के अजमेर सग्रहालय मे सग्रहित है एव कई ग्रन्थो मे प्रकाशित भी हो चुके हैं।

इतिहासवेत्ता मुनिश्री ज्ञानसुदरजी महाराज ने अपनी लिखी हुई पुस्तक 'पार्श्वनाथ भगवान की परम्परा का इतिहास" (पूर्वार्द्ध) मे पृष्ठ ८०६ पर 'हटोडी' (हथुण्डी) नामोल्लेख करते हुए इस तीर्थ की उत्पत्ति का आदि काल निर्देश करते हुए लिखा है कि—भगवान पार्श्वनाथ की परम्परा मे हुए ३० वीं पाट परम्परा पर आए हुए महान आचार्य श्री सिद्धसूरीश्वरजी महाराज के सदुपदेश मे यह तीर्थ निर्माण हुआ है। जैसे आज भगवान महावीर की पाटपरम्परा श्रमणसस्था चल रही है एव इस परम्परा को ढाई हजार वर्ष बीत गए हैं। परन्तु २३ वें तीर्थकर पार्श्वनाथ और २४ वें श्री महावीरस्वामी भगवान के बीच तो सिर्फ २५० वर्ष का ही अतर रहा है। पार्श्वनाथ भगवान के भी १० गणधर हुए हैं। उनकी भी शिष्य परपरा काफी दीर्घ-काल तक चली है। कल्पसूत्र मे पार्श्वापत्य केशीस्वामी और भगवान महावीरस्वामी के आद्य गणधर गौतमस्वामी परस्पर मिले हैं। सवाद हुआ है। जो उत्तराध्ययन आगम मे सुप्रसिद्ध है। इस तरह कल्पसूत्र मे दो चार स्थान पर पार्श्वनाथ के साधुओ का जिक्र किया गया है। अत पार्श्वनाथ की शिष्य-प्रशिष्यादि पाट परपरा भी सुदीर्घ काल तक चली है। इसकी कई शाखाए भी निकली है, जो आगे चलकर भगवान महावीर की परपरा मे सम्मिलित हो गई। उपकेशगच्छ की शाखा भी चली थी।

भगवान पार्श्वनाथ की परपरा मे ३० वें पाट पर आए हुए समय गोत्रीय आचार्य श्री सिद्धसूरीश्वरजी महाराज (पचम) जिनका जीवन काल वि० स० ३६० या (वि० ३८०) मे ४२० वि स तक का है। उनके सदुपदेश से श्रेष्ठी गोत्र के वीरदव श्रावक ने भगवान महावीरस्वामी का

तीर्थ निर्माण किया था। अतः यह चौथी शताब्दी का प्राचीन तीर्थ है। आज से १६८२ वर्ष प्राचीन यह तीर्थ है। जगप्रसिद्ध राणकपुर तीर्थ से भी १००० वर्ष पुराना है।

भौगोलिक स्थिति

भारत देश के राजस्थान प्रान्त के पाली जिले में गोडवाड प्रदेश मे यह तीर्थ स्थित है। राजस्थान राज्य की प्रसिद्ध अरावली पर्वत शृंखला की पश्चिमी उपत्यका में यह तीथ स्थित है। राजस्थान की वेस्टर्न रेल्वे (W. R.) लाइन जो अहमदाबाद-मेहसाना-आबूरोड-अजमेर होती हुई दिल्ली जाती है। W R. वेस्टर्न रेल्वे लाइन पर पाली जिले मे जवाई बांध तथा फालना रेल्वे स्टेशन आते है। जवाई बांध रेल्वे स्टेशन से यह तीर्थ 20 कि. मी. है। तथा फालना स्टेशन से वाली होकर २८ कि मी. पडता है। राणकपुर से ३२ कि.मी. पडता है। सिरोही-पाली स्टेट हाइवे नं० २७ (S H. No. 27) पर वाया वाली से बीजापुर होकर हथुण्डी तीर्थ आते है। बीजापुर से यह सिर्फ ३ कि.मी. ही है। मंदिर तक पक्की डामर सड़क है एवं बस की सुविधाएं उपलब्ध है। राजस्थान के पूर्वी-पश्चिमी भाग के मध्य में पड़ती अरावली पर्वतमाला में से निकलते रास्ते जो पूर्वी-पश्चिमी-मेवाड़-मारवाड़ प्रदेश को जोड़ते हुए आते है उसमें उदयपुर से बीजापुर की सड़क पर यह तीर्थ बीजापुर के ठीक पास है।

प्राकृतिक सौंदर्य—

अत्यन्त मनोहर नयनरम्य सौंदर्य है। प्रकृति ने इस तीर्थ को अपनी गोद में लेकर तीन तरफ सुंदर छटादार घटाटोप पहाड़ियों का श्रृंगार किया है। पास कल-कल सुरीला संगीत गाती हुई नदी बहती है। पर्वतमाला की समाप्ति के अंतिम किनारे पर यह तीर्थ पर्वतमाला के सौंदर्य से घिरा हुआ है। सुंदर हरियाली चारों तरफ छायी हुई है। [illegible] के बीच [illegible] शान्ति का अनुभव होता है। जन आबादी से दूर यह तीर्थ प्रदूषण और पर्यावरण से मुक्त है। शुद्ध प्राकृतिक ठंडी-गुलाबी हवा और मधुर शीतल जल आरोग्य के लिए लाभ दायक है। अत्यन्त सुंदर प्राकृतिक सौंदर्य एवं कोकिला का कर्णप्रिय संगीत मन मोह लेता है। तीर्थ परिसर के छायादार वृक्ष सभी ऋतु में दिल वहलाते हैं। प्रकृति प्रेमियों को प्रभु भक्ति एवं ध्यान साधना मे सहायक यह तीर्थ काफी कर्मक्षय कराने में सहायक है।

नाम का इतिहास—

"भगवान पार्श्वनाथ की परंपरा का इतिहास" (पूर्वार्द्ध) नामक पुस्तक मे इतिहासवेत्ता पूज्य ज्ञान मुन्दरजी महाराज ने पृष्ठ ८०६ पर हटोडी नाम लिखा है। चौथी शताब्दी में हटोडी नाम प्रचलित होगा। प्राकृत भाषा मे हथूण्डी-और हत्थीउण्डी दो नाम प्रचलित हुए। संस्कृत में हस्तितुण्डी या हस्तिकुण्डी नाम प्रचलित थे। प्राकृत भाषा में कु एवं तु दोनों का उ हो जाता है और हस्ति का हत्थी बना। अतः हस्तितुण्डी, या हस्तिकुण्डी का हत्थीउण्डी बना। शिलालेख में "हस्तिकुण्डिका" नाम का भी उल्लेख है। हस्ति शब्द संस्कृत में हाथी का वाचक है और तुण्ड अर्थात् मुंह हाथी का मुंह यह शब्दार्थ निकलता है। इस तीर्थ में विराजमान मूलनायक श्री महावीरस्वामी भगवान की प्रतिमा के नीचे लंछन (चिन्ह) जो नियमानुसार सिंह का ही होना चाहिए, और सर्वत्र सिंह का ही होता है। लेकिन यहां आश्चर्य इस बात का है कि अंकित लंछन में सिंह का मुख हाथी का है और शेष शरीर सिंह का है। शायद इसी कारण हस्तितुण्डी नगरी नाम पड़ा हो या तीर्थ का यह नाम प्रसिद्ध हुआ हो। दूसरा कारण यह भी है कि यहां हाथियों की भारी पलटन रहती थी। हाथियों से भरी हुई यह नगरी थी। हाथियों का प्रमाण सर्वाधिक था। राजा महाराजाओं की सेना की [illegible] मे हाथी रहते थे। सेना का यह हस्ति दल महाराजा

को ज्यादा उपयोगी एव प्रिय था यह भी कारण नगरी के नामकरण के इतिहास के साथ जुडा हुआ है। हस्तिसेना के बल पर ही यहाँ के राठोड दूर-दूर तक वार करते थे। आगे चलकर काल की करवटो मे नाम अपभ्र श होता गया और आज हस्तितुण्डी का अपभ्र श हथूण्डी रह गया है। वर्तमान मे यही प्रचलित है।

चमत्कारिक महाप्रभावी प्रतिमा

विक्रम की चौथी शताब्दी के ३६० की (या ३७०) साल की बात है। भगवान श्री पार्श्वनाथ की ३० वी पाट पर हुए पट्टधर एव प्रभावक आचार्य श्री सिद्धसूरीश्वरजी महाराज (पचम) परम गीतार्थ ज्ञानी थे। जो कि २९ वीं पाट के पट्टप्रभावक आचार्य देवगुप्तसूरीश्वरजी महाराज (पचम) के शिष्य थे। सिद्धसूरी महाराज के सदुपदेश से प्रभावित होकर श्रेष्ठिगोत्र के वीरदेव श्रावक ने २४ वें तीर्थकर श्री महावीरस्वामी भगवान की ५१" इच=१३५ सेंटीमीटर प्रमाण की विशाल-तम प्रतिमा भराकर पूज्य आचार्यदेव के शुभहस्ते प्रतिष्ठा करवाई थी। कहा जाता है यह प्रतिमा-मूर्ति सगमरमर की नही है। रेती-वालु की है। इस पहाडी प्रदेश की भील गरासीया आदि सभी जातिया लाल रग का (राता) हिंगलू चढाती थी। और राता बाबा— के नाम से सभी जातियाँ पूजती थीं। "राती वीर पुरि मननी आस" यह उनकी प्रसिद्ध मान्यता थी। कालान्तर में रक्तवर्णी (राता) वज्रलेप होता रहा जिससे राता महावीर स्वामी नाम प्रचलित एव प्रसिद्ध हो गया। यह राता वर्ण भारतवर्ष मे इसी प्रतिमा के साथ विशेष विशेषता रखता है। अत हथूण्डी राता महावीर स्वामी तीर्थ के नाम से तीर्थ का नाम प्रचलित एव प्रसिद्ध हो गया है। वास्तव में यह एक अद्भुत अलौकिक प्रतिमा है। प्रशान्त रस की शान्त प्रतिमा जाप—ध्यान की साधना के लिए अत्यन्त उपयोगी हैं। कई साधक साधना के लिए आते हैं। मन्दिर के भोयरे मे पाटलवर्णी लाल रक्तवर्णी, ५१" की दूसरी सुन्दर भव्य प्रतिमा विराजमान है।

શ્રી ગોડવાડ (રાજ)મા વિ સં ૩૭૦ના પ્રાચીન

હથુંડી તીર્થમંડન શ્રી રાતા મહાવીરસ્વામી

तीर्थ का एकमेव भव्य मन्दिर

इस हथूण्डी मे एक मात्र महावीरस्वामी का ही मन्दिर अवशिष्ट बचा है। वीरदेव श्रावक ने २४ देवकुलिका युक्त गगनचुम्बी भव्य जिन प्रासाद बनवाया था। १२ देवकुलिका सन्मुख भाग मे है तथा ६ बाई ओर और ६ दाई ओर हैं। बीच मे मूल-नायकजी का भव्य मन्दिर है। चारो तरफ विशाल पटागण है। यह सारा मन्दिर वर्तमान मे (आरस) सगमरमर का बना हुआ है। मध्य केन्द्र मे एक ही गभारा (गर्भगृह) है। जिसमे मूलनायक श्रीराता महावीरस्वामी की ही एक मात्र प्रतिमा विराज-मान है। बाहरी रगमण्डप मे कायोत्सर्ग ध्यानस्थ प्रतिमाजी एव अन्य प्रतिमाजी है। सूरिमन्त्र आदि की सुन्दर रगीन कलाकृति मनोहर है। भोयरा भूमिगृह ध्यान-साधना के लिए एकात शान्ति के

श्री हथूण्डी तीर्थ के मन्दिर का एक सुन्दर दृश्य।

वातावरण के अनुरूप सुन्दर बना हुआ है। बाहरी भाग में भी दूसरा विशाल रंगमण्डप है। जिसे खेरा मण्डप कहते हैं। आगे प्रवेश द्वार अपना वैशिष्टय रखता है। चारों तरफ सुन्दर प्रदक्षिणा के लिए पर्याप्त जगह है। २४ जिनालय का यह मन्दिर अभी भी जीर्णोद्धार कार्य के अन्तर्गत है। २४ देव कुलिकाएं रिक्त पड़ी हुई हैं। जिसकी तजवीज ट्रस्टीगण कर रहे हैं। मन्दिर के चारों तरफ विशाल जगह है। प्राप्त इतिहास के अनुसार चौथी शताब्दी के विक्रमी संवत् ३६० की साल का (वीर संवत् ८३०) यह वीरदेव श्रावक का बनाया हुआ मंदिर पुनः पुनः जीर्णोद्धार होता हुआ आज हमारे सामने मौजूद है। विक्रम संवत् ९७३ में विदग्धराजा ने जीर्णोद्धार कराया एवं आचार्य बलिभद्रसूरी के करकमलों से पुनः प्रतिष्ठा करवाई थी। बाद में वि. सं. १०५३ में जीर्णोद्धार हुआ। तत्पश्चात् छोटी-मोटी मरम्मतें होती रहीं। अन्त में वि. सं. २००६ में पुनः जीर्णोद्धार हुआ और आचार्य श्री विजयवल्लभ सूरीश्वरजी महाराज के हाथों प्रतिष्ठा करवाई। वर्तमान में भी [illegible] से जीर्णोद्धार का कार्य चल रहा है। जो समीपस्थ बीजापुर गाव के सम्पन्न जैन श्रावकों की बनी समिति काय कर रही है। इस तीर्थ का वर्तमान स्वरूप उजागर करने एवं प्रकाश मे लाने के भगीरथ कार्य का श्रेय यदि किसी को जाता है तो वह बीजापुर निवासी स्वर्गीय चन्दूलाल खुशालचन्द झवेरी के सुपुत्र स्वर्गीय शा झवेरचंदजी चंदूलालजी कामदार को जाता है। साथ ही साथ हमराजजी नथूजी के सुपुत्र स्व. हजारीमलजी को जाता है। उन्होंने अपना जीवन इस तीर्थ की सेवा मे समर्पित किया था। यहां विजय वल्लभसूरी महाराज का गुरु मंदिर है। भव्य तीर्थों के रंगीन पट है।

हस्तिकुण्डी की राजवंशावली

हस्तिकुण्डी न केवल तीर्थ ही, अपितु प्राचीन ऐतिहासिक युग से यह एक विशाल नगरी रही हुई है। यह राजस्थान के राष्ट्रकूटों (राठोडों) की मूल राजधानी रही है। यहां के राष्ट्रकूट राजवंशीय राठौड़ और हथुंडिया राठौड़ के नाम से प्रसिद्ध थे। पूर्वकाल में इनकी [illegible] और राठौड़ [illegible]

के लोग चारो तरफ फैल गए। आसपास वाली—सेवाडी मे आगे कई गावो मे और आज तो भारत मे चारो तरफ फैल गए। जो आज भी अपनी रातडीया राठोड या हथू डिया राठोड के नाम से पहचान बडे शौर से देते हैं। प्राचीनकाल मे मालव गणराज्य की यह प्रसिद्ध नगरी थी। तत्पश्चात् मारवाड मे आई। और आज पाली जिले के गोडवाड प्रदेश मे गिनी जाती है। वि स ८१० से राष्ट्रकूटो का राज्य गोविंदराज तृतीय से हुआ। राष्ट्रकूट राजाओ ने पश्चिमी राजस्थान का दिग्विजय किया था। हस्तिकुण्डी के राष्ट्रकूट उन्ही के वशज हैं। आठवी सदी मे हरिवर्मा राठोड वशीय शूरवीर प्रतापी राजा यहा राज्य करते थे। इनके बाद इनके पुत्र विदग्धराज हस्तिकुण्डी की गद्दी पर आये। ये मेवाड के राजा अल्लट के मित्र थे। इन्होंने आचाय बलिभद्रसूरि से जैन धर्म अगीकार किया था। इन्होंने हस्तिकुण्डी का जीर्णोद्धार नौवीं शताब्दी में कराया था। अपने वजन प्रमाण तराजू मे सोना तोलकर मन्दिर के लिए भेंट करता था। ऐसे दानपत्र लिखे हैं। शिलालेखो से यह बात स्पष्ट होती है। विदग्धराज का समय वि स ९७३ का है।

विदग्धराज के पश्चात् उनका पुत्र मम्मटराज राजा हुआ। वह गद्दी पर बैठा। आचार्य वासुदेव सूरि से प्रभावित होकर उसने भी दानपत्र जारी किया एव वह भी मदिर को सोना भेंट करता था। इनके काल मे आचाय सवदेवसूरी हथूण्डी नगरी मे पधारे थे तब हथूण्डी के राव जगमाल ने सपरिवार जैन धम अगीकार किया था। मम्मटराज का यह काल वि स ९८८ का था। उसके पश्चात् हथूण्डी की गद्दी पर मम्मट का पुन धवलराज आया। यह बहुत बलवान वीर राजा था। गुजरात का मूलराज सोलकी भी इससे डरता था। धवलराज दीन—दु खियो का रखवाला अशरण का शरणदाता प्रतापी राजा था। ११ वी शताब्दी म इसन हथूण्डी की शान चारो तरफ फैलाई थी। वि स १०५३ मे पू आचार्य श्री शान्तिसूरि महाराज के सदुपदेश से हथूण्डी तीर्थ का पुन जीर्णोद्धार करवाया और पुन प्रतिष्ठा करवाई। अपने अतिमकाल मे धवलराज ने अपने पुत्र बालाप्रसाद को ही अपनी हथूण्डी की गद्दी दे दी थी।

वि स १०८० मे (ई० म १०२३) मे हथूण्डी की गद्दी पर दत्तवर्मा राठोड राज्य करते थे। महमूद गजनवी ने सोमनाथ जाते समय दत्तवर्मा राठोड से युद्ध किया था व पराजित किया था। हथूण्डी नगरी को उजाड दिया था। अन्त म हथूण्डी के राठोडवशी अतिम शासक के रुप म सिहाजी राठौड का नाम इतिहास मे मिलता है। इन्होने स वि १२३२ (ई म ११७५) वरसिह बालीसा चोहान से युद्ध कर अपनी विजय यात्रा का श्रीगणेश किया था। इसी का दूसरा नाम सीगा वामधज भी था। तेरहवीं शताब्दी मे अनतसिह राठोड भी यहा का शासक रहा है ऐसा उल्लेख है। इस तरह वीर बहादुर राष्ट्रकूटो की राजधानी हथूण्डी नगरी विशाल होते हुए भी हमेशा ही युद्ध भूमि बनी रही। यहा की आबादी और समृद्धि के विषय मे कहावत थी कि—'आठ कुँआ नव बावडो, सोलहसौ पणिहार" अर्थात् आठ कु ए और नौ बावडीयो पर एक साथ १६०० स्त्रीया पानी भरती थी। यह उल्लेख चौदहवी शताब्दी का है। यह वैभव समाप्त हो गया। युद्ध काल मे यह सारी हथूण्डी नगरी नष्ट हो गई। आज भी आठ या नौ सगमरमर की बावडिया मौजूद हैं। महल का प्रवेशद्वार पहाडी मे खडा है, जो काल की चुगली खा रहा है। खडेर महल जो नष्ट भ्रष्ट है। आज भी खुदाई मे कई अवशेष प्राप्त होते हैं। समस्त हथूण्डी नगरी नष्ट हो जाने के बावजूद भी एक मात्र भगवान महावीरस्वामी का भव्य मन्दिर जो चमत्कारिक रुप से बचा है वही खडा है। वह हथूण्डी का एक मात्र अवशिष्ट

प्रमाण है। अतः हथूण्डी का सारा ही इतिहास इसी मन्दिर के इर्द-गिर्द छिपा हुआ एवं जुड़ा हुआ है। शिलालेख सभी अजमेर के संग्रहालय मे पड़े हुए हैं।

महाप्रभावक आचार्य भगवन्तों की परम्परा

विक्रम की चौथी शताब्दी से लेकर वर्तमान युग की 20वी शताब्दी तक यह हथूण्डी नगरी महान प्रभावक जैनाचार्यो के प्रभाव से प्रभावित होती रही है। अतः हथूण्डी नगरी न केवल युद्ध भूमि ही रही अपितु धर्म भूमि रहने का भी श्रेय इसे प्राप्त है। आज से १६८२ वर्ष पूर्व चौथी शताब्दी में विक्रम संवत ३६० या ३७० में भगवान पार्श्वनाथ की परम्परा के ३० वी पाट के पट्टधर महापुरुष समर्थ आचार्य श्री सिद्धसूरि महाराज (पंचम) पधारे थे। जिन्होंने हथूण्डी के श्रेष्ठी गोत्र के श्राद्ध-रत्न वीरदेव सुश्रावक को सदुपदेश एवं प्रेरणा देकर यह मन्दिर बनवाया व प्रतिष्ठा की थी। हथूण्डी का यह मूलभूत सर्व प्रथम इतिहास मिलता है जबकि हथूण्डी के बदले हटोंडी नाम था। उसके बाद इस नगरी में एक से एक समर्थ महा-प्रभावक जैनाचार्यों का पदार्पण होता रहा। जिसमें प्रमुख है—आचार्य कक्कसूरिजी महाराज, आचार्य श्री देवगुप्त सूरिजी महाराज, आचार्य श्री सर्वदेवसूरिजी महाराज आदि कई थे। विक्रम संवत् ६२३ में हथूण्डी में पड़े भयंकर दुष्काल के समय आचार्य देवगुप्तसूरीश्वरजी महाराज ने मनुष्यों के लिए अन्न तथा पशुओं के लिये घासचारा भिजवाने की व्यवस्था करवाई थी। फिर सुकाल हुआ था। वि. सं. ७७८ मे आचार्य कक्कसूरिजी नवम ने हथूण्डी मे सदुपदेश से 28 जैन मन्दिर बनवाये थे। एवं ५०० व्यक्तियों को दीक्षा दी थी। यहा के राजाओं और सामन्तों को जैन धर्मी बनाये थे। वि. सं. ६८८ मे आचार्य सर्वदेवसूरिजी अपने ५०० शिष्यों के साथ विहार करते हुए यहा पधारे थे। राव जगमाल को अहिंसा धर्म अंगीकार करवा कर शिकार हिंसा बन्द करवाई थी।

आचार्य कक्कसूरिजी (सप्तम) छठी शताब्दी में हथूण्डी में विहार कर आये थे एवं यहां के प्राग्वाट (पोरवाल) वंशीय पाता श्रावक को दीक्षा दी थी। छठी शताब्दी में ही भगवान पार्श्वनाथ की पाटपरंपरा के ३७वे पटट्धर आचार्य देवगुप्तसूरी सप्तम वि. सं. ६१२ में हथूण्डी में पधारे थे। श्रीमाल गोत्रीय ओटा ने धर्मार्थ खूब कार्य किया। दुष्काल को सुकाल में बदला। ३९वे पटट्धर आचार्य कक्कसूरी अष्टम सातवी शताब्दी में वि. सं. ६६० से ६८० के बीच जब हथूण्डी पधारे थे तब हथूण्डी के मोरख गोत्रीय ऊहड ने दीक्षा ग्रहण की थी। ८वीं शताब्दी मे आचार्य कक्कसूरजि (नवम) जब हथूण्डी पधारे थे तब हथूण्डी के पोकरणा गोत्रीय केहरा श्रावक ने हथूण्डी मे दीक्षा ली थी। नौवी शताब्दी में ४८वी पाट के पटट्धर आचार्य सिद्धसूरिजी नवम जब पधारे तब हथूण्डी के भीमशाह श्रावक ने दीक्षा अङ्गीकार की थी।

इसी तरह वि. सं. ६६८ में आचार्य यशोभद्र सूरि हथूण्डी पधारे थे। ये महाचमत्कारिक विद्या मंत्रसिद्धि वाले आचार्य थे। इनकी मूर्ति एवं पादुकाएं आज भी इस तीर्थ में विद्यमान है। कई चमत्कारों में इनका हाथ रहा है। इनके बाद ११वी शताब्दी में इनके शिष्य आचार्य वासुदेवा-चार्यजी आये थे। इनके तीन नाम प्रसिद्ध थे (१) आ. वासुदेवाचार्य (२) केशवसूरि एवं (३) बलि-भद्र सूरिजी था। इन्होंने हथूण्डी नगरी के नाम से हस्तिकुण्डीयागच्छ—हस्तिकुण्डी गच्छ निकाला था। ये भी अपने गुरु की तरह महान चमत्कारी हुए है। इस गच्छ [illegible] शान्तिभद्राचार्य, [illegible], सूर्याचार्य, [illegible], [illegible], [illegible]-पाध्याय, [illegible], [illegible] आदि महान

आचार्य यहा पधारे। वि स १०५३ मे शान्त्याचाय ने हथूण्डी मे ऋषभदेव भगवान की प्रतिष्ठा करवाई थी। वि म १२६६ मे रत्नप्रभोपाध्याय के शिष्य पूर्णचन्द्र उपाध्याय ने मन्दिर मे शिखर व दो आले वनवाये थे। वि म १२०८ मे आचार्य श्री जयसिंह सूरिजी महाराज हथूण्डी नगरी मे पधारे थे। उस समय के शासक अनन्तसिंह राठौड का जलोदर का रोग आचार्यश्री ने अभिमन्त्रित पानी से मिटाकर राजा को जैन बनाया था। हथूण्डी के श्री सघ ने फिर उन्हे ओसवाल जाति मे मिला दिया था। वाद का इतिहास अप्राप्य है। वि स २००६ मे पजाव केसरी आचाय विजय वल्लभसूरी महाराज यहा हथूण्डी मे पधारे थे। उन्हें लाने का श्रेय बीजापुर सघ के कर्मठ सुश्रावक सेठ भवेरचदजी चदुलालजी कामदार को है। अन्तिम तीसरे जीर्णोद्धार के वाद पूज्यश्री के कर कमलो से प्रतिष्ठा करवाई थी। इस तरह हथूण्डी नगरी एव तीथ से अनेक महान आचार्यों की परम्परा जुडी हुई है। कई महान प्रभावक आचार्यों से यह भूमि एव तीथ पावन है।

वर्तमान सुविधाए —

वर्षों से इस तीथ का विकास कार्य जारी है। वतमान मे यहा यात्रियो के लिए नई वधाई हुई दो धर्मशालाए सुदर हैं। भोजनशाला हमेशा ही व्यवस्थित चलती हैं। आयंविलशाला भी साथ ही चलती है, यहां एक विशेप अतिथि गृह भी है सुदर "उपाश्रय है, एव मुनि अरुणविजय जैन ज्ञान भडार' (लायब्रेरी) है। पानी की प्याऊ आदि है। यहा पानी वहुत ही मीठा एव आरोग्यप्रद है। बिजली एव टेलीफोन (न ३६) की सुविधा प्राप्त है। मदिर तक पक्की डामर की सडक है। व्यक्तिगत, सपरिवार एव ४००—५०० यात्रियो के साथ आए हुए यात्री सघ के ठहरने-स्नान-भोजन-पूजा की सामग्री आदि की सपूर्ण सुविधा उपलब्ध है। काफी यात्री गण हमेशा ही आते रहते हैं। यहा प्रति वप चैत्र शुद १० को मेला लगता है।

श्री महावीर वाणी समवसरण मन्दिर—

वर्तमान मे इस तीर्थ की शोभा मे चार चाद लगाने हेतु एव विकासार्थ बिजापुर वाले पू मुनि राज श्री अरुणविजयजी महाराज की शुभ प्रेरणा सदुपदेश एव मार्गदर्शनानुसार "श्री महावीर वाणी समवसरण मदिर" इसी हथूण्डी तीर्थ की परिधि (कोट) मे निर्माण हो रहा है। ढाई हजार वप पूव भगवान महावीर के समय स्वर्गीय देवताओं ने जैसा समवसरण बनाया था उसी की प्रतिकृति स्वरूप हुवहु गोलाकार रगीन कलाकृतियुक्त सुन्दर समवसरण मदिर यहा वनाया जा रहा है। यह समवसरण १७५'×१७५' के प्रागन मे १२५' चौरस विस्तार मे वन रहा है। तीन गढ का गोल यह समवसरण ५१' फुट ऊचा गगनचुम्बी होगा। १२ प्रवेश द्वारो से सुशोभित इन्द्र ध्वजा आदि से युक्त सुन्दर रगीन अशोक वृक्ष सहित आकार ले रहा है। चारो दिशा मे समानरूप दिखाई देगा। प्रथम गढ के विशाल हॉल मे भगवान महावीर के २७ भवो के रगीन जीवन चित्र अकित किये हुए होंगे। सारा जीवन चरित्र लिखा जाएगा। साथ ही महावीर वाणी लिखी जाएगी। केन्द्र मे बैठकर महावीर वाणी श्रवण कर सकें ऐसी व्यवस्था होगी।

मध्य के दूसरे गढ मे चारो तरफ ४५ आगमो मे अकित 'महावीर वाणी' के उपदेशात्मक विविध श्लोक मूल अर्धमागधि भाषा मे लिखे जाएगे। साथ ही विविध भाषाओ मे भावार्थ लिखा जाएगा। केन्द्र मे ४५ आगम रहेगें। अत यह आगम मन्दिर का स्वरूप धारण करेगा। केन्द्र मे "महावीर वाणी ग्रन्थ" रहेगा जो विविध भाषा मे होगा। यात्री गण सामायिक लेकर बैठकर स्वाध्याय कर सकेंगे।

ऊपर के तीसरे गढ में भगवान शंखेश्वर पार्श्वनाथ की चौमुखी प्रतिमा चारो दिशा में विराजमान होगी। चारो तरफ पार्श्वनाथ भगवान के ६ गणधर एवं महावीर प्रभु के गौतमस्वामी आदि ११ गणधर विराजमान होंगे। साथ ही गणधरों का चरित्र अंकित होगा। सबसे ऊपर भगवान महावीरस्वामी की अष्टप्रातिहार्यादि युक्त चौमुखी प्रतिमा चारों दिशा मे सिंहासन पर विराजित होगी। सन्मुख १२ पर्षदा बैठेगी। इस प्रकार यह अपने प्रकार का अनुपम एवं अद्वितीय समवसरण मन्दिर राजस्थान भर में एक मात्र होगा। जिसे SHREE LORD MAHAVER LIFE AND TEACHING TEMPLE के रूप में देखेंगे। □

—आज से १६८२ वर्ष पुराना प्राचीन ऐतिहासिक तीर्थ—

卐 श्री हथूण्डी राता महावीर स्वामी तीर्थ 卐

विकास कार्य चल रहा है। तीर्थ का जीर्णोद्धार कार्य चल रहा है। इस प्राचीनतम मंदिर की २४ देवकलिकाएं निर्माण करनी है। वर्तमान चौवीशी के २४ ही भगवान विराजमान करने है। आपकी भावनानुसार १ देरी बनवाने एवं प्रभु प्रतिमा भरवाने का लाभ ले सकते हैं। भोजनशाला की एक तिथि लिखाने का तथा फोटू योजना में फोटु रखवाकर भी लाभ ले सकते हैं। व्यक्तिगत रूप मे पुष्प या पुष्प की पंखुड़ी तथा देवद्रव्य में से यथाशक्ति लाभ ले सकते हैं। यह रजिस्टर ट्रस्ट है।

"SHRI HATHUNDI RATA MAHAVIRSWAMI TIRTH" के नाम से चेक/ड्राफ भेजिए। पक्की रसीद अवश्य लीजिए। आज ही संपर्क करिए।

卐 श्री महावीर वाणी समवसरण मंदिर 卐

प्राचीन श्री हथूण्डी तीर्थ में अनुपम–अद्भूत रंगीन कलाकृति युक्त सुंदर "समवसरण" निर्माण हो रहा है। यह समस्त राजस्थान में अपने प्रकार का एक मात्र समवसरण मंदिर होगा। इसमे लाभ लेने की विविध योजनाए हैं। प्रभुजी की प्रतिमाएं, गणधरों की प्रतिमाएं भरने का तथा समवसरण के १२ प्रवेश द्वार पर विविध भागों पर नाम लिखने का तथा 'महावीर वाणी' लिखाने का लाभ लीजिए। छोटी-बड़ी अनेक योजनाओं मे लाभ लेकर अपनी लक्ष्मी का सद्व्यय कीजिए। आज ही संपर्क कर योजना का साहित्य मंगाइये।

"SHRI HATUNDI RATA MAHAVIRSWAMI TIRTH" के नाम से चेक/ड्राफ (समवसरण योजना में ऐसा लिखकर) भेजिए। पक्की रसीद लीजिए।

राजस्थान राज्य मे
सर्व प्रथमबार ही निर्माण हो रहा है–

❋ श्री महावीर वाणी समवसरण मन्दिर ❋

❋ मुख्य प्ररणादाता प पू मुनिराज श्री अरुणविजयजी महाराज

'समवसरण' — यह जैन धम मे ही एक विशिष्ट स्वरूप है। अन्य किसी भी धम मे इसका उल्लेख मात्र भी नही है। अत जन इतिहास एव प्राच्य सस्कृति का यह मूलभूत प्राचीन प्रतीक है। यह देवताओ द्वारा तीर्थंकर की देशना श्रवणार्थ निर्माण की हुई विशिष्ट रचना है। तीर्थंकर के सिवाय अन्य किसी के भी लिए नही बनती। तीर्थंकर के द्वारा उपार्जित "तीथकर नामकम" की सर्वोत्तम पुण्य प्रकृति का यह सर्वोत्कृष्ट उदय है। अत किसी भी तीथकर को केवलज्ञान प्राप्त होते ही स्वर्गीय देवतागण नीचे आकर जब केवलज्ञान कल्याणक महोत्सव मनाते हैं तब पृथ्वीतल के इस धरातल पर तीनगढयुक्त समवसरण की एक विशिष्ट रचना करते हैं। जिसमे अष्टप्रातिहार्यातिशययुक्त श्री तीर्थंकर भगवान विराजमान होकर देशना फरमाते हैं। तीथ एव धर्म की स्थापना करते है। देव मनुष्य एव तिर्यंच की तीन गति के जीव देशना श्रवणार्थ आते हैं। बारह पषदा मे विराजते है। यह एक ऐसी अद्भुत अनुपम रचना है कि जिसके निमित्त १५०० तापसों का केवलज्ञान प्राप्त हुआ था।

४ निक्षेपों मे जिनोपासना—

> नाम जिणा जिण नामा,
> ठवण जिणा पुण जिणिंद पडिमाओ।
> दव्व जिणा जिण जीवा,
> भाव जिणा समवसरणत्था ॥

चैत्यवदन भाष्य मे शास्त्रकार महर्षि ४ निक्षेपो मे श्री जिनेश्वर भगवान का स्वरूप बताते हुए कहते हैं कि जिनेश्वर भगवान का नाम यह नाम जिनोपासना है। स्थापना जिनके रूप मे जिनेश्वर भगवान की प्रतिमा है। तीर्थंकर बनने वाले द्रव्य जिन कहलाते हैं। तथा समवसरण मे विराजमान देशना देते हुए प्रभु भाव जिन कहलाते हैं। समवसरणस्थ भाव जिन ध्यानादि के आलबन म सर्वोत्तम है।

समवसरण रचना काल—

महाविदेह क्षेत्र मे हमेशा ही प्रतिदिन समवसरण की रचना होती है। चूकि वहा तीर्थंकर सदा ही रहते हैं। भरत क्षेत्र म सिर्फ तीसरे एव चौथे आरे मे जब तीर्थंकर होते हैं तभी समवसरण की रचना होती है। वतमान चौवीशी के अंतिम चरम तीर्थंकर श्री महावीरस्वामी भगवान हुए है। श्री महावीर प्रभु के केवलज्ञान कल्याणक के समय देवताओ न समवसरण की रचना की थी। वह ३० वष प्रभु के केवली पर्याय काल तक चलती रही। श्री वीर प्रभु के निर्वाण बाद चौथा आरा समाप्त हुआ एव पाचवा आरा प्रारम्भ हुआ। पाचवे-छठे आरे म समवसरण बनता ही नही है। चूकि तीर्थंकर ही नही होते हैं। तथा आगामी उत्सर्पिणी काल के प्रारम्भ होते छठे एव पांचवे दो आरे मे भी समवसरण नही बनेगा। इस तरह ८४००० वर्षों का

श्री महावीर वाणी समवसरण मंदिर

SHREE LORD MAHAVEER LIFE AND TEACHING TEMPLE

समवसरण का कलात्मक सुन्दर दृश्य
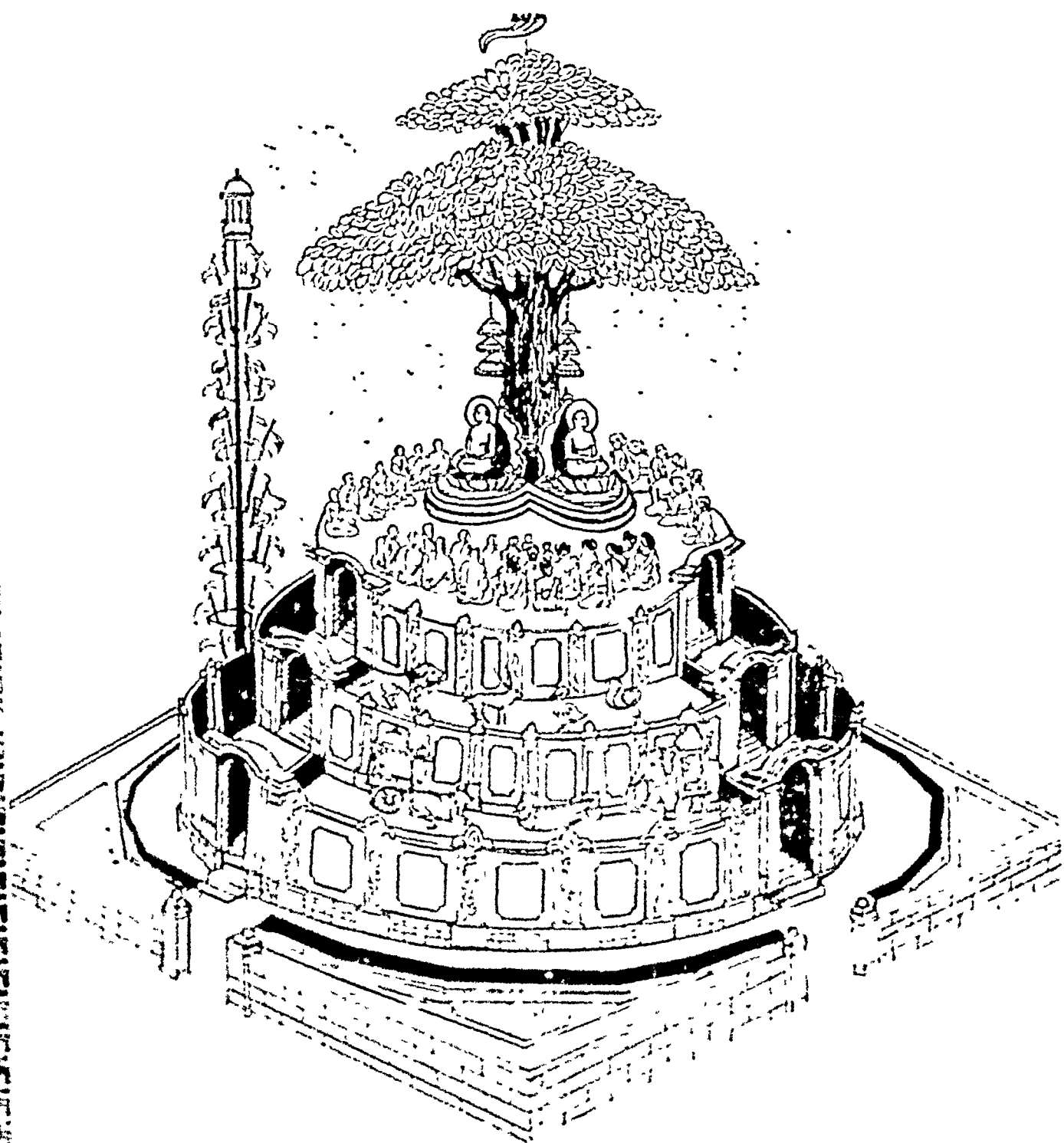
भरत क्षेत्र मे वियोग-अतराल रहेगा । अभी महावीर प्रभु को हुए तो ढाई हजार वर्ष ही बीते हैं । और आगे काल बहुत लम्बा है । जब आगामी उत्सर्पिणी के चौथे आरे मे पहले पद्मनाभस्वामी तीर्थंकर होंगे तब समवसरण बनेगा तब तक हमारे मे से कोई भी नहीं रहेगा । अत हम या हमारी भावी सैंकडो पीढियाँ समवसरण क्या था ? कैसा था ? किस प्रकार का बनता था ? प्रभु समवसरण में देशना कैसे देते थे ? देवतागण कैसी रचना करते हैं ? श्री महावीर प्रभु ने क्या देशना दी थी ? इत्यादि का हुबहु जीवन्त स्वरूप देखने एव समझने के लिए पू मुनिराज श्री अरुणविजयजी महाराज की प्रेरणा-सदुपदेश एव मार्गदर्शनानुसार समवसरण की मन्दिर के रूप मे एक प्रतिकृति निर्माण की जा रही है ।

राजस्थान में कहा ?

भारत देश के राजस्थान राज्य के पाली जिले में गोडवाड प्रदेश मे वाली तहसील मे बीजापुर गाव के पास एक प्राचीन तीर्थ है । जगप्रसिद्ध "माउन्ट आबू" पर्वत की अरावली पर्वत श्रृखला की पश्चिमी उपत्यका मे आज से १६८२ वर्ष पुराना प्राचीनतम ऐतिहासिक तीर्थ है । जो "श्री हथूडी राता महावीरस्वामी तीर्थ" के नाम से प्रसिद्ध है । राणकपुर से भी एक हजार वर्ष पुराना यह भगवान महावीरस्वामी का प्राचीनतम तीर्थ है । इस तीर्थ के ट्रस्टीगणो ने तीर्थ के प्रागण में १७५'×१७५' चोरस फुट विस्तार की जगह प्रदान की है । वहीं यह समवसरण एक मन्दिर के रूप मे निर्माण हो रहा है । अरावली पर्वतमाला का सुन्दर मनोहर दृश्य है । सृष्टि की प्रकृति देवी की गोद का सुनहरा वातावरण है । नदी के किनारे थोडी सी ऊचाई पर नीरव शान्ति के दर्शनीय क्षेत्र मे यह समवसरण बन रहा है । प्राचीन जैन इतिहास एव सस्कृति का एक अनुपम आदर्श खडा हो रहा है ।

वि स २०४३ के वैशाख सुदी ७ दिनाक १६-५-१९८६, शुक्रवार के शुभ मुहूर्त दिन पालनपुर निवासी श्रेष्ठी श्री चन्द्रकात धुडालाल गाधी एव श्राविका श्रीमती गुणवतीबेन गाधी परिवार एव बीजापुर निवासी श्रीमान उम्मेदमलजी एव शिवलालजी हजारीमलजी कामदार परिवार के सयुक्त करकमलो से खनन मुहूर्त हुआ । एव वैशाख सुदी १० भगवान महावीर केवलज्ञान कल्याणक दिन सोमवार दि –१९-५ १९८६ के शुभ मुहूर्त पर पालनपुर निवासी सेवाप्रिय श्रेष्ठिवर्य श्रीमान डाह्याभाई टी शाह के कर कमलों से शिलान्यास का पवित्र काय हुआ है । देखते ही देखते सिर्फ तीन मास की अवधि मे प्रथम भूमिगृह तैयार हो चुका है । कार्य शिल्प शास्त्रानुसार द्रुत गति से चल रहा है ।

समवसरण–एक सुन्दर बाह्य दृश्य—

यद्यपि देवता गण तो रजत (चादी) सुवर्ण एव रत्नमय बनाते थे । पृथ्वीतल के मानवी देवताओ की तुलना तो नहीं कर सकते । स्वशक्ति अनुसार निर्माण करते है । तिवरी के गुलाबी पत्थर एव मकराना के सगमरमर मे शिल्प शास्त्रानुसार सुन्दर कलाकृतियुक्त यह रगीन समवसरण मन्दिर बन रहा है । १७५'×१७५' चोरस फुट विस्तार मे ३ गढ का यह गोल समवसरण ७६' फुट चौडा एव ५१' फुट ऊँचा बनेगा । तीसरे गढ के ऊपर चरम तीर्थपति श्री महावीरस्वामी भगवान की विशाल चौमुखजी की चार प्रतिमाए विराजमान होगी । ऊपर हुबहु अशोकवृक्ष निर्माण होगा । बाई ओर इन्द्रध्वजा होगी । चारो दिशा मे १२ प्रवेश द्वार होंगे । बारह पर्षदा की रचना होगी । चारों तरफ महावीर वाणी विविध भाषा मे लिखि जाएगी । चारो तरफ सुन्दर रमणीय सुगधी बगीचा बनेगा । मानव निर्मित यह समवसरण देव निर्मित रचना की तुलना मे हाथ बटाएगा ।

समवसरण की आंतर रचना

सम्पूर्ण समवसरण के नीचे भूमितल में भूमिगृह (भोयरा) बन चुका है। उसके ऊपर ६०' गोल विस्तार का प्रथम गढ़ बनेगा। जिसके अन्दर दिवाल पर भगवान महावीर के २७ भवों के सुन्दर रंगीन चित्र बनेंगे। सम्पूर्ण जीवन चरित्र का चित्रमय दर्शन होगा। तथा चारों तरफ महावीर वाणी विविध भाषा मे लिखि जाएगी। केन्द्र में बैठकर महावीर वाणी श्रवण करने की व्यवस्था की जाएगी। यात्री गण व्यक्तिगत अकेले या सामूहिक रूप में बैठकर श्रवण कर सकेंगे। बाहर चारों तरफ ४ चौकियां आएंगी।

दूसरे गढ के आंतरिक हॉल में ४५ आगमों में से चयनित किये हुए भगवान महावीर के उपदेशात्मक श्लोकों का मूल अर्धमागधि एवं विविध भाषा में अनुवादित करके देशना लिखी जाएगी। मध्य में ४५ आगम रहेंगे। जिससे यह लघु आगम मन्दिर का स्वरूप धारण करेगा। मध्य केन्द्र मे चारों तरफ चार "महावीर वाणी ग्रन्थ" रहेंगे। जिसमें विविध भाषा मे भगवान महावीर का उपदेश लिखा हुआ रहेगा। भाविक यात्री गण सामायिक मे बैठकर स्वाध्याय कर सकेंगे।

ऊपर के तीसरे गढ़ में श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ की चौमुखी चार दिशा मे चार प्रतिमाएं विराजमान होगी। श्री पार्श्वनाथ भगवान के एवं महावीर स्वामी भगवान के गणधरों की प्रतिकृतियाँ होगी। सुन्दर रंगीन जीवन चरित्र होगा।

सबसे ऊपर भगवान महावीरस्वामी की विशाल मनोहर चार दिशा में चौमुखजी के रूप में चार प्रतिमाएं विराजमान होगी। कमलाकार सिंहासन एवं अष्टप्रतिहार्यो की सुन्दर रचना होगी। बारह पर्षदा, तिर्यच प्राणी, देव विमान, ईन्द्रध्वजा आदि की रचना युक्त यह अनुपम रंगीन समवसरण निर्माण हो रहा है। ऊपर अशोक वृक्ष की सुन्दर हुबहु रचना होगी। जिस पर ध्वजा लहराएगी।

इस प्रकार का यह "श्री महावीर वाणी समवसरण मन्दिर" भारत भर में एवं विशेषकर राजस्थान राज्य में अपने स्वरूप का एक अनुपम, अद्वितीय एवं अद्भूत समवसरण निर्माण हो रहा है। प्राचीन इतिहास एवं जैन संस्कृति की यह जीवन्त भांकी निर्माण हो रही है जो इतिहास और संस्कृति को अमर बनाएगी। हमें और हमारी सैकड़ों भावी पीढ़ियों को प्रेरणा प्रदान करेगी।

तीर्थ यात्रा के लिए पधारने का हार्दिक आमन्त्रण है।

उदार दानवीर दाताओं को महत्वपूर्ण योगदान देकर
लाभ लेने की हार्दिक अपील है।

इस कलियुग में महान चमत्कारी एवं प्रगट प्रभावी अत्यन्त प्राचीन श्री राता महावीरस्वामी भगवान के दर्शनार्थ-यात्रार्थ श्री हथूंडी तीर्थ अवश्य पधारिये। यात्रियों के लिए सर्व प्रकार की सुविधाएँ उपलब्ध हैं।

सम्पर्क सूत्र - **श्री हथूंडी राता महावीरस्वामी तीर्थ**
पो. बिजापुर वाया-बाली, स्टेशन फालना, जिला -पाली
राजस्थान पिन कोड नं. ३०६७०७ फोन— ३८

खास सूचना—**श्री हथूंडी तीर्थ में यात्रियों एवं यात्रा संघों के लिए दो धर्मशाला भोजनशाला, अतिथि गृह, उपाश्रय आदि की सुन्दर व्यवस्था है। पक्की सड़क है।**

पाप को पहचानें......

लेखक मुनि अरुणविजय महाराज
(साहित्य रत्न, न्यायदर्शनाचार्य)

इस धरती पर दिन प्रतिदिन पाप का प्रमाण बढता ही जा रहा है। भूतकाल में भी पाप जरूर होता था परन्तु पाप का प्रमाण आज की अपेक्षा बहुत कम था। जबकि आज के कलियुग में दृष्टिपात करने से शायद ऐसा महसूस होता है कि आज पाप की चरम सीमा का भी उल्लंघन मानव कर रहा है। एक तरफ हम कह रहे है कि मनुष्य ज्यादा सुशिक्षित और सभ्य बन रहा है। फिर भी पाप के प्रकार और प्रमाण में वृद्धि होती जा रही है। क्या पाप की वृद्धि सभ्यता का लक्षण हो सकता है? अत यह कहना पडेगा कि–भूतकाल में जितनी धर्म की आवश्यकता थी शायद आज उससे हजार गुनी ज्यादा आवश्यकता है। चूंकि पाप की औषधि धर्म ही है।

सर्वज्ञ भगवतो ने धर्म की शुरुआत ही पाप के त्याग में बताई है। वास्तव में मनुष्य ने जितने प्रमाण मे पाप की वृत्ति और प्रवृत्ति का त्याग किया है उतने प्रमाण में वह सच्चे अर्थ में धर्मी बना है। अत धर्मी बनने के लिए, या धर्म करने के लिए पाप प्रवृत्ति का त्याग करना आवश्यक है। अफसोस इस बात का है कि वर्तमान कलिकाल में बन बैठे हुए तथाकथित भगोडे भगवान पाप प्रवृत्ति को ही उत्तेजित करते हुए हरी झंडी बताते हैं और उसी मे धर्म बताते हैं। कोई सभोग मे ही समाधि बता रहा है। अब आप सोचिए! वासना के ये अतृप्त कीडे किस तरह साधना कर पाएंगे?

"अहिंसा परमो धर्मः" आदि जो धर्म रूप में गिने जाते हैं उनमें अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्यादि मूलभूत धर्म है। ये धर्म हिंसा, झूठ, चोरी, मैथुनादि पापो की निवृत्ति रूप है। अत पाप की निवृत्ति कौन कितने प्रमाण मे करता है? उस पर धर्म व धर्मी के प्रमाण का आधार है। प्रमाण का आधार प्रतिशत की मात्रा पर है। पाप की निवृत्ति को ही विरति धर्म कहा गया है। यह विरति धर्म २ प्रकार का है। (१) सर्वविरति धर्म (२) देशविरति धर्म। जीवन भर सर्व पाप का सर्वथा त्याग करने को सर्वविरति धर्म कहते है। इसको स्वीकारनेवाला महाव्रती साधु कहलाता है। जबकि इन्ही अहिंसा-सत्यादि व्रतो को अल्प मर्यादा मे अणुव्रत के रूप मे स्वीकारने वाला देशविरतिधर श्रावक कहलाता है। सर्वविरतिधर साधु हिंसा-झूठ-चोरी-मैथुन आदि महापापो का आजीवन आचरण न करने की प्रतिज्ञा करता है। अत पाप निवृत्ति रूप श्रेष्ठ धर्म साधु का हुआ। जबकि पुत्र-पत्नी आदि परिवार और आजीविका की जाल मे फसा हुआ गृहस्थ सर्वथा सब पापों का त्याग नहीं कर पाता है अत वह देशविरतिधर अल्प पाप त्यागी श्रावक बनता है। परन्तु साधु और श्रावक दोनों के धर्म का रूप स्वरूप एक ही है। साध्य एक ही है। सिर्फ पाप के त्याग का प्रमाण

किए हैं उसे बदलने में या नष्ट करने में देवता और असुरादि कोई कुछ भी नहीं कर सकते। देवतादि भी समर्थ नहीं है। अतः सही कहा गया है कि "**कृतं कर्म अवश्यमेव भोक्तव्यं, कल्प कोटि शतैरपि**" किए हुए कर्म का फल तो अवश्य ही भोगना पड़ेगा भले ही सैंकड़ो कल्पकोटि का काल भी बीत जाय। करोड़ों वर्षो का काल बीत जाय फिर भी किए हुए कर्मो से कोई छुटकारा नहीं है। कई उग्र पापों का फल तो शिघ्र मिलता है। कहा है कि—

अत्युग्र – पुण्यपापानामिहैव फलमाप्यते ।
त्रिभिर्वर्षैस्त्रिभिर्मासैस्त्रिभिः पक्षैस्त्रिभिर्दिनैः ॥

—अत्यन्त उग्र पुण्य-पापों का फल यहीं पर भुगतना पड़ता है। शायद वह ३ वर्ष में, या ३ महीने में, ३ पक्ष में, या ३ दिन में ही क्यों न हो, परन्तु फल अवश्य ही भुगतना पड़ता है। किए हुए एक पाप के कारण भी शायद सैंकड़ों जन्मों तक सजा (दुःख) भुगतना पड़ता है। यह तो यहां भुगतने के पश्चात् अवशिष्ट फल जन्मान्तर में भुगतना ही पड़ता है। अति उग्र पाप की बात हुई परन्तु कई पापों की सजा तो जन्मों तक चलती ही रहती।

जठराग्निः पचत्यन्नं, फलं कालेन पच्यते ।
कुमन्त्रैः पच्यते राजा, पापी पापेन पच्यते ॥

—कहते हैं कि-जठराग्नि तो अन्न को ही पचाति है। काल फल को पकाता है। योग्य काल आने पर फल पकते हैं। कुमन्त्रों से राजा भी वश होता है। उसी तरह पापी दूसरों से वश हो या न हो, पकड़ा जाय या न भी पकड़ा जाय, परन्तु पापी अपने ही किये हुए पापों से जरूर दुःखी होता है। पापी पाप से पचता है। ठीक ही कहा है कि—

न परो करेइ दुक्खं नेव सुहं कोई कस्सई देई ।
जं पुण सुचरिअ-दुचरिअ परिणमअ, पुराणयं कम्मं ॥
सुखस्य-दुःखस्य न कोऽपि दाता, परोददातीति कुबुद्धिरेषा ।
पुराकृतंकर्म तदेव भुज्यते शरीर हेतोस्त्वरया त्वया कृतम् ॥

—न तो कोई किसी को दुःख देता है या न कोई किसी को दुःखी करता है, तथा न ही कोई किसी को सुख देता है या सुखी करता है। परन्तु हे आत्मन्! तूने खुद ने ही पूर्व जन्मों में शुभाचरण (धर्म) और खराब आचरण (पाप) किया है, वही संचित पुराना कर्म ही आज तुझे सुखी-दुःखी कर रहा है। सुख और दुःख का कोई दाता नहीं है। कोई देने वाला नहीं है। दूसरा मुझे दुःखी करता है यह तो अपनी दुष्ट बुद्धि है। (मिथ्या ज्ञान है।) शरीरादि के कारणवश जन्मों में जिसने जो पुण्य-पाप-अच्छे-बुरे कर्म किये हैं उसी के फल को सभी भोगते हैं। अच्छे कर्म का फल सुखरूप मिलता है। जब कि बुरे पाप कर्मों का फल दुःख रूप मिलता है। अब तो जीव को खुद को समझना चाहिए कि सुख और दुःख दो में से क्या चाहिए? जो चाहिए उसके लिए वैसा काम करे। सुख चाहिए तो पुण्योपार्जन शुभ कार्य करे। और दुःख चाहिए तो पापोपार्जन करे। परन्तु संसार में विचित्रता तो इस बात की है कि—

धर्मस्य फलमिच्छन्ति, धर्मं नेच्छन्ति मानवा ।
फल पापस्य नेच्छन्ति पाप कुर्वन्ति सादरा ।।

—शुभ कार्य धम का फल सुख तो सभी चाहते हैं परन्तु अफसोस कि उसके लिए धर्म करना कोई नही चाहता है। वैसे ही पाप-अशुभ कम का फल दु ख कोई नही चाहता है परन्तु अफसोस कि पाप को छोडना भी कोई नही चाहता है । आदर पूर्वक मजे से पाप करते जा रहे हैं । कम सत्ता के घर मे उल्टी गगा तो बह नही सकती । देर भी नहीं है और अन्धेर भी नही है । सुख-दु ख ये काय है और पुण्य-पाप इसके कारण हैं । जैसे घडे का कारण मिट्टी है । उसी तरह सुख का कारण पुण्य-शुभ कम है । और दु ख का कारण पाप-अशुभ कम है ।

अपकारिषु मा पाप चिन्तयस्व कदाचन ।
स्वयमेव पतिष्यन्ति कूल जाता इव द्रुमा ।।

—ज्ञानी भगवत यहा तक फरमाते हैं कि हे भाग्यशाली ! अपना अपकार (बूरा-अहित) करने वाले के प्रति भी अहित बूरा करने का मत सोचना । कभी भी अपकारी का खराब करने का मनसे सोचने का मानसिक पाप भी मत करना । चू कि कूल मे उत्पन्न हुए वृक्षो की तरह वे स्वय अपने आप गिरने ही वाले हैं । पाप करने वाला पापी ही अपने आप कर्म के भार से गिरता ही है । तो फिर सज्जन व्यक्ति को अपकारी को गिराने के लिए निरथक पाप का विचार मात्र भी क्यो करना चाहिए ? आवश्यकता ही नही है । उसके प्रति खराब विचार करके हम स्वय अशुभ कम बाधेंगे । इसलिए हम उनके किए हुए पाप का फल देने वाले अधिकारी नही है । उस फल को तो पाप करने वाला स्वय स्वकर्मानुसार भुगतने वाला है तो फिर हम उस निमित्त क्यो कर्म बाधेंगे ? "पापी पापेन पच्यते ' की कहावत सही है । अत सही कहा है कि—"पूवकृत कम कर्तारमनु धावति"—अर्थात् भूतकाल मे किए हुए कर्म – करने वाले के पीछे दौडते ही हैं । जैसे किए हुए हैं वैस फल भुगतना ही पडेगा ।

नौ तत्त्वो मे पाप तत्त्व की गणना आश्रव तत्त्व के विभाग मे की गई है । शुभाश्रव पुण्य, और अशुभाश्रव-पाप है । पाप का आश्रव भी है पाप का बध भी है । उसी पाप को आते हुए रोकने के लिए सवर तत्त्व भी है । और उसी पाप कम का सवथा समूल नाश करने के लिए निजरा तत्त्व भी है । उसी तरह "सव्व पावप्पणासणो" अर्थात् सव पाप का नाश करके आत्मा मुक्त भी होती है । वही मोक्ष है । ससार में पहले तो आत्मा का पाप से मोक्ष छुटकारा हो फिर तो पाप रहित आत्मा का ससार सदा के लिए छुटकारा हो ही जाएगा । वही मोक्ष है । वह आत्मा का सही मोक्ष है । अत पाप से मुक्त होने के लिए-छूटने के लिए सतत प्रयन्न करना चाहिए । उसको छोडने के पहले जानना पहचानना भी जरूरी है ।

पुण्य-और पाप इन दोनो का पहले तो जानना आवश्यक होगा साथ ही फल भी जानना आवश्यक होगा । जानने पहचानने के बाद ही किसका आचरण करना और किसका त्याग करना यह समझ में आएगा । श्री वीर प्रभु ने (दशवैकालिक आगम मे) फरमाया है कि—

कम ज्यादा है। "सव्वपावप्पणासणो" का लक्ष्य एक ही है। अतः नमस्कार महामंत्र का यह पद सर्वथा सर्व पाप का नाश करने की प्रेरणा देता है।

श्रावक २ घड़ी (४८ मिनिट) की सामायिक करता है। वह सामायिक धर्म भी २ घड़ी तक "सावज्जं जोगं पच्चक्खामि" सावद्य=हिंसादि पाप प्रवृत्ति के त्याग की प्रतिज्ञा पूर्वक ही है। साधु की सामायिक जीवन भर की है। उपवास करना अर्थात् दिन भर की खाने-पीने की प्रवृत्ति का त्याग करके मनको आत्मा के समीप मे तल्लीन रखना। अतः यह निष्कर्ष सही है कि जितने प्रमाण में हम पापों का त्याग करते जाएँ उतने प्रमाण में धर्म होता जाएगा। तथा मानव धर्मी बनता जाएगा। इसीलिए पाप त्याग की बात पर विशेष भार देते हुए कहा है कि—

अकर्तव्यं न कर्तव्यं, प्राणैः कण्ठगतैरपि।
सुकर्तव्यं तु कर्तव्यं, प्राणैः कण्ठगतैरपि॥

प्राण कण्ठ में भी आजाय अर्थात् मृत्यु सामने भी आ जाय फिर भी नहीं करने योग्य अकार्य पाप नही करने चाहिए सत्कार्य-शुभ कार्य प्राण कण्ठ में आने पर भी करने ही चाहिए। लेकिन ये शब्द आज चरितार्थ होते हुए नही देखे जा रहे हैं। आज जीवन पापमय होता जा रहा है। यहां तक कि धर्म करने वाले अच्छे-अच्छे धर्मी भी पाप नही छोड़ पा रहे हैं। एक तरफ थोडासा धर्म भी करते जा रहे हैं। जबकि दूसरी तरफ पाप दस गुना ज्यादा करते देखे जा रहे हैं। अन्त में धर्म का ही अवमुल्यन होगा। धर्म-धर्मी दोनों पर कलंक लगता है। आश्चर्य तो इस बात का है कि—

यत्नेन पापानि समाचरन्ति, धर्मं प्रसङ्गादपि नाचरन्ति।
आश्चर्यमेतद्धि मनुष्यलोके, क्षीरं परित्यज्य विषं पिबन्ति॥

प्रयत्न करके भी पाप करते हैं, परन्तु प्रसङ्गवश भी धर्म का आचरण नही करते हैं। मनुष्य में यही सबसे बड़ा आश्चर्य है कि दूध को छोड़कर विष पीते हैं, उसी तरह धर्म को छोड़कर पाप करते हैं। मनुष्य जिन निमित्तों के आधीन होकर पाप करता है परन्तु उसके परिणाम के बारे में नही सोचता है कि पाप का नतीजा क्या आएगा? सही कहा है कि—

पुरुषः कुरुते पापं, बन्धु निमित्तं वपुर्निमित्तं वा।
वेदयते तत्सर्वं नरकादौ पुनरसावेकः॥

पुरुष अपने भाई बहन-पत्नि-पुत्र-भाभी आदि सगे संबंधियों के निमित्त तथा अपने शरीर के कारण जितने पाप करता है उनके परिणाम स्वरूप जब सजा (फल) भुगतने का समय आता है तब अकेला बिचारा नरकादि गति में महावेदना-भयंकर दुःख भोगता है। वहां ये सगे संबंधि कोई नहीं आते। संसार पाप में साथी बनने के लिए तैयार है परन्तु दुःख में साथी बनने को कोई तैयार नहीं है। किये हुए पाप कर्मों को कोई मिथ्या नहीं कर सकता। ठीक ही कहा है कि—

यदुपात्तमन्यजन्मनि शुभमशुभं वा स्वकर्म परिणत्या।
तच्छक्यमन्यथा नैव कर्तुं देवासुरैरपि हि॥

अपनी कर्म परिणति (वृत्ति) से पीछे से अन्य जन्मान्तर में जो भी अच्छे-बुरे पुण्य-पाप कर्म

सोच्चा जाणइ कल्लाणं, सोच्चा जाणइ पावगं ।
उभयं पि जाणइ सोच्चा, जं सेयं तं समायरे ॥

—हे आत्मन् ! कल्याणमार्ग को भी अच्छी तरह सोच-समझकर जान लेना । उसी तरह पाप का मार्ग भी अच्छी तरह सोच-समझकर जान लेना । दोनो को ही अच्छी तरह सोच-समझकर-जानकर, फिर जो श्रेयस्कर हो उसका आचरण करना वही तेरे हित मे है ।

"सोच्चा जाणइ पावगं"—पाप को भी अच्छी तरह पहचान लो" श्लोक के इस पद से प्रेरणा लेकर मैंने मनमे निर्धार किया कि पाप क्या वस्तु है ? पाप किसे कहते हैं । पाप के प्रकार कितने है ? पाप की सजा कैसी होती है ? पाप क्यो किये जाते हैं ? किसे किसे पाप कहते हैं ? इत्यादि सैकडो प्रश्न जो पाप के विषय मे उठते हैं उनका समाधान सभी को मिले, और सभी पाप को अच्छी तरह पहचान सके इस हेतु से "पाप की सजा भारी" नामक पुस्तक लिखी है । सही बात है कि जो पाप हेय-त्याज्य है, छोडने लायक है, उन्हें भी पहले जानना जरूरी है । बिना जाने पाप छोड भी कैसे सकेंगे ? इस पवित्र भावना से प्रेरित होकर पुस्तक लिखी है ।

—"पाप की सजा भारी"

✿ "मा दर्पित कोऽपि पापानि" ✿

पर्युषण-महापर्व एवं मानवधर्म क्या हैं ?

लेखक : श्री शिखरचन्दजी पालावत
अध्यक्ष जैन श्वे. तपोगच्छ संघ जयपुर

जीवन के सरोवर में प्रेम के कमल खिलाने की प्रेरणा देने वाले महान पर्युषण पर्व का एक संदेश है, अहिंसा का।

सामान्यतया अहिंसा का अर्थ किसी को नहीं मारना इतना ही किया जाता है—पर यह अर्थ अधूरा है—किसी का जीवन छीन लेना जैसा हिंसा है, पाप है, वैसे ही किसी दिल को दुखाना किसी की आत्मा को दुखी करना यह भी एक प्रकार की हिंसा है। किसी के हृदय को पीड़ा नही पहुंचाना बहुत बड़ा धर्म है। शरीर के घाव तो मरहम पट्टी से शायद भर भी जायें, सूख भी जाये पर मन के घाव जल्दी नही भरते। अतः गलती से भी किसी प्राणी मात्र को पीड़ा नही देना।

संवत्सरी का दिन है। क्षमा बिना का जीवन तो रेगिस्तान के जैसा प्रतीत होता है। रेगिस्तान में भी रात होती है और रेत का शीतल—मुलायम स्पर्श मिलता है। जबकि क्षमा रहित जीवन में तो निरे वैर की आग धधकती है, जलने और झगड़ने में रखा क्या है। यह जिन्दगी मित्रों की महफिल सजाने के लिए है। न कि शत्रुता रचाने के लिये है। यह जीवन दोस्ती बढ़ाने के लिये है, न कि दुश्मनी पैदा करने के लिये है।

दोस्तो, भूल हुई या नहीं हुई, सबसे क्षमा मांगने से हम छोटे नहीं होंगे बल्कि [illegible] का दिन और [illegible]। [illegible]

सरल है—सहज है किन्तु पर्युषण दिखलाता है स्वयं में जाने का रास्ता, स्वयं में जीने की आस्था जिससे अपने भी दिव्य प्रेम का झरना वहे जिसने प्रसन्नता का पवित्र नीर लहराये।

कल्प सूत्र क्या है ?

शोक एवं मोह के जाल को जला देने वाले इस कल्प सूत्र को युग प्रधान श्रुत केवली श्री भद्रवाहु स्वामी ने विक्रम सवत् ५१० में महाश्रुतधर देवार्द्धिगण क्षमा क्षमण ने लिपिबद्ध किया था और सर्व प्रथम वल्लभीपुर (सौराष्ट्र) में इस ग्रन्थ का संघ के समक्ष पठन चालू हुआ। विक्रम संवत् ५२३ में गुजरात के तत्कालीन पाट नगर आनन्दपुर में राजा ध्रुवसेन के राज परिवार के शोक को दूर करने के लिये आचार्य देवश्री कालिक सूरीश्वरजी के श्री मुख से सकल संघ के समक्ष उसका पठन पाठन हुआ। वर्तमान समय में कल्प सूत्र का संपादन करने का श्रेय मिलता है, महामहोपाध्याय श्री विनय विजयजी गणी विरचित 'सुबोधिका-वृत्ति आधारित कल्प यानि आचार-श्रमण जीवन की आचार व्यवस्था का संकलन यानी 'कल्प सूत्र'

सपने क्या है ?

भगवान महावीर की माता त्रिशला रानी ने जो १४ महान स्वप्न देखे थे जितने सुन्दर हैं। एक-एक स्वप्न भगवान प्रभु के व्यक्तित्व को दर्शाते हैं, सुन्दर सपनों का [illegible] भी उन्हीं भावनाओं को [illegible] होता है।

बन्धुओ आज का दिन महावीर प्रभु के जन्म का दिन है वाचन--महावीर भगवान का जन्म दिवस नहीं है। आज तो महादेवी त्रिसला रानी को आये हुए चौदह स्वपनो को जी भर देखने का दिन है। महारानी त्रिसला के उदर मे आये हुए नन्ह वर्धमान का व्यक्तित्व आका जा सकता है। हमारे शास्त्र एवम् प्राचीन ग्रन्थो मे सदियो से सकलित है।

परमात्मा श्रमण भगवान महावीर प्रभु के रोमाचकारी जीवन घटनाओ की गहरी प्रेरणा लेकर आज पर्युषण के घट दिन की उपा उभरी है क्षितिज के तट पर।

वधमान खेलते हैं दोस्तो,की महफिल मे, किन्तु उनके भीतर मे तो उदासीनता ही रहती है। अपनी माता की इच्छा की खातिर वो शादी भी रचाते हैं, राजा समरवीर, एवम् पद्मावती की पुत्री यशोदा के साथ। फिर भी उनकी आत्मा बिलकुल अलग है। अलिप्त है इन बधनो से। सर्व त्याग के शूल बिछे रास्ते पर चलने के लिए तयार वर्धमान को विदा देती यशोदा की जरा कल्पना तो करो। अपने पति को 'त्रिभुवन पति' बनाने के इरादे की खातिर उस नाजुक नारी ने अपने सुख की तनिक परवाह नहीं की। उसने हँसते हँसते हृदय मे अलविदा ही अपने कत को महान सत बनने के लिये। उस महान नारी ने अपने सवस्व जैसे सुहाग को विराग को त्याग की राह पर जाते देखकर आसू बहाये बगैर अपने जीवन-धन को 'जगत धन' बनाने वाली उस यशोदा देवी को कोटि—2 धन्य है।

पर्युषण के सातवें दिन सस्कृति के आद्य पुरस्कर्ता परमात्मा आदिनाथ प्रभु एवम् काशी के कोमल राजकुमार व मन्त्र तन्त्र यन्त्र उपासना के केन्द्र बिन्दुरूप भगवान पाश्वनाथ के जीवन की सभी बातें आज के सातवें व्याख्यान मे सुनने को मिलती हैं। इतिहास के पन्नो पर सुनहरे अक्षरो मे लिखी गई 'नेम एवम् राजुल' की आठ आठ जन्म की प्रीत के गीत जिसने जी भरकर गाये हैं। राजुल को रोती बिलखती, गिरनार के शिखरो की पथरीली राह लेते "नेम कँवर" युग युग की पिछान जैसे कि पलभर मे कोई किसी को जानता ही नही।

श्रावक के छह कर्तव्य

(१) जिनेन्द्र पूजा—

ज्ञानी पुरुषों ने मानव जीवन को एक कल्प—वृक्ष बतलाया है जिसमे पहली बात है। जिनेश्वर देव का पूजन। प्रतिदिन परमात्मा का पूजन करना चाहिये। भक्ति भाव पूवक परमात्मा का पूजन करने से मन को परम शाती, प्रसन्नता प्राप्त होती है। दुनिया मे परमात्मा से बढकर और कौन पूज्य हो सकता है। अष्ट प्रकार की पूजा मे आत्मा के कर्म बधन से मुक्त करने का ही लक्ष्य है।

(२) गुरु उपासना—

सर्वज्ञ परमात्मा के बतलाये सर्वविरति साधु जीवन को जीने वाले अपने गुरुदेव हैं। उनकी सेवा भक्ति वयावच्य करने मे कोई कसर नहीं रखनी चाहिये। 'गुरु' तत्व का काफी [illegible]त्व है। जो अपने को परमात्मा के माग का पा[illegible]य कराते हैं, परमात्मा के निकट ले जाते हैं। जी[illegible] का समुचित ज्ञान, दर्शन, चरित्र का माग बतलाते [illegible]। ऐसे गुरु जनो का आदर—सत्कार तथा उनका बहुमान करके उनकी भी सेवा का लाभ लें।

(३) अनुकम्पा—

जीवो के ऊपर दया यह तो विश्व के सभी धर्म मानते हैं। श्रमण भगवान महावीर ने कहा है कि यदि तुम दुख नही चाहते तो किसी को दुख मत पहुचाओ। सभी तुम्हारी तरह ही सुख मे जीना चाहते हैं। (जीओ और जीने दो) छोटे कीटाणु से लेकर बडे से बडे जानवर एवम् आदमी मे भी आत्मा एक सी है। अत किसी भी प्राणी को कष्ट या पीडा नही देनी चाहिये।

(४) सुपात्रदान—

यानी श्रेष्ठ सुन्दर योग्य पात्र। दुनियाँ में श्रेष्ठ जीवन है मानव का। उससे भी उच्च जीवन है श्रमण साधु–साधना में सदारत ऐसे साधु-साध्वी भगवन्तों को वस्त्र, पात्र, भोजन पानी, औषधि आदि का भक्तिभावपूर्वक दान देना। उसको कहते हैं सुपात्रदान। साथ ही अपने साधर्मी भाई बहन श्रावक श्राविका की भी भक्ति का लाभ भी लेना चाहिये।

(५) गुणानुराग—

यह बड़ा ही महत्वपूर्ण है। यदि हम सभी अनुराग रखने लगे तो सारी समस्याएँ अपने ही आप सुलझ जायेंगी। हम यदि औरों के गुण देखेंगे तो हमारे मे भी गुण आयेंगे। यदि हम दोष दर्शन करेंगे तो हम दोषो से भर जायेंगे।

(६) आगम श्रवण—

आगम-ग्रन्थों का हमे अपने गुरुजनों के मुँह से हमेशा श्रवण करना चाहिये। यदि गुरुजनों का सत्संग न हो तो स्वाध्याय अध्ययन पठन पाठन द्वारा आगम ग्रन्थों का ज्ञान अर्जित करना चाहिये। सदैव ही हम राग-द्वेष मोह माया के जंजाल में लगे रहते हैं किन्तु हम हमारी आत्मा को भूल जाते हैं। यदि संसार रूपी गली में भटक गये तो परमात्मा तक हमारी यात्रा कैसे होगी? स्वाध्याय के द्वारा हमें आत्मभाव में जाना है। इसी मे जिन्दगी की सफलता है।

पर्युषण पर्व के पांच कर्तव्य

(१) साधर्मिक वात्सल्य—

हम जिन परमात्मा की आराधना उपासना करते हैं उन्ही की आराधना करने वाला प्रत्येक व्यक्ति हमारा साधर्मिक है यदि हमारी शक्ति है तो हमारा परम आवश्यक कर्तव्य है कि हम उनकी सार संभाल व उनके जीवन मे सहायक बनें। जहां कर्तव्य होता है वहां ऊंच नीच गरीब अमीर सारे भेद मिट जाते है। नवकार मन्त्र को गिनने वाला भगवान महावीर के सिद्धान्तों से आस्था रखने वाला हर एक व्यक्ति हमारा सावर्मी भाई है।

(२) क्षमापना—

बन्धुओं—गलती किससे नही होती? ठोकर कौन नही खाता? लेकिन गलती को महसूस करके पश्चाताप व्यक्त करना, क्षमा माँग लेना बड़ा ही महत्वपूर्ण है। कभी किसी के साथ कुछ कहने मे आ गया, कुछ मन मुटाव हो गया, कुछ अनबन हो गई, मानव मन है यह सब हो जाना सहज है किन्तु पर्युषण महा पर्व पर क्षमापना का महत्व समझें। आपस की अनबन को छोड़कर खुले दिल व दिमाग से एक दूजे से क्षमा याचना करे।

(३) अमारी प्रवर्तन—

मारी यानी हिंसा, आमारी अर्थात् अहिंसा। आज तो पूरा विश्व हिंसा हत्या व मारपीट के दौर से गुजर रहा है। युद्ध का शामियाना तन चुका है संसार पर। अहिंसा की बात अशक्य लगती है परन्तु अहिंसा के अलावा और कोई चारा नहीं है, बचने के लिये दुनियां की बात छोड़ो, कम से कम हमारे समाज मे हमारे परिवार में और व्यक्तिगत हमारे जीवन मे से हिंसा को हटा दें।

(४) चैत्य परिपाटी—

'चैत्य' यानी जिन मन्दिर 'परिपाटी' यानी दर्शन को जाना। अपने नगर के जिन मन्दिरों के दर्शन-वंदन एवम् परमात्मा का पूजन करना। यदि हो सके तो चतुर्विध संघ के साथ दीन दुखी को अनुकम्पा दान देते हुए महोत्सव पूर्वक जिनालयों के दर्शन करना चाहिये। परमात्मा के दर्शन से पाप मिटते है पूजन से भी सौभाग्य प्राप्त होता है— आत्मा पावन बनती है।

(५) अहम तप—

यानी तेला इस तप को ज्ञानी पुरुषो ने महा मगलकारी बतलाया है। तीन दिन तक उपवास करना। परमात्मा का जाप ध्यान करना भक्ति मे लीन रहना। मोक्ष मार्ग की पूरी साधना तीन बातों में समाई है दर्शन, ज्ञान, चरित्र इन तीन गुणों को प्रकट करने के लिये जीवन मे मगल व शुभ हेतु पर्यु षण पर्व मे अष्ठम् तप करने का तप बताया है।

श्रावक के वार्षिक ११ कतव्य

(१) सघ पूजा—

सघ माने परमात्मा जिनेश्वर देव का धर्म शासन एवम् उसके साधक—उपासक—साधु—साध्वी—श्रावक श्राविका यानी चतुर्विध सघ को 'तीर्थ' का नाम दिया है। खुद तीर्थं कर परमात्मा स्वय भी समवसरण में देशना देने से पूर्व 'नमो तित्थस्स' कहकर सिहासन पर आरूढ होते हैं। यह अपना सघ कितना महान है सघ की आज्ञा मानना यह सबसे महत्वपूर्ण है।

(२) सार्धमिक भक्ति—

अपने सहधर्मी भाई या बहन किसी प्रकार भी दुखी हैं यदि हम ही हमारे सार्धमिक का ख्याल नहीं करेंगे तो कौन करेगा ? हम अपनी आय का अमुक निश्चित प्रतिशत हमारे दुखी सार्धमिक के उद्धार के लिये खर्च करें उनके विकास को अग्रता दें।

(३) तीर्थ यात्रा—

तीर्थ यानी घाट उस पार जाने के लिए नौका। वैसे तीर्थ दो प्रकार के बतलाये गये हैं—स्थावर एवम् जगम। स्थावर तीर्थों की उपासना मे शत्रु जय, गिरनार, सम्मेत शिखर, शखेश्वर, अतरिक्ष, पावापुरी, जैसलमेर आदि पवित्र जगह पर बने हुये विशाल जिन मन्दिरो की यात्रा करना बतलाया और जगम तीर्थ की उपासना माने साधु—साध्वी वगैरह की सेवा भक्ति, सत्समागम वगैर के दर्शन द्वारा आत्मा को निर्मल बनाना। परमात्मा की भक्ति के लिये वर्ष मे एक बार अवश्य तीर्थ यात्रा करनी चाहिये।

(४) स्नात्र—महोत्सव—

कम से कम साल भर में एक बार जिन मन्दिर मे या अपने घर मे भव्य महोत्सव पूर्वक प्रभुजी का अभिषेक व स्नात्र पूजा करना चाहिये। देवलोक के इन्द्रदेव—देवियाँ जिस प्रकार मेरु पर्वत पर जाकर स्नात्र महोत्सव मनाते हैं। परमात्मा के अभिषेक करने से अपनी आत्मा पर लगे हुए पाप कर्मों की धूल दूर हो जाती है। आत्मा स्वच्छ बनती है। परमात्मा के गीत गान नृत्य आदि भाव पूजा से जन्म जन्मांतर के पाप कर्म नष्ट हो जाते हैं।

(५) देव द्रव्य—वृद्धि—

मन्दिरों की व्यवस्था सुन्दर व सही ढग से चले, जिन मन्दिरों के निर्माण तथा जिन मूर्ति के निर्माण हों, पुनरुद्धार हो तथा देव द्रव्य की वृद्धि करना श्रावक के नाते अपना परम कतव्य है। जीर्ण-शीर्ण जिन मन्दिरो के पुनरुद्धार का काय भी जरूरी है।

(६) महा पूजा—

साल मे कोई महा पूजा जैसे, शाति स्नात्र, अष्टोत्तरी, सिद्ध चक्र आदि महापूजन, अठारह अभिषेक आदि महापूजाओं का आयोजन करना चाहिये। पूजा एव महापूजा मे शुद्धि का ख्याल बडी सतर्कता से रखना चाहिये।

(७) रात्रि जागरण—

देखिये शब्द कितना महत्वपूर्ण है रात्रि जागरण—परमात्मा की रात्री मे भक्ति करना। उनकी स्तवना गीत गान नृत्य वगैरहा के द्वारा उपासना

करना। अनन्त अनन्त जन्मों से कुसंस्कार एवं विकारों और पापों के गहरे अंधकार में सोई आत्मा को जगाने के लिए रात्री जागरण किया जाता है।

(८) ज्ञान दान—

दुनिया में श्रेष्ट दान है अभयदान किन्तु उसमें भी श्रेष्ठ बन सकता है ज्ञान दान। ज्ञान का प्रचार करना—उसमें यथा शक्ति योग दान देना परम कर्तव्य है। बच्चों से लेकर बुजर्गों तक को सही ज्ञान सच्चा समझ मिले, उनके भीतर संस्कारों के फूल खिले, ऐसे शास्त्रों को लिखवाना, ऐसी किताबो को छपवाना, उन्हें वितरित करना, जन-जन तक उन्हें पहुंचाना यह हमारे संघ का महान सौभाग्य है।

इस वर्ष संघ के महान पुन्योदय से परम पूज्य मुनिराज श्री अरुण विजयजी महाराज साहब का चातुर्मास हो रहा है। आप श्री की प्रेरणा से जयपुर में चार महीने तक प्रत्येक रविवार को शिविर का आयोजन रखा है जिसमें काफी संख्या में स्त्री–पुरुष लाभ ले रहे हैं और हरेक रविवार के व्याख्यान की पुस्तकें छप कर तैयार हो रही है।

(९) उद्यापन—

अपनी कोई इच्छा पूरी होती है—कोई संकल्प पूरा होता है तो अपन खुशी मनाते हैं। त्याग–तप–एवम् परमात्मा की भक्ति को केन्द्र में रखते हुऐ उत्सव मनाया जाता है। विशेष रूप से ज्ञान, दर्शन, चरित्र में उपयोगी सामग्री मन्दिरजी में चँदवा पिछवाई वगैहरा दिये जाते हैं।

(१०) प्रभावना—

प्राणीमात्र को परमात्मा के बतलाये सम्यक् मार्ग को सफल बनाने जिन शासन की प्रभावना धर्म की प्रभावना कहा गया है।

(११) आलोचना—

भूलों की भूल-भुलैयों में भटकते—2 अपन कभी अपने आराध्य–उपास्य गुरुजनों के चरणों में बैठकर खुले मन से अपनी भूलों अथवा गलतियों की क्षमा माँगें प्रायश्चित करें। पापों का प्रायश्चित करने से मन हलका रहता है।

[ ]

'एक चिन्तन'

'अनतानत दुखो का अन्त केवल एक समकित द्वारा

❀ लेखक धनरुपमलजी नागौरी,
एम ए साहित्यरत्न, न्यायमध्यमा

जीव को ससार मे परिभ्रमण करते अनतकाल बीत गया लेकिन न तो भ्रमण का अत आया और न दु खो का। कारण स्पष्ट है कि इस अत की जो औषधि है, वह इसे प्राप्त नही हुई, और हुई भी हो तो उसका सही उपयोग नहीं हुआ। अन्यथा ऐसी स्थिति नही बनी रहती।

कहते हैं कि गुणो के विकास मे सवप्रथम दशन गुण का विकास होता है। जहाँ सम्यग्दशन नही, वहा सम्यग्ज्ञान हो ही नही सकता, और ज्ञान विना चारित्र के महाव्रतादि गुण नही हो सकते। इस प्रकार निर्गुणी को मोक्ष नही हो सकता और मोक्ष पद की प्राप्ति के बिना निर्वाण नहीं हो सकता। इसलिये जीव के ज्ञान-दर्शनादि गुणो का विकास ही आत्मा का विकास है।

जीव अनत गुणो का स्वामी है। वह अनत गुणो का भडार है, किन्तु केवल एक सम्यक्त्व गुण के विकास के अभाव मे उसकी स्थिति बडी विषम है। केवल एक सम्यक्त्व गुण का विकास हो जाय तो उस जीव मे स्थित अनन्त समाधिजन्य सुख की स्पष्ट प्रतीति हो जाय, और प्रतीति होने पर यत्किंचित अनुभूति भी हो जाय।

जीव के अनन्तगुणो मे से एक एक गुण के प्रगटीकरण मे अनतकाल के अनतानत दु खों का अत करने की शक्ति रही हुई है, फिर भी अफसोस कि इस जीवने अपने अनतानत परिभ्रमण काल मे एक असाता ही पाई है। जितनी असाता पाई, उस प्रमाण मे आंख के पलकारे जितनी भी साता नहीं पाई। अर्थात् असाता प्राप्ति का काल अनन्तगुणा रहा और परिणाम जो रहा वह तो प्रत्यक्ष ही है। ऐसी स्थिति मे समाधि की तो कल्पना करना ही व्यर्थ है।

चार गतियो मे से मनुष्य एव देवगति मे साता जन्य सुख होता है, किन्तु वह सुख असाता के मिश्रणवाला होता है। निगोद मे जितने कालतक जीवने असाता का सेवन किया उस काल के मुकाबले मे मनुष्य एव देव भव का काल नगण्य है। इसलिये उत्तराध्ययन सूत्र मे प्रभु ने फरमाया है कि—

सव्व भवेसु असाया वेयणा वेदिला मए।
निमेसतरमित्त पि ज साया नत्थि वेयणा॥

अर्थात् इस जीव ने अनत ससार के परिभ्रमण काल मे जो तीव्राति तीव्र वेदनाएँ तथा अनतानत दु खो को भोगा है, उनका अनुभव किया है, उनका वर्णन करने के लिये हमारे पास शब्द नही। इसलिये श्रीमद् कुदकुन्दाचार्य ने भी लिखा है कि "हे जीव! भयकर दु खमय नरक और तिर्यंच गति मे, कुदेव एव कुमनुष्य गति मे तू ने भयकर दु ख पाये हैं, असह्य वेदनाएँ उठाई है इसलिये अब तो तू तेरे स्वरूप की पहचान कर। भावना कर।" पर-द्रव्य और मिथ्यात्वादि पर भावो की भावना तो

तू अनंतकाल से करता आया है। परद्रव्य एवं परभाव में तो तूने सदा रुचि दिखाई। उसमें तो सदैव तू लिप्त रहा पौद्गलिक आनंद में तू आज तक सराबोर रहा। खोया खोया रहा। फलस्वरूप तेरे दुःख का अंत नहीं आया। इसलिये अब तो तू तेरे शुद्ध स्वरूप का भान कर। विचार कर। पहचान कर क्योंकि अपने शुद्ध स्वरूप को जाने बिना, और पहचाने बिना तेरे संसार का अंत कभी नही होगा। तूने चार गतियों में भ्रमण करते हुए जो दुःख एवं कष्ट पाये, उनका स्मरण करने मात्र से हृदय गद् गद् हो जाता है, छाती फटने लगती है।

अतः हे जीव ! यदि तू उन अनंत दुःखों से मुक्त होना चाहता है, तो तू अपने सम्यक्त्व गुण का विकास कर। इस एक गुण मे ही अनंत दुःखों का अंत करने की शक्ति है। इस एक गुण में अमोघ और अपूर्व ताकत है, जो अनंत दुःखों का अंत कर सकती है।

जब एक गुण में इतनी शक्ति है तो ज्ञान-चारित्रादि सम्मिलित गुणों की शक्ति का तो कहना ही क्या ? इसकी तो केवल मन में कल्पना ही की जा सकती है। अत. आत्मा को जो अनंत शक्ति का धणी कहते हैं, वह यथातथ्य है। इसमें किसी प्रकार का कोई संदेह नहीं।

सारांश यह कि सारे मनुष्य जीवन के काल में हम और कुछ न कर सकें तो इतना तो करें कि जिससे सम्यक्त्वगुण का विकास हो जाय ! गुण तो आत्मा में स्वयं में है। केवल आवश्यकता है उसके विकास की। इस गुण का विकास करने के लिये हम अपनी भावनाओं को दृढ़ बना लेवें, उनमें इतनी मजबूती ले आवें कि हमें ऐसा लगे कि सुदेव, सुगुरु और सुधर्म, सिवाय हमारी गति नही। इसके सिवा कोई तारक नही। अन्य की कल्पना करना भी मिथ्या है।

पर्व तो जीवन में न मालूम कितनी बार आये और गये और अब भी न मालूम कितनी बार आयेंगे और चले जायेंगे। लेकिन पर्व का आना तभी सार्थक होगा। जब हम 'स्व' को जानने का प्रयास करेंगे और पर से दूर रहेंगे। आजतक तो हम पर में यानि विभागदशा में रमते रहे पर समय में काल निर्गमन करते रहे, इसलिये विकासोन्मुख नही हो पाये। अतः अगर विकास की ओर बढना है तो स्वभाव और स्व समय मे रमण करें। इससे सम्यक्त्व गुण का विकास होगा और दुःखों का अन्त होगा। □

समर्पण

हे करुण सिन्धु !

मेरे पास जो कुछ है, वह आपका ही दिया दान है। इस पर अपने नाम को लेबल लगा कर मैंने आपके साथ द्रोह किया है……मेरी प्रत्येक चीज पर अपका अधिकार है। इसका उपयोग आपकी इच्छा के अनुसार करने लिए मैं बाध्य हूं। आपकी इच्छा के मुझसे सर्वस्व ले लेने की हो, तो भी कहिये, इसको मैं अर्पित कर देने के लिए तैयार हूं। जो आपका है और जिसे आपको अर्पित करना है उसमें मुझे इतना अधिक विचार क्या करना है ?

मुझे विश्वास है कि मै सुखी होऊं, यही आपका अभिनंदित है।

दुख भरा ससार

लेखक श्री राजमलजी सिघी

प्रत्येक प्राणी इस ससार मे अपने २ कर्मो के अनुसार चौरासी लाख जीव योनियो मे परिभ्रमण करता है और समस्त लोकाकाश मे जीव अनन्त वार जन्म मरण कर चुका है, यहा तक कि पूरे ससार मे सुई के आगे के भाग जितना क्षेत्र भी एसा नही ह जहा प्रत्येक जीव का जन्म मरण नही हुआ है। ससारी जीव चार गति मे अपते २ कर्मो के अनुसार भ्रमण करते हैं (1) नर्क (२) तिर्यंच (३) मनुष्य (४) देव।

(१) नर्क गति मे दुख

नर्क गति म सात विभाग हैं। पहले तीन नर्को मे उष्ण वेदना है, चौथे नर्क मे उष्ण एव शात दोनो प्रकार की वेदनाए हैं और पांचवी, छटी तथा सातवी नर्क म शीत वेदना है। इन सातो नर्कों मे जीव नाना प्रकार के दुख पाते हैं। वहा अनक छोट २ द्वारो मे से जीवो को इस प्रकार खीच कर निकाला जाता हैं जैसे किसी धातु का तार बनाने के लिए किसी मशीन मे डाल कर खीचा जाता है। जिस प्रकार धोबी कपडो को शिला पर पछाड कर धोता है उसी प्रकार प्राणी के हाथ पाव आदि पकडकर लोहे की काट की शिला पर पछाडा जाता है। तीक्षण भयकर करौती से लकडे की तरह चीरे जाते हैं। तिल की तरह घाणी म पीसे जाते ह। प्यास स पीडित जीवो को तप हुए शीशे जैसे गरम पानी वाली वैतरणी नदी म उतारा जाता हैं और वहाँ से वन मे ले जाया जाता है, जहाँ वृक्षो पर से भाले और तलवार जैसे पत्ते उन पर गिरते हैं जिससे उनको भयकर वेदना होती है। उन्हें लोह के कांटे वाले वृक्षो पर चढाया जाता है। उनको जन्म जन्मातर मे पर-स्त्री के साथ की हुई क्रीडा को याद दिलाने के लिए अत्यन्त गर्म लोहे की पूतली के साथ आलिगन कराया जाता है। मास लोलुपी जीवो को पूर्व भव की बात याद करवा कर उनके स्वय के अग का मास काटकर उनको खिलाया जाता है। मधु-पान के लोलुपी जीवो को तपा हुआ शीशा पिलाया जाता है। भुट्टे की तरह उन्हे सेका जाता है और उनके नेत्र पक्षियो द्वारा नोचे जाते हैं। अत्यन्त सोर गर्म और दुर्गन्ध वाली वैतरणी नदी के पानी से नारकी जीव व्याकुल होते हैं। उनके गले मे बडी शिला बांधकर वैतरणी नदी मे डुबाया जाता है, और वहा से निकालकर भयकर तपी हुई रेत मे उन्हें लेटाया जाता है, चने की तरह उन्हें भट्टी पर सेका जाता है, तार म पिरोकर मास की तरह उन्हें पकाया जाता है। इस प्रकार की वेदना मे नारकी जीव को ३३ सागरोपम तक का लम्बा काल बिताना पडता है।

(२) तिर्यच गति मे दुख—

(अ) तिर्यच गति के एकेन्द्रिय जीवो को दुख—

(क) पृथ्वीकाय को दुख पृथ्वीकाय के जीवो को हल आदि से चीरे जाते हैं घोडे हाथी

इत्यादि से दबते हैं, जल से खींचे जाते हैं, अग्नि से जलते हैं, कुमार इत्यादि द्वारा घड़े, ईंट इत्यादि के रूप में पकाए जाते है और दीवार में चुने जाते हैं। यह सब दुखमय हैं।

(ख) अपकाय को दुख–जल के रूप में जो जीव हैं वे सूर्य की किरणों से तपते हैं, ठंडे प्रभाव से वर्फ बनते है, पात्र में गरम किए ज ते हैं और पानी के रूप में पिए जाते हैं और इस प्रकार वेदना सहन करते हैं।

(ग) अग्निकाय के जीवों को दुख—पानी से बुझाए जाते है, तपे हुए लोहे के जीवों को घण और हथोड़ों से कूटा जाता है और ईंधन इत्यादि से जलाया जाता है। यह सब दुखमय है।

(घ) वायुकाय के जीवो को दुख—जोरदार हवा के झोंको, तूफान, आंधी, पंखे की जोरदार हवा इत्यादि से टकराकर दुखी होते है, शीत अथवा उष्ण वस्तुओं के योग में आकर बार २ विनाश होते हैं। सर्प इत्यादि वायु का भक्षण करते हैं।

(ङ) वनस्पति काय के जीवों को दुख—ये शस्त्रों से चाकू से काटे जाते हैं, अग्नि में पकाए जाते हैं, सुखाए जाते हैं, पीसे जाते हैं, खाए जाते हैं और इस प्रकार दुखी होते हैं।

(आ) बेइन्द्रिय जीवों को दुख—कृमि एवं कीड़े अन्न के साथ पिए जाते हैं, पैरों द्वारा दबाए और मारे जाते हैं, चिड़िया इत्यादि भक्षण करते हैं, शंख इत्यादि जीवों के ऊपर का मांस वाला भाग उखेड़ कर फेंका जाता है, पेट के कीड़ों को औषधि से नाश किया जाता है। यह सब दुख मय है।

(इ) तेइन्द्रिय जीवों को दुख—चींटी मकोड़े इत्यादि जीव पैर के नीचे, [illegible], और यहां तक कि झाड़ू के नीचे आकर भी दुखी होते हैं, और मरते हैं। [illegible] के नीचे भी दबते हैं, जूं, खटमल इत्यादि को गरम पानी और गरम जल से अथवा दवा से मारते हैं, धूप से पीडित किए जाते हैं और इस प्रकार दुख पाते हैं।

(ई) चतुरिन्द्रिय जीवों को दुख—मधु मक्खी या भंवरो को शहद निकालने के लिए आग के धुंए से दुखी कर उडाते हैं अथवा लकड़ी पत्थर मार कर भगाते है। पंखे इत्यादि से डास, मच्छर इत्यादि जीव ताडना पाते हैं और आजकल तो उनको पापी लोग फिलट इत्यादि से मारते हैं और मक्खियों को अन्य जीव भी खा जाते हैं।

(उ) पंचेन्द्रिय जीवों को दुख—पंचेन्द्रिय जीव तीन प्रकार के होते हैं—जलचर, थलचर और खेचर।

(i) जलचर जीव एक दूसरे को खाते हैं, मच्छीमार उनको पकडते है बगुले इत्यादि खाते हैं। पापी मनुष्य उनकी चमड़ी उतारते है, पकाकर खाते हैं, उनकी चरबी और तेल निकालते है।

(ii) स्थलचर—सिंह इत्यादि बलवान जीव मृग इत्यादि को मारते हैं और खाते हैं। पापी माँस लोलुपी मनुष्य उन्हें मार कर एवं पकाकर खाते है एवं क्रीड़ा मात्र के लिए निरपराधी जीवो को मारते हैं। भूख, प्यास, ठंड, धूप और अग्नि मार से चाबुक, लकड़ी, अंकुश इत्यादि से घोड़े, हाथी, बैल इत्यादि जीव वेदना सहन करते है।

(iii) खेचर—तीतर, तोता, कबूतर, चिड़िया इत्यादि जीवों को गिद्ध इत्यादि मांस-भक्षी जीव खाते है और पापी मनुष्य भी खेचर जीवों को मारते व खाते हैं।

एकेन्द्रिय जीव से लेकर पंचेन्द्रिय जीव (सिवाय नारकी जीव, मनुष्य और देव) सभी जीव तिर्यंच हैं और वे उपरोक्त प्रकार दुख पाते पाते हैं। इसे पानी, अग्नि और शस्त्रों का भय भी हर समय दुखी करता है।

अब मनुष्य और देवगति के दुखो का अवलोकन करें—

(३) मनुष्य गति में दुख—

मनुष्य अपने सुख के लिए धन, धान्य, घर-बार, पुत्र और परिवार को येनकेन प्रकारेण बढ़ाता है। और उसमे फसकर आत्म कल्याण नहीं कर पाता और मर कर नक और तियच गति के दुख पाता है। मनुष्य को एकेंद्रिय जीवो की यतना करनी चाहिए और बेइंद्रिय से लगाकर पचेंद्रिय जीवों की रक्षा करनी चाहिए जिससे चारो गतियों से मुक्ति पाकर मोक्ष गति पावे। अब प्रश्न यह उठता है कि देवता मनुष्य जन्म चाहते हैं और मनुष्य देव गति के सुख को सुनकर देवगति चाहते हैं तो फिर मनुष्य गति और देव गति से मुक्त होन की क्या आवश्यकता है। शास्त्र कार कहते है मनुष्य गति और देवगति दुख मिश्रित हैं अत हेय है और मोक्ष गति मे कोई दुख नहीं है अत मोक्ष गति प्राप्त करने योग्य है।

मनुष्य गति मे जन्म, रोग, बुढापा और मरण के दुख हैं। घोर नर्क में वास जैसा दुख गर्भवास में है। अग्नि से तपी हुई लाल सुई को सुकुमार शरीर वाले पुरुष के रुए रुए मे चुभ ई जाय उससे भी आठ गुना दुख गर्भावास मे होता है। गर्भवास में से निकलते समय जो दुख प्राणी को होना है, वह दुख गर्भवास के दुख से भी अनन्त गुणा होना है और जन्म से भी अनन्त गुणा दुख मरण के समय होता है। जन्म के बाद किसी मनुष्य को मानसिक किसी को शारीरिक दुख होना है, किसी को धन का दुख, धन मिला तो पुत्र का दुख, पुत्र मिला तो उसके पोषण का दुख इत्यादि दुख की परम्परा चलती ही रहती है। रक मे राजा तक कोई सुखी नहीं। लाखो और करोड़ो रुपयो के स्वामी होने पर भी मनुष्य आधि, व्याधि और उपाधि से ग्रसित होता है।

(४) देवगति मे दुख—

ऋद्धि वाले बड़े देवो को देखकर छोटे देव ईर्ष्या करते हैं और दुखी होते हैं। देवो मे क्रोध, लोभ, मान, माया होते हैं जिसके कारण वे लड़ते और दुखी होते ह। देवो के आयुष्य पूर्ण होने के ६ माह पूर्व से वे अधिक दुख पाने लगते हैं क्योंकि उन्हें मालुम हो जाता है कि वे देवगति की ऋद्धि देवागनाए और विमान आदि को छोड़ कर अशुचि से भरपूर गर्भावास मे जाए गे। इस प्रकार देवगति म भी दुख है।

इस प्रकार चारो गति मे दुख ही दुख है। शास्त्र कारों न कहा है कि वीतराग भगवान के उपदेशानुसार यदि १८ पापस्थानो से दूर रहकर नए कर्मो का बधन न किया जाय और पूर्व सचित कर्मो को तप द्वारा जलाया जाय तो ईन चारो दुख-पूर्ण गतिया से छुटकारा मिल सकता है और मोक्ष का पूर्ण-सुख प्राप्त हो सकता है। □

मनुष्य भव का महत्व एवं विशुद्ध धर्म की आराधना

लेखक : श्री मनोहरमलजी लुनावत

यह ध्रुव सत्य है कि हमारे प्रबल पूर्वोजित पुण्य के अनुसार हमें मनुष्य भव मिला है। धर्म शास्त्रों में स्थान स्थान पर मनुष्य भव की विशेषताये बतलाई गई है जिसका हम उचित रूप से उपयोग करें तो हमारी स्वयं की आत्मा भी परमात्मा बन सकती है। आत्मा की यह शक्ति केवल मनुष्य भव में ही पूर्णतया विकसित हुई है क्योंकि धर्म-अधर्म, पुण्य पाप, जीव अजीव, और कर्तव्य अकर्तव्य का विवेक जितना मनुष्य में होता है उतना अन्य प्राणियो में नही होता।

यद्यपि पवित्रता की दृष्टि से, शारीरिक शक्ति की दृष्टि से और उपयोगिता की दृष्टि से अन्य प्राणियों के मुकाबले मानव शरीर का कोई महत्व नही है लेकिन आत्मा की शक्ति ही वह तत्त्व है जो जो उसे अलौकिक महत्व प्रदान करता है। कर्मों की गुलामी के बन्धनों को तोड फेंकने की जो शक्ति मानवीय आत्मा में है वह अन्य में नही है। देवलोक के देवताओं में भी वह शक्ति नही है। उन्हें भी मानव भव में आना पड़ता है, तभी तो मोक्ष की प्राप्ति कर सकते है। हम लोगों को यद्यपि आज यह दुर्लभ मानव भव मिल चुका है परन्तु आज का मानव यह भूल चुका है। पुद्गल की गुलामी से मुक्त होने का जो यह अवसर मिला है परन्तु वह अधिकाधिक पुद्गलों का दास बनता जा रहा है। जो शरीर उसे [illegible], प्रभु की उपासना और धर्म की आराधना के लिए मिला है उस शरीर की ममता मे वह इतना आशक्त हो चुका है कि अपनी आत्मा को शरीर के यहां गिरवी रख देता है। शरीर को पुष्ट करने के लिये भक्ष्याभक्ष्य के विवेक को भूलकर वह मांस मदिरा का सेवन करता है और दिन रात पशुओं की तरह चरता रहता है। यही नही संसार की मोह माया में वह इतना लिप्त हो जाता है कि वह खाने पीने व मौज मजा करने में ही सब प्रकार का सुख मान लेता है।

उत्तराध्ययन सूत्र में भगवान महावीर स्वामी ने फरमाया है कि इस जन्म मरणरूपी संसार में प्राणियो को चार अंगों की प्राप्ति परम दुर्लभ है। सर्व प्रथम मनुष्य भव मिलना दुर्लभ है और उसके बाद वीतराग की वाणी से उपदिष्ट शास्त्रों का श्रवण होना परम दुर्लभ है। यही नही उससे भी दुर्लभ शास्त्रोक्त तत्वों पर श्रद्धा रखना और सबसे बड़ा महत्व का दुर्लभ कार्य अपना जीवन संयममय बना देने मे अपनी आत्मीय शक्ति को लगा देना है। जो लोग दुर्लभ मनुष्य जन्म प्राप्त करके धर्माकरणी मे यथाशक्ति उद्यमशील रहते है वे ही स्वयं के मानव जन्म को सफल बना सकते है।

धर्म का शुद्ध स्वरूप [illegible] श्री तीर्थंकर भगवान, गणधर भगवान, आचार्य भगवान एवं [illegible] और [illegible] धर्म [illegible] है [illegible]

सक्ते हैं और उसके परिणामस्वरूप वे उसी भव मे सब कर्मों को क्षय कर मोक्ष पद को प्राप्त करते हैं। ससार के सभी कोई जीवो को इस प्रकार की अद्भुत सामर्थ्य प्रगट नही होती फिर भी वे स्वय की शक्ति मुजब विशुद्ध धर्म की आराधना मे लगे रहते हैं, जिसके परिणामस्वरूप वे भी अल्प भव मे इस ससार के बधन से मुक्त होकर मोक्ष सुख प्राप्त कर सकते हैं। अत हमे इस ओर प्रयत्न करना चाहिये। विशुद्ध धर्म चाहे थोडा ही हो पर वह अग्नि के कण सदृश्य होता है। जिस प्रकार अग्नि का एक कण से लाखों मण लकडी जला देने की शक्ति है उसी प्रकार विशुद्ध एक छोटे से धर्म मे भी अनेक भवसचित कर्मों को क्षय करने की ताकत रहती है। परन्तु इसके लिये आत्मार्थी को विशुद्ध धर्म के प्रकार, उनके स्वरूप और प्रत्येक धर्म के मूल मे कैसी भावना होनी चाहिये इसका ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता है।

वास्तव मे तो वस्तु का स्वभाव ही धर्म है। आत्मा वस्तु है और ज्ञान दर्शन और चारित्र इसका स्वभाव है। आत्मा के यह विशुद्ध स्वभाव जिस—जिस उपाय से प्रगट होते हैं ये सब प्रकार ही धर्म स्वरूप हैं। इस प्रकार दान, शील, तप और भाव ये चार धर्म के मुख्य प्रकार हैं। इन चारो मे भी भाव धर्म यह उत्तम प्रकार है। परन्तु शुभ क्रिया के पालन के बिना सच्चा भाव प्रगट ही नही हो सकता इसलिए दान, शील और तप आदि अनु—ष्ठानों की भी जीवन मे उतनी ही जरूरत पडती है। इसमे किसी की भी उपेक्षा नहीं की जा सकती। दान, धर्म का आचरण जहा परिग्रह सज्ञा का कम करने के लिये होता है। शील धर्म का पालन अनादि विषयक सज्ञा ऊपर काबू प्राप्त करने के लिये होता है। तप धर्म का आचरण आहार सज्ञा ऊपर विजय प्राप्त करने तथा अणाहारी पद की प्राप्ति के लिये होना है।

दान, शील और तप आदि प्रत्येक धर्म अनु-ष्ठान की मूल म मैत्री प्रमोद, करुणा एव मध्यस्थ भावो की परम आवश्यकता है। ये चार भावनायें जीवन मे जस जसे विकास प्राप्त करती रहती हैं वैसे वैसे आत्मा म रही हुई योग्यता एव उत्तमता प्रगट होती रहती है।

हमे अनत पुण्य के सयोग मे मनुष्य भव प्राप्त हुआ है। अत हमे उपरोक्त वर्णित शुद्ध धर्म का आचरण करना चाहिये जिससे हमारा यह भव और आने वाला भव सुधर सके। ☐

दोष दृष्टि

कभी जिसके गुण गाते हुए तुम थकते न थे, आज गुण गाना ब द कर उसी के दोष बतलाना, क्यो शुरू कर दिया? भाग्यशाली। किसी भी चेतनजीव के दोष देखने की कुटेव छोडदो। दोष देखोगे तो आत्मा को नही देख सकते

दूसरा जो एक भारी नुकसान होगा, उसका भी तुमको ध्यान है? दूसरो के दोष देखने से ये दोष तुममे भी आजायेंगे। और उन दोषो से तुम स्वय दु खी होओगे। तुम दोष इसलिये देखते हो, क्योंकि अन्तमन मे तुमको ये दोष अच्छे लगते हैं। जिसको जो वस्तु अच्छी लगती है, वह प्राय उसके पास आ जाती है। इसलिये दूसरो के दोष देखने की लत छोड दो।

अहिंसक रचना में श्रमणी समाज का योगदान

लेखक : श्री शुभकारी चन्द्रजी भण्डारी

आचारंग सूत्र में भगवान महावीर ने हिंसा को प्रधान स्थान देकर उसकी विस्तृत व्याख्या की है, और अहिंसा की सार्वभौमिकता का दर्शन कराया है।

संसार में जितने भी धर्म सम्प्रदाय है, उन सब ने अहिंसा को प्रधान स्थान दिया है।

भारतीय संस्कृति में "अहिंसा परमोधर्म का नाद आज भी गूंज रहा है।

पूर्ण सत्य की प्राप्ति भी अहिंसा रूपी साधन से ही हो सकती है।

समाज में जैसे-जैसे अहिंसा विकसित होती जायेगी, वैसे-वैसे समाज भी उन्नति के पथ पर अग्रसर होता जायेगा। आज के युग में यह माग है कि प्रत्येक समस्या का समाधान अहिंसात्मक पद्धति से ही हो।

अहिंसा मे निष्ठा, श्रद्धा और विश्वास रखने वाले तथा अहिंसा और सत्य को केन्द्र मे रखकर समाज निर्माण के लक्ष्य को लेकर चलने वाले क्या इस चुनौती को स्वीकार करने को तैयार है।

समाज एवं राष्ट्र निर्माण में सदा तीन शक्तियों का प्रभुत्व रहा है। मातृशक्ति, जन-सेवक शक्ति और संत शक्ति।

पारिवारिक जीवन को अहिंसा, सत्य और सुसंस्कारमय बनाने का दायित्व मातृशक्ति पर रहा है।

समाज की न्याय नीति और सत्य-निष्ठा में सुदृढ बनाये रखने का काम ब्राह्मण वर्ग एवं जन-सेवक करते आये हैं। राष्ट्र मे संस्कृति-सभ्यता एवं धर्म रक्षा का काम साधु-संत वर्ग करता रहा है। आज तीनों शक्तियों में शैथिल्य आ जाने से समाज विविध रोगों से ग्रस्त हो गया है।

नारी जाति समाज का एक प्रमुख अंग होने से समाज निर्माण में उसकी प्रधानता सहज हैं।

नारी जाति एवं मातृशक्ति के उत्थान के बिना समाज निर्माण का काम अपूर्ण ही रहेगा। समाज निर्माण की अधारशिला परिवार है, और पारिवारिक जीवन की आधारशिला नारी है। इसलिए भारतीय ऋषियों ने प्रथम सूत्र "मातृदेवो भव" को दिया है। फिर भी शताब्दियों से नारी समाज अविकसित रहा है। आज इसकी ओर ध्यान देकर उसके समुचित विकास के लिए सुव्यवस्थित कार्यक्रम बनाना हमारा कर्त्तव्य हो जाता है। भगवान महावीर ने नारी जाति के लिए मोक्ष के द्वार खोल दिये हैं।

स्वयं सन्यास लेकर आपने संघ में उनको समान स्थान दिया था। स्त्री-पुरुष का भेद भगवान महावीर की दृष्टि मे तनिक भी नहीं था। इसलिए भगवान महावीर के संघ में श्रमणो की संख्या चौदह हजार थी और श्रमणों की संख्या छत्तीस हजार थी थी। श्रमणोपासक की संख्या एक लाख

६८ हजार की थी और श्रमणोपासिका की सख्या तीन लाख १८ हजार थी।

इससे यह विदित होता है कि श्रमण और श्रमणो पासकों की अपेक्षा बहुत बडी सख्या म श्रमणी-समाज और श्रमणोपासिका समाज अहिंसक समाज रचना के विशाल काय में जुटा हुआ था।

राजनैतिक क्षेत्र मे महात्मा गाधी ने अहिंसा का जो अभूतपूव प्रयोग किया उससे अहिंसा का विश्व मे अत्याधिक महत्व बढ गया है और अहिंसक समाज रचना के प्रयोग की भूमिका तैयार हो गई है।

ऐसे समय मे यदि हमारा श्रमणी समाज अहिंसा के प्रचार-प्रसार एव अहिंसक प्रयागात्मक काय मे जुट जाता है तो एक अस्तित्व की उपयोगिता सिद्ध करता हुआ महद्कार्य के निर्माण का यशोभागी भी बनेगा।

आवश्यकता है आज श्रमणी-वर्ग को प्रेरित करने वालो की। युग दर्शिनी बनकर स्वय आगे बढ़ने वाली साध्वीयों की।

आचाय विनोबा भावे की प्रेरणा पाकर चार बहिनें बारह वर्ष का व्रत लेकर भारत के सभी प्रान्तो मे ब्रह्म विद्या का प्रचार एव नारी जाति का उत्थान जैसे लक्ष्य को लेकर भ्रमण कर रही हैं, तो पाच हजार जसी विशाल सख्या वाली भगवान महावीर का श्रमणी-समाज आज क्या कुछ नही कर सकता? सब कुछ कर सकता है। अहिंसक समाज रचना के विविध प्रयोगो एव कार्यों मे अधिक योगदान कर सकता है। ☐

बेढगा ससार

अनन्त काल को दृष्टि के सामने रखकर यदि तुम स्नेही सम्बन्धियो को देखोगे तो तुम्हारे हृदय मे राग-द्वेष की मात्रा प्राय घट जायेगी।

किसी जीव के साथ कौनसा सम्बन्ध नहीं पाया, लेकिन कौनसा सम्बन्ध आज कायम रहा? न तो मित्रो का सम्बन्ध कायम रहा न शत्रुओ का।

एक समय का शत्रु मित्र बन जाता है और मित्र मर कर शत्रु बन जाता है। माता मर कर पुत्री हो जाती है और पुत्री मर कर माता। पत्नी मर कर पुत्री बनती है और पुत्री मर कर पत्नी। ऐसे विचित्र सम्बन्धो वाले ससार मे किसके प्रति राग करना और किसके प्रति द्वेष करना? एकाग्र चित्त से ससार के स्वरूप का विचार करो।

'प्रायश्चित'

लेखक—श्री सुरेश मनसुखलालजी मेहता

१. धर्म-आराधना करते करते कोई स्खलना हो जाये, कोई भूल हो जाय तो पूज्य गुरुदेव के समक्ष निवेदन करना चाहिये, जिस प्रकार, जिस समय, जिस भाव से गलती हुई हो—उसी प्रकार करना चाहिये, इसको "आलोचना" कहते है।

२. "मैं कितना प्रमादी हूं ? मैं कितना अज्ञानी हूं ? कि मैने ऐसी गलती कर दी अब मैं जाग्रत रहूंगा, फिर से ऐसी गलती नही करूंगा......" इस प्रकार पाश्चाताप करता मनुष्य यदि गुरुदेव के सामने आलोचना करता है तो उसकी आत्मा निर्मल बन जाती हे।

३. "मेरे परमात्मा जिनेश्वरदेव की आज्ञा है कि जीवन मे जानते-अनजानते कोई पाप हो जाय तो निर्मल-निष्कपट हृदय से आलोचना कर गुरुदेव से प्रायश्चित लेना चाहिये" मैं परमात्मा की इस आज्ञा का पालन करूंगा।

४. सद्गुरु के सामने अपनी गलतियां तथा अपने पाप प्रकट करने से अपना भार कम पड़ता है, अपना मन स्वस्थ बन जाता है, कर्मों का बन्धन ढीला पड़ जाता है।

५. पाप छिपाना माया है, माया से स्त्रीवेद-कर्म और नपुंसकवेद-कर्म बंधता है। अतः सद्गुरु से कभी अपने पाप छिपाना नही।

६. अपने पाप-अपनी गलतियां सद्गुरु को कहने से वे अपने को बुरे नहीं समझते, पापी नही समझते वे अपने को धर्मात्मा समझते हैं और अपनी तरफ उनकी कृपा दृष्टि बनती है।

७. जब मनुष्य सरल हृदय से अपने पापो की आलोचना गुरुदेव के समक्ष करता है तब गुरुदेव उसको शास्त्रानुसार प्रायश्चित देते हैं। जो प्रायश्चित मिले उसे पूरा करना चाहिये।

८. सरल हृदय से प्रायश्चित करने वाली आत्मा सरलता से कर्मबंधन तोड़ती है और आसानी से भवसागर पार कर जाती है।

९. हे जीव ! तू अभिमान का त्याग कर, मान-पर्वत से नीचे उतर और अपने पापों का प्रकटीकरण कर आत्मभाव निर्मल कर।

१०. प्रतिदिन सोचो कि "आज मेरे से कोई पाप नहीं हुआ है न ? दोष तो नहीं लगा है न ?

卐

'सामयिक धर्म'

(परम पूज्य आचार्य कलापूर्ण सूरीश्वरजी म. के पुस्तक से उद्कृत)

प्रस्तुति–सुरेशकुमार मेहता

दूसरे सब जीव मेरे स्वय के जैसे जीव हैं। मेरे स्वय के जैसे ही सुख-दु ख का अनुभव करते है (Similarity of Substance) सब जीव सुख की कामना करते हैं। सब जीवो का अन्तिम ध्येय "सुख" है - (Sameness of Purpose)। इस की अवगणना करना यही मिथ्यात्व की भूमिका है। यह गाढ अन्धकार है। सब जीवो के प्रति समान भाव रखना—यही सम्यक्त्व रूपी सूय का उज्जवल प्रकाश है।

सब जीवो के प्रति हित भाव यह सामायिक धम का पाया है। सामायिक धर्म की समता जीव-मात्र के प्रति उपेक्षा रूप नही है। सामायिक धर्म की समता निष्क्रय रूप नही, सामायिक धम की समता निषेधात्मक नहीं। अनादि भव भ्रमण ने अनेक बार सब जीवा की उपक्षा की है। अनेक बार निष्क्रय पणा धारा है, अनेक बार मात्र निषेत्मक व्यवहार आचरण म लिया है।

सबको सुख मिलो और सबके दु ख टलो सबका हित होवे और अहित टले, ये विचार आज तक अ तर से जीव ने कभी किया नही, जो किया हाता तो इसका भव भ्रमण होता नहीं, कारण कि इस विचार मे अनत विपयाभिलाप के निवारण की सामथ्य है। अननानुबधी कपायों के रोकने का बल है।

अत्य त प्रमाद और अत्यन्त अशुभ योगो को नही आने देने की शक्ति है।

अपने उपकारियो को याद करो, अपकारिया भूल जाओ। उपकार करना छोड दो अपकारिया के प्रति भी उदार बनो।

अपकारियो को नही भूलने से और उपका रियो को भूलने से ही दु खी होने का माग प्रशस्त होता है।

अपकारियो को भूलने मे और उपकारियो को नहीं भूलने से ही सुखी बनने का माग प्रशस्त होता है।

जीव मात्र के हित का सकल्प करने मे कजूसी मत करो अपने हित का यह राज-मार्ग है।

दु खी नही चाहते तो दु ख देना बन्द करो। सुख चाहिये तो सुख देना शुरू करो।

दु ख देने वाले को भूलो, देने वाले को सदा याद रखो आज तक कितनो को दु ख दिया है यह याद करो।

आज तक कितनो से सुख प्राप्त किया है यह याद करो।

विश्व मे कोई भी जीव दु खी न हो ये भावना दूसरो को दिये हुये दु ख का प्रायश्चित है।

विश्व के सब जीव सुखी होवें यह भावना प्राप्त किये हुये सुख के ऋण से मुक्त हाने की कुन्जी है।

विश्व के सब जीव सुखी होवें यह भावना प्राप्त किये हुये सुख के ऋण से मुक्त होने की कुन्जी है। □

'राजपुत चन्द्रचूड'

श्री माणकचन्दजी कोचर

इसी भरत क्षेत्र में चम्पावति नाम की विशाल नगरी थी। उस नगरी में चन्द्रशैन नाम का राजा राज्य करता था। वह न्याय प्रिय, दान प्रिय व जैन धर्म का उपासक था। उसके राज्य की सीमाएं दूर-दूर तक फैली हुई थी। नगरी में सैकड़ों जैन जिनालय थे। चन्द्रशैन का एक निजी जिनालय था। उसके अन्दर पार्श्वनाथ भगवान की स्वर्ण प्रतिमा थी। चन्द्रशैन प्रायः वहीं स्वाध्याय करता था। प्रजा काफी सुखी थी। इतना होने के उपरान्त राजा के कोई औलाद नही थी। एक दफा उस नगरी में मणी शूरी नाम के जैन मुनि पधारे। राजा ने उनके सामने अपना दुख प्रकट किया। साधु मणी शुरी ने राजा को पद्मावति देवी का जाप करने को कहा।

समय का चक्र चलता रहा। समय आने पर रानी कनकवति ने एक पुत्र को जन्म दिया। पूरे राज्य में खुशीयाँ मनायी गयी मुहरत देख कर राजा ने राज ज्योतषी से जन्म कुण्डली बनवाई कुण्डली देख कर राजा भौचक्का हो गया। कहने लगा राज ज्योतषी जी ये क्या पूरी जिन्दगी निकल जाने पर एक पुत्र वो भी ऐसे नीच गृह वाला। ज्योतषी ने कहा महाराजा इसमें मेरा कसूर नहीं है। जो लेख विधाता ने लिखे हैं। उसके आगे मेरा कुछ भी नहीं है। मैं थोड़ा बहुत [illegible] कर सकता हूँ। पर होनी—अनहोनी है। उसका मैं भी क्या कर सकता हूँ। महाराजा इसको १६–१७ वर्ष के बाद सात (७) साल की बहुत ही खतरनाक शनि की दशा लगने वाली है। उसमें आपका शासन भी डगमगा सकता है। काफी वार्तालाप के बाद ज्योतिषी जी अपने घर चले गये।

समय का चक्र चलता रहा राज कुमार १६ वर्ष का हो गया। पर विद्या प्राप्त नही कर सका। नितनयी खराब सोबत में पडने लगा। वह रोजाना वैश्याओं के यहाँ जाने लगा। और एक वैश्या के यहाँ ही डेरा डाल दिया। दो-तीन वर्ष तक घर पर भी नहीं आया। इसी बीच चम्पावति नगरी पर पडौसी राज्य ने हमला कर दिया चन्द्रशेन व रानी को बन्दी बना लिया गया। तथा राज खजाने को बुरी तरह लूटा। कई जैन जिनालय को भी तोड़ डाला। चन्द्रशेन का नीजी जिनालय उसमें करोड़ों के हीरे मोती सोने चान्दी को जी भर के लूटा। और पार्श्वनाथ की प्रतिमा को एक तालाब में डाल दिया। यह शत्रु राजा जैन धर्म का कट्टर दुश्मन था। राजारानी व परिवार को कारावास में डाल दिया। समय आने पर उस वैश्या ने राजपुत्र (चन्द्रचूड) को भी धक्का देकर बाहर निकाल दिया। क्योंकि चन्द्र-चूड भी कंगाल हो गया था। इसलिये [illegible] अपना खेल दिखाने बाद [illegible] हो गई। चन्द्रचूड की बड़ी हालत खस्ता हो गयी।

चम्पावति नगरी पर शत्रु राजा का शासन था। चन्द्रचुड इस नगरी को छोड कर दुसरे राज्य मे चल दिया। श्याम का समय आ। विरान जगल था। जगली जानवरो का भय था। इसी बीच एक जगली जानवर चन्द्रचुड की तरफ खाने को दौडा। चन्द्रचुड मोका देख कर समीप ही विशाल वट वृक्ष पर चढ गया। रात भर डर के मारे उसे भूख प्यास के मारे नींद नही आयी। रात भर उसी वृक्ष पर एक डाल पर बैठा था। क्या देखता है। एक वृक्ष के खोखने मे एक वस्तु नजर आयी। उसको आश्चय हुआ। उसने जल्दी से उस वस्तु को ले लीया। वह समझ नही सका। कि यह क्या है। और अपनी धोती मे बाँध लिया। सुबह होने पर वह नीचे उतरा और अपने कदम बढाने लगा। काफी चलने पर एक ढोंगी साधु उसे मिला। उसने चन्द्रचुड से पुछा तुम्हें कहाँ जाना है ? तो चन्द्रचुड ने कहा मैं किसी काम की तलाश मे जा रहा हू। उस ढोंगी साधु ने भी यही कहा मैं भी किसी काम की तलाश मे जा रहा हू। दो साथ २ चलने लगे। और रास्ते मे कन्दमून खाके अपना समय व्यतीत किया समय गरमी का था। चन्द्रचुड को नीद्रा आने लगी। और वह एक वृक्ष की छाया मे सो गया साथ मे वो साधु भी सो गया पर साधु के मन मे कपट था। उसने सोते हुए चन्द्रचुड की धाती की गाठ मे से वो मणी निकाल ने लगा। तो चन्द्रचुड जग गया। चन्द्रचुड ने कहा ये क्या कर रहे हो। साधु ने कहा बच्चे ये नाग मणी है। तेरे मतलब की नही है। इससे तेरे को कोई फायदा नहीं है। चन्द्रचुड उस साधु से झगडने लगा। तब साधु ने अपने लोहे के चीमटे से उसको घायल कर दिया और साधु वहा से रवाना हो गया। चण्द्रचुड घण्टो ही बेहोशी हालत मे जगल मे पटा रहा। अचानक एक विशाल पक्षी उसको मरा हुआ देख कर नीचे उतरा और अपने पजो मे दबा कर आकाश मार्ग मे चला गया। काफी दूर उडने के बाद एक सून-सान जगह मे नीचे उतरा नीचे उतरते ही चन्द्रचुड ने आखे खोली तो वह पक्षी घबराकर आकाश में उड गया। चन्द्रचुड अजान जगह देखकर घबरा गया। और विपरीत दिशा मे चल पडा।

आगे चलने पर एक छोटे से गाव में प्रवश किया। चन्द्रचुड भूखा प्यासा एक सेठ की दुकान पर पहुँचा। चन्द्रचुड ने सेठ से कहा मैं काफी दिनो से भूखा हूँ। मुझे भोजन चाहिये। सेठ दयालु था। उसको खाना खिलाया। और उसको अपनी ही दुकान पर नौकर रख लिया। चन्द्रचुड घर का काम व दुकान का काम करता था। एक वर्ष बीत गया। इससे मुनीम को ईर्ष्या हो गयी कि कहीं ये मेरा पत्ता न काट देवे। ये देख मुनीम ने सेठ के कान भर दिये। और उस पर चोरी का इलजाम लगा के कारावास में बन्द करवा दिया।

चन्द्रचुड कारावास की सजा भुगत कर नई जगह जाने लगा। काफी दूर चलने पर वह एक वीरान खण्डरो मे पहुँचा। रात पडने वाली थी। तो चन्द्रचुड ने रात्री विश्राम के लिये एक खण्डर मे रुक गया। चन्द्रचुड को भूख की वजह से नींद नहीं आ रही थी। सो वह खण्डरो मे घूमने लगा। तो क्या देखता है। एक पत्थरो के ढेर मे कुछ वस्तु चमकती नजर आयी। तो चन्द्रचुड ने पत्थरो को हटा कर देखा कि एक पीतल का लोटा नजर आया। उसने खोल के देखा। उसमे स्वर्ण अशर्फिया भरी हुई थी। वह चुपचाप वहा से उस लोटे को लेकर अपनी जगह आ गया। और एक जगह छुपा दिया।

दूसरे दिन सुबह चन्द्रचुड उन अशर्फियो को लेकर किसी नगर मे गया और उसन

एक सेठ को बेंच दी । चन्द्रचुड़ ने हजारों रुपये लेकर व्यापार करने की सोची । और उसने थोक में किराने का सामान लेकर दूसरे नगर में वेचने के लिये जाने लगा । बीच में एक पानी की नदी बहती थी । वो चन्द्रचुड़ ने एक किराये की नाव ली । उसमें सारा सामान भर लिया । नाव चलने लगी । नाव अधिक बोझ न सहने कारण बीच मझधार में डूब गयी । चन्द्रचुड़ को तैरना नही आता था । तो वह भी पानी की तेज धार में वह गया । और वहते वहते नदी के किनारे पर आ गया और वह एक रस्सी लाकर एक ऊंचे वृक्ष पर चढ गया । वह गले में फन्दा डालकर ज्यों ही लटकने वाला था तो उसकी नजर सामने एक जैन मुनि पर पडी ।

मुनि विहार कर के आ रहे थे । मुनि की नजर चन्द्रचुड़ पर पडी तो मुनि ने हाथ के इशारे से उसको रोका और पास आके उसको नीचे उतरने को कहा चन्द्रचुड़ नीचे उतरा और मुनि को वन्दना करके उनके चरणों में बैठ गया । तब मुनि ने उससे पूछा हे मानव ! ये जिन्दगी बहुत अमूल्य है । तू इसे बेकार में ही क्यों खो रहा है विपदा तो बडे–बडे ऋषि मुनि व तीर्थंकरों मे आयी थी । इस का समाधान सच्चे मन से जिन प्रभु का ध्यान व उपवास आम्बिल व नमस्कार मन्त्र का जाप करने से सब विपदायें समाप्त हो जाती है । मुनि के काफी समझाने पर चन्द्रचुड़ को कुछ ज्ञान प्राप्त हुआ । और उधर मुनि के साथ उपाश्रय में आ गया । और शुद्ध मन से तपस्या करने लगा ।

एकाएक चम्पावती पर जिस शत्रु राजा ने कब्जा कर रखा था वह मर गया । मरने से जनता को बेहद खुशी हुई । और जनता में बगावत फैल गयी । इससे राज्य की बागडोर डगमगा गयी ।

उधर चन्द्रसेन अनुयाइयों ने चन्द्रसेन व कनकवती को कारावास से छुडा दिया । और चम्पावती के राजसिंहासन पर वापस चन्द्रसेन को विराजमान कर दिया । जनता में खुशी की लहर दौड गयी ।

समय आने पर उसी ने जैन मुनि चन्द्रचुड़ के साथ चम्पावति नगरी में चातुर्मास करने को प्रवेश किया । चन्द्रसेन ये खबर सुनकर अपने परिवार के साथ जैन मुनि के दर्शन करने को आया । चन्द्रसेन चन्द्रचुड़ को देखकर बडा आश्चर्य चकित हुआ । मुनि को देशना सुनने के बाद चन्द्रसेन ने मुनि से चन्द्रचुड़ के बारे में पूछा मुनि ने जितना वो जानते थे वो चन्द्रसेन को बताया । और चन्द्रचुड़ का पिछले जन्म के अशुभ कर्मों का दृष्टान्त सुनाया । चद्रसेन चन्द्रचुड़ को लेकर अपने महलों में आ गया । शुभ मुहूर्त देखकर चन्द्रचुड़ का राज्याभिषेक कर दिया और चन्द्रसेन व कनकवती ने दीक्षा अंगीकार कर ली । वह दोनों शुद्ध मन से साधुत्व पने को निभाते हुये देवलोक को प्राप्त हुये । □

आगरा, हिन्डौन, सावर, विजयनगर आदि में हुई प्रतिष्ठा महोत्सव का वर्णन

लेखक श्री रणजीतसिंहजी भण्डारी

(१) आगरा के समीप सेठ के बाग मे प्रसिद्ध गुरू मन्दिर की प्रतिष्ठा महोत्सव

यह ऐतिहासिक प्रसिद्ध है कि चम्पा श्राविका के छ. मासीतप की प्रभावना स्वरूप भारत के सम्राट अकबर ने प्रथम बार सम्वत् १६३६ में जैन शासन के महान् प्रभाविक आचार्य भगवन्त विजय हीर सूरिश्वर जी से प्रथम बार भेंट की और उनके उपदेश से प्रभावित होकर उनको अपना गुरु माना और उन्हें जगत गुरु की उपाधि से विभूषित किया। गुरु महाराज अपने शिष्य को सम्राट का उपदेश देने के लिये छोडकर गुजरात पधार गए। सम्वत् १६५३ में भादवा सुदी ११ के दिन गुरु महाराज ऊना मे स्वर्गवासी हुये यह समाचार सम्राट ने जब सुना कि जिस स्थान पर गुरु महाराज का दाह सस्कार किया गया उस स्थान पर बाऊ ग्राम के पेड पर तत्काल केरिया लगी और वही ग्राम की केरिया सम्राट को आगरा भेजी गई। गुरु महाराज के स्वर्ग गमन जानकर सम्राट अकबर को बहुत खेद हुआ। उसी समय गुरु महाराज का अस्थीकलश जो यहाँ आया था विराजमान करने हेतु आगरा के समीप बहुत बडी जमीन बाग लगाने हेतु सघ को अर्पण की।

इसी स्थान पर गुरु देव की छत्री थी। कालान्तर मे यह जिर्ण हो गई और यह स्थान विरान सा दिखने लगा। लगभग ४-५ वर्ष पूर्व इस स्थान पर जिर्णोद्धार हेतु खनन मुहूर्त व शिलास्थान श्री नटवर भाई बम्बई निवासी के कर कमलो द्वारा हुआ और गुरु मन्दिर निर्माण का कार्य चालू हुआ।

सवत् १६४३ मिती वैसाख कृष्णा १ शुक्रवार को सम्पूर्ण गुरु मन्दिर के निर्माण हो चुकने पर इसकी पुन प्रतिष्ठा हुई। इस समय यहाँ पर पूज्य आचार्यदेव कविकुल किरिट विजयलब्धी सूरीश्वरजी महाराज साहब के पट्ट प्रभावक आचार्य विजय भुवन तिलकसूरीश्वरजी महाराज सहाब के शिष्य रत्नपरम पूज्य आचार्य श्रीमद विजय भद्रकर सूरीजी, उपाध्याय श्री पूज्य विजय जी, पन्यास प्रवर विरसेन विजय जी आदि ढाणा ५ पधारे तथा उनके ही समुदाय की साध्वी श्री आतमप्रभा श्री जी आदि ढाणा ५ पधारे और चतुर्विध सघ की उपस्थिति मे यह भव्य गुरु समाधि मन्दिर मे चरण पादुका की प्रतिष्ठा खभात निवासी श्रीमती विमल बहन नटवरलाल शाह के कर कमलो द्वारा सउल्लास सम्पन्न हुई। आगरा सघ के आगेवान श्री मिलापचन्द जी जैन

का सहयोग प्रसंसनीय रहा है। इस समाधि मन्दिर का पूरा नक्शा अब देखने योग्य है। यह एक गोल सरोवर पर स्थित है और इसमें लाल पाषण का कमल बना हुआ है। इसी कमल पर अष्ट कोण संगमरमर का मन्दिर बना हुआ है। इस पर आज से लगभग ३८० वर्ष पूर्व की जैसलमेरी पीले पत्थर के चरण पादुका है जो विजयसिंह सूरीश्वर जी द्वारा प्रतिष्ठित है। इसके पास गुरु महाराज का एक पटचित्र विराजमान है इसके निर्माण में श्री कुमार पाल भाई शाह बम्बई निवासी की सूजबूझ है। इस बाग में चम्पा श्राविका आदि अन्य की समाधि भी है। इस महोत्सव को सफल बनाने में फतेहचन्द जी लोढी और किशनचन्द जी चोरडिया का सहयोग प्रशंसनीय है।

(2) आगरा नगर में श्री बासु पूज्य भगवान का लगभग ५०० वर्ष प्राचीन देरसरा की प्रतिष्ठा

आगरा में मोतीकटला में प्राचीन गोडी पार्श्व-नाथ भगवान के मन्दिर के निकट श्री वासु पूज्य भगवान का लगभग ५०० वर्ष प्राचीन मन्दिर था। उसका जीर्णोधार आगरा श्री संघ के प्रयत्न से हुआ गुरु समाधि मन्दिर के प्रतिष्ठा निमित पधारे हुये आचार्य देव करनाटक केसरी विजय भद्रकर सूरि जी महाराज सनिध्य में पधारे हुए उपाध्याय, श्री पूज्य विजयजी पन्यास प्रवर वीर सेन विजय जी आदि मुनि प्रवल, व साध्वी महाराज आत्म यशा श्री जी आदि चतुर्विध संघ की उपस्थित में पूज्य आचार्य देव के कर कमलों द्वारा सम्पन्न हुई। संघ ने इस अवसर पर स्वामी वास्तलय किया। पूजाएं पढ़ाई गई। इसमें श्रीमान हेमचन्द जी रायसुराणा तथा विमलचन्द जी चोरडिया का सहयोग तन मन धन से रहा है। यह प्रशंसनीय है। यहाँ पर भी मन्दिर बाहर में स्थान से जगद्गुरु हिर विजय सूरिश्वरजी की चरण पादुका विराजमान की गई।

(३) हिन्डौन (जिला सवाईमाधोपुर) अपूर्व धर्म प्रभावना

हिन्डौन (जगरोटी) पल्लीवाल समाज का बड़ा क्षेत्र है। इस क्षेत्र के आसपास में (सैकडों की) संख्या में पल्लीवाल समाज (पाली मारवाड़) से निकास होने से इस क्षेत्र में आकर बसे। इनका धन्धा खेती व व्यापार बोरगत का था। सर्वप्रथम इस क्षेत्र में पूज्य पन्यास प्रवर न्याय विजय जी राम विजयजी इस ओर अलवर से विहार करते हुए पटोदा (वर्तमान में श्री महावीर जी स्टेशन बड़ी लाईन बम्बई देहली के रास्ते में है) पधारे, पूज्य न्याय विजय जी ने इस क्षेत्र के लगभग २७ ग्रामो में विचरण कर धर्म प्रचार किया। उन्ही की प्रेरणा व प्रयास से पटौदा मे अन्जनशलाखा प्रतिष्ठा महोत्सव होकर प्रथम नूतन मंदिर तैयार हुआ। इसकी प्रेरणा को लेकर पूज्य न्याय विजय जी ने कलकत्ता चातु-र्मास हेतु पधारे। रास्ते में परम पूज्य तीर्थ प्रभावक आचार्य देव विजय जयन्त सूरिजी, परम पूज्य आचार्य देव श्री विजय विक्रम सूरिजी श्री विजय नवीन सूरिजी आदि का छरी पालित संघ राज-स्थान की ओर आता हुआ मिला।

पूज्य पं. न्याय विजय जी महाराज सहाब ने इस क्षेत्र के बारे में पूज्य आचार्य देव विजय विक्रम सूरिजी महाराज सहाब को अवगत कराया और इस क्षेत्र में धर्म प्रचार करने हेतु बताया। संघ महुवा में पल्ली वाल क्षेत्र के भाईयों से मिला और उन सब को योग्य करने को आश्वस्त किया। तभी से पूज्य पाद श्री विजय विक्रम सूरिजी ने साध्वी जी गुणोदया श्री जी आदि ठाणाओं को इस क्षेत्र मे प्रचारार्थ भेजा उनकी प्रेरणा व प्रथम प्रचार के बाद इस क्षेत्र में छोटे बड़े नूतन मन्दिरों का लगभग २५ ग्रामों में निर्माण हुआ और प्राचीन मन्दिरों का जीर्णोद्धार हुआ धर्म प्रभावना हुई पल्लिवाल का पारणा [illegible] का प्रारम्भ हुआ।

इसी क्षेत्र मे गत वैशाख शुक्ला ३ को परम पूज्य आचाय देव करनाटक केसरी विजय भद्रकर सूरिश्वरजी के कर कमलो द्वारा बाल मुनि श्री अक्षय सेन विजय जी की बडी दिक्षा सम्पन्न हुई इस क्षेत्र मे दिक्षा शब्द नया लगता था। इस शताब्दी मे पहली बार बडी दिक्षा का महोत्सव देखने हेतु हजारो नर नारी हिण्डौन आए। पूज्य बाल मुनि एक सम्पन्न परिवार के राजस्थान के मालवाडा के निवासी थे। ८ वप की लघु आयु मे सयम जीवन स्वीकारना बहुत महत्व का विषय है हम उनकी अनुमोदन करते हैं। आप पूज्य पन्यास प्रवर वीर सेन विजय जी के शिष्य घोषित किए गए। सघ का उत्साह प्रशसनीय था।

हिण्डौन मण्डी मे एक नूतन मन्दिर व विजय हिर सूरि जैन उपश्रय श्रीमान रजनी भाई श्रीमती शोभना बहन निवासी घलवाडा परिवार की ओर से निर्माण हुआ। यह मण्डी नई बसी है। व्यापार का अच्छा केन्द्र है। इसकी प्रतिष्ठा भी पूज्य आचाय देव करनाटक केसरी विजय भद्रकर सूरिजी महाराज के सानिध्य मे उनके कर कमलो द्वारा बडी धूमधाम से सम्पन्न हुई। उसमे पूज्य उपाध्यायजी श्री पुन्य विजय जी, प प्रवर श्री वीर सेन विजय जी, मुनिराज श्री विक्रम सेन विजय जी मुनिराज श्री अभयसेन विजय जी, व पूज्य साध्वी श्री आत्म प्रभा जी, एवम् पूज्य साध्वी जी श्री शुभोदया श्री आदि ११ ठाणो की उपस्थिति मे प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई।

दूसरा मन्दिर श्री श्रेयोसनाथ भगवान का जो हिण्डौन का प्राचीन देरासर लगभग ४०० वप पुराना उसका जीर्णोद्धार होकर इसकी प्रतिष्ठा भी श्री नरेश भाई कातीलाल लल्लू भाई सूरत वाले एवम् श्री रजनी भाई आदि बम्बई वालो ने कराई। इसम विशेष उल्लेखनीय यह है कि इसमे मूलनायक भगवान श्री श्रीयाननाथ स्वामी का एक पट्ट परिकर भी यहा विराजमान हुआ जिससे इस क्षेत्र मे यह प्रथम अरिहत बिम्ब वाला शिखरबँद्ध प्रसाद तैयार हुआ। इसकी प्रतिष्ठा भी पूज्य आचाय देव श्री विजय भद्रकर सूरिश्वरजी आदि व साध्वी श्री आदि के कर कमलो से सम्पन्न हुई।

इस क्षेत्र मे जो भी काय हुआ उस सबका श्रेय है बम्बई के श्री आनन्दजी कल्याणजी की पेढी श्री सखेश्वर भोयली तीथ पेढी आदि के अतिरिक्त श्री समाज के श्री नटवर भाई, श्री रामचद्र भाई का योगदान भी सराहनीय रहा है। हम उनके पूण उपकारी हैं।

वधमान तपोनिधी परम पूज्य आचाय देव श्री विजय भुवन भानू सूरिजी महाराज सहाब की प्रेरणा व आशीर्वाद से श्री वधमान सेवा केन्द्र के सुसचालक जैन रत्न सुश्रावक श्री कुमारपाल भाई विशाह के अथक परिश्रम व उचित मागदशन द्वारा यह कार्य सम्पन्न हुआ।

(४) सावर मे श्री कुथुनाथ भगवान के मन्दिर की प्रतिष्ठा

सावर (केकडी) (जिला अजमेर) के निकट लगभग ८० कि मी की दूरी पर स्थित है। प्राचीन सावर काल स्वभाव से पिछडा और इसी के निकट लगभग २ माईल पर फिर बसा। प्राचीन मन्दिर पुराने सावर मे था उसके स्थान पर बस्ती वाले स्थान पर नवीन मन्दिर श्री नरेश भाई सूरत वालो की आर्थिक सहायता से बना। इस मन्दिर की प्रतिष्ठा भी परम पूज्य आचाय देव करनाटक केसरी श्री विजय भद्रकर सूरिजी महाराज की आज्ञानुसार परम पूज्य प्रवतक श्री अरुण प्रभा विजय जी मुनिराज श्री महासेन विजय जी के कर कमलो द्वारा सम्पन्न हुई। उसमे परम पूज्य साध्वी जी श्री रविन्द्र श्री जी व देवन्द्रश्री जी महाराज सहाब की उपस्थिति मे श्रीमान् श्रेढीवर्य श्री नरेश भाई सूरत वाले वतमान मे बम्बई निवासी ने श्री कुथु-

नाथ भगवान के गुलाबी रंग की प्रतिमाजी को विराजमान किया। संघ का बहुत उत्साहवर्धक कार्य रहा।

(५) विजयनगर (जिला अजमेर) में प्रतिष्ठा महोत्सव में श्री संभव नाथ आदि जिन बिम्बों की प्रतिष्ठा

विजय नगर में महावीर बाजार में श्री चन्द्रा प्रभु का एक देरासर लगभग ५० वर्ष पूर्व का था। यहां भी कालान्तर में बहुत परिवर्तन आए। लगभग ४ वर्ष यहां पर प्रकाश भाई बम्बई वाले श्री कुमार पाल भाई की प्रेरणा से पधारे, यहाँ की जमीन की दृष्टिगत करके एक भव्य प्रशाद (शिखर बध) बनाने की इच्छा व्यक्त की और वह देरासर गगन चुम्बी शिखर बध तैयार हुआ, इसकी प्रतिष्ठा भी ११ जून १९८६ को परम पूज्य आचार्य देव, करनाटक केसरी पूज्य श्री विजय भद्रकर सूरिजी की आज्ञा एवम् आशीर्वाद से परम पूज्य प्रवर्तक श्री अरुण मुनी विजय जी पं. प्रं. श्री वीरसेन विजयजी मुनिराज श्री महासेन विजय जी, बाल मुनि अक्षय सेन विजय जी, पूज्य साध्वी श्री शुभोदया श्री आदि, ठाणा ३ साध्वी जी श्री रविन्द्र श्री देवेन्द्र श्री की उपस्थिति में खूब उल्लास से सम्पन्न हुई। इस अवसर पर रथ यात्रा का वरघोड़ा महाराज श्री का प्रवेश व बम्बई नगर से पधारे हुए लगभग २०० भाई बहिनों का स्वागत मुख्य रहा। इसके अतिरिक्त वहां के उपाश्रय के प्रांगण मे एक १४ छोडों का उजमाणा सेठ श्री राम चन्द्र भाई दोसी बम्बई निवासी की ओर से किया गया। यह इस क्षेत्र में पहली बार हुआ जिसमें दर्शन ज्ञान चारित्र के उपकरणो को बहुत अच्छे तरीके से सजाया गया था। वह दर्शको के लिए प्रेरणास्पद था। रोशनी भावना प्रभावना पूजाओं का आयोजन उत्साहवर्धक था।

(६) गुलाबपुरा में ध्वजारोहण व रथ-यात्रा महोत्सव

गुलाबपुरा जो विजय नगर से २ माईल पर है उसके मन्दिर की ५१वी वर्ष गांठ के अवसर पर नई ध्वजा चढाई गई। रथ यात्रा महोत्सव शहर के मुख्य बाजारों में होता हुआ मन्दिर पहुँचा। इस अवसर पर संघ की ओर से साधर्मी भक्ति थी। पूज्य प्रवर्तक जी व पूरा साध्वी मण्डल विजय नगर से यहाँ आया। विशेष मन्दिर जी मे संतिकर महापूजा साध्वीजी श्री रविन्द्र श्री जी देवन्द्र श्रीजी की प्रेरणा से पढ़ाई गई।

(७) शिखराणी श्री आदिश्वर भगवान के नूतन मन्दिर की प्रतिष्ठा उपाश्रय का उद्घाटन

विजय नगर से १० किलो मील पर शिखराणी ग्राम में नूतन देरासर की प्रतिष्ठा बम्बई निवासी श्री सेठ रजनी भाई व उनकी धर्म पत्नी श्रीमती शोभना बहिन व उनके परिवार की ओर से निर्माण हुआ। इसकी प्रतिष्ठा पूज्य आचार्य देव श्री भद्रकर सूरिजी की शुभ आशीर्वाद से पूज्य प्रवर्तक श्री अरुण प्रभा विजयजी व पु पं.प्र. श्री वीरसेन विजय जी मु. महासेन विजयजी बाल मुनि श्री अक्षय सेन विजय जी, पूज्य साध्वी श्री शुभोदया श्री जी आदि साध्वी रविन्द्रश्रीजी देवेन्द्र श्री जी पु. साध्वी श्री आदि साध्वी मण्डल की उपस्थिति में सम्पन्न हुई।

(८) देवलीया कला (अजमेर जिला) के मन्दिर व उपाश्रय का नव निर्माण श्रीमती शोभना बहिन आदि के परिवार ने कराया जिसकी प्रतिष्ठा साध्वी श्री मणिप्रभा श्री जी ने कराई।

(९) भिनाय (अजमेर जिला) के ८०० वर्ष प्राचीन जीर्ण २ मन्दिरों के स्थान पर दूसरा मन्दिर निर्माण करने हेतु श्री कुमार पाल भाई ने शिला स्थापित की।

(१०) सायला (अजमेर जिला) के प्राचीन मन्दिर जो जतीजी के कब्जे में था और उन्होंने उनकी मूर्तियो को इधर उधर कर दिया था। उनके स्थान पर पूज्य आचार्य भद्रकर सूरिजी की आज्ञानुवर्ती पर्व सक पूज्य अरुण प्रभा विजय जी व पन्यास प्रवर श्री वीरसेन विजयजी की निश्रा में श्री सिद्धाचल जी के पट्ट की प्रतिष्ठा कराई।

आप आप को भूल गये इनसे क्या अंधेर?

लखक प वीरसेन विजयजी गणि, हिन्डौन

मै कौन हू ? आय ऍम नथींग, यह धम का प्रवेश द्वार है। मै कुछ हूँ। आय ऍम समथिंग यह अभिमान का प्रवेश द्वार है।

"अह को डम्मी" शकराचाय ने इसे ब्रह्म-जिज्ञासा कही है। दुनिया का सबसे मीठा और छोटा स्वीट और शार्ट काव्य है। आनदघनजी महाराज भी यही कहते हैं—"आत्मज्ञानी श्रमण कहाये हैं शेष सभी द्रव्य लिंगी हैं।"

आज के आदमी ने सभी के साथ पहचान बढाई है, मिनिस्टरी के साथ, अफसरो के साथ स्वजनो के साथ, मवधिया के साथ, परिजनो के साथ लेकिन स्वय के साथ नही। स्वय की पहचान भूल गया है।" आप आपको भूल गये इमम क्या अधेर।

एक मजेदार कहानी पढी थी। दस मित्र मिल कर एक नदी में स्नान करने गये। स्नान किया बाहर आये। एक मित्र को सदेह हुआ, एक मित्र कम है। स्वय न गिनती की नव हुये, अन्य मित्र ने गिना तो भी नौ ही हुये। सबके चेहरे उतर गये, मायूसी भरे चेहरे लेकर चलने लगे। एक मित्र गोया इमका दुःख था।

रास्ते म एक समझदार आदमी ने पूछा—आप सब उदास क्यों हो? विषादग्रस्त क्यो हो?

जवाब दिया हम मित्र नदी में स्नान हेतु गये थे। तो एक मित्र खो गया क्या नाम है?

नाम मालुम नही। लेकिन हम दस थे और अभी नौ हैं। हम सबने गिनती की।

आदमी ने कह आप सब लाइन मे खडे हो जाओ, मैं गिनती करता हू उसने गिनती की तो दस थे। आपने कैसी गिनती की?

अहाहा! हम सबने जब-जब गिनती की तब तब स्वय को भुला दिया, गिनती मे गिना ही नहीं।

आप आत्मा को ही भूल जाते हैं। आत्मा की स्मृति आवश्यक है। उसको भूलकर की गयी सभी साधना, सभी उपासना, सभी आराधना "दूल्हे बिना बरात समान" है।

चार प्रकरण मे प्रथम जीवविचार इसके लिय रखा है, नव तत्व मे प्रथम जीवतत्व रखा है। स्थानाग मे प्रथम एगे आया कहकर आत्मा का याद किया है।

जो आत्मा को जान लेता है वह पूरी दुनियाँ को जान लेता है।

अध्यापक ने एक विद्यार्थी को एक चित्र के टुकडे दिये। वह चित्र था पूरी दुनियाँ का। अध्यापक ने कहा-इस चित्र को व्यवस्थित जोडकर लायें। हॉलैंड की जगह पोलैंड ना आने पाये। अमेरिका लगाये तो लका नही मिली। प्रयत्न करने के बावजूद भी दुनिया का नक्शा पूरा नहीं हुआ।

अकस्मात् उसकी नजर चित्र के पीछे गयी तो देखा कि वहाँ पर आदमी का चित्र है। उसने उस

आदमी का चित्र जोड़ा। जैसे ही आदमी का चित्र बना दूसरी ओर पूरी दुनियां का चित्र वन गया।

स्वयं को जाना, पूरी दुनियां को जान लिया, जीव को जान लिया तो जग को जान लिया।

"एगं जानई सो सव्वं जानई।"

एक कवि ने भी कहा है—

जब जान्यो निज रूप को, तब जान्यो सब लोक,
नहीं जान्यो निज रूपको, सब जान्यो सो फोक।

आत्मा की पहचान बहुत ही मूल्यवान है। चीटी स्वयं को चीटी समझती है, मकोड़ा स्वयं को मकोड़ा समझता है, मनुष्य स्वयं को मनुष्य ही समझे यह विशिष्टता नहीं हैं। विशिष्टता मैं आत्मा हूं यह समझे तो।

एक बार राष्ट्रपति राधाकृष्णन परदेश में प्रवचन देने गये। अनेक कॉलेज—यूनिवर्सिटी में लेक्चर दे रहे थे।

एक बार आत्मा विषयक प्रवचन दिया तभी विद्यार्थियों ने कहा-आत्मा को बताओ?

राधाकृष्णन ने कहा—बुद्धिमान होंगे तो आत्मा देख सकोगे। कैसे?

एक ओर आपकी बुद्धि रखो दूसरी ओर मेरी आत्मा रखूंगा। विद्यार्थी क्या बोले?

बुद्धि अपने कार्य से ज्ञात होती है। इसी प्रकार आत्मा अपने कार्य से ज्ञात होती है।

आत्मा का लक्षण आत्मा प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सिद्ध है। चैतन्य स्वरूप है, परिणामी कर्ता है, साक्षात् भोक्ता है, स्वदेह परिमाण है, प्रत्येक शरीर में भिन्न है, पौद्गलिक कर्मों से युक्त है। इस प्रकार का आत्मा का लक्षण प्रमाण नयतत्त्व लोकालंकार में बताया है।

निश्चयनय से आत्मा सिद्ध है, बुद्ध है, शुद्ध है निरंजन है, अजर है, अमर है, अक्षर है।

तिल में तेल, पुष्प में सुगंध, दूध में घी, अरणक के लकडे मे अग्नि रहती है इसी प्रकार शरीर में आत्मा रहती है।

विवेकानंदजी से एक युवक ने प्रश्न पूछा—आत्मा है? है।

विवेकानन्दजी ने कहा।

युवक ने कहा—बताइए! वह भी अभी की अभी बताइए।

विवेकानन्दजी ने समय सूचकता बताते हुए, हाथ से युवक के पेट पर हल्का सा प्रहार किया।

युवक जोर से चिल्लाने लगा—'पेइन' दुःख दुःख

विवेकानन्दजी ने कहा—दुख कहाँ है?

युवक ने पेट पर हाथ रखते हुये कहा यहां पर दुःखता है।

विवेकानन्दजी ने कहा—आप तो पेट बता रहे हो, दुःख तो दिखता नही है।

दुःख मै अनुभव कर रहा हूं—युवक ने कहा।

बस्! आत्मा भी अनुभूति का पदार्थ है, द्रव्य है।

युवक को आत्मा की सत्ता स्वीकारनी पड़ी।

आज तो हजार-हजार किस्से मिलते हैं जो पुनर्जन्म को कहते हैं। डॉ० बैनर्जी ने भी ऐसे अनेक किस्सों की खोज की है। सब जगह यह प्रसिद्ध हो गया-आत्मा है।

आज के अनेक वैज्ञानिक आत्म द्रव्य को मानने लगे हैं।

आत्मा का दर्शन ही सम्यग्-दर्शन है। आत्मा की उन्नति विषयक ज्ञान वही सम्यग् ज्ञान है। आत्मा की अहितकर प्रवृत्तियों को बन्द करना और हितकर प्रवृत्तियों में प्रवर्तमान करना वही सम्यग् चारित्र है।

घमचक्षु से नहीं नान चक्षु से

तु गीया नामक नगर था । परमात्मा के शासन को आत्मसात करने वाले श्रावक निवास करते थे।

गणधर भगवान श्री गौतमस्वामी ने जाना कि इस गाव के वयस्कर श्रावक भी अपनी आयु पाच छह-तीन साल बताते हैं। धर्म पाने के बाद की उम्र सही उम्र । शेष तो ससार की माया में "जल मथन के समान" निष्फल है, उसका हिसाब क्या रखना ?

इसी तु गीया नगर मे एक बार एक जोगी की एक श्रावक से भेंट हुयी। सन्यासी तो श्रावक को ऐसा वैसा बोलने लगा। ओ ! तेरा भ० महावीर प्रतिदिन आत्मा परलोक आदि की बात करते हैं और आप सब सिर झुकाकर 'हा जी' 'हा जी' करते हो। आपमें कोई अक्कल है कि नही ? श्रावक ने कहा-इसमे कोई असत्य बात तो है नहीं !

पूरी असत्य बात है, आत्मा जैसा कोई पदार्थ ही नही है। आत्मा का अस्तित्व नही है। यदि है तो बताइए कैसा है ? लबा है या छोटा है ? पतला है या मोटा है ? विराट है या वामन है ? आत्मा नजर से नहीं दिखती इसलिये नही है। आत्मा को ना तेरे पिता ने देखा, ना तेरे दादाजी ने देखा और ना ही सबधियो ने देखा। पूरी दुनिया मे किसी ने भी आत्मा को देखा नही, फिर क्यो मानते हो ?

श्रावक ने कहा रास्ते मे वाद विवाद करना अच्छा नही लगता। चलो किसी जगह पर बैठकर बातें करेंगे।

श्रावक आगे और सन्यासी पीछे चलने लगे। मोची (चमार) गली मे एक मोची की दुकान के बाहर लगी बेंच पर बैठ कर दोनो चर्चा का आरभ करने लगे।

इतने मे सन्यासी बोला कोई उद्यान, कोई बगीचा, कोई महल, कोई मकान नहीं मिला क्या ? जो इस मोची गली मे ले आये ? यहा तो कितनी दुर्गंध आ रही है, सिर फट रहा है।

श्रावक ने कहा-क्या दुर्गध। कहाँ है दुर्गध ?

अरे नाक तो फट रहा है और तू पूछ रहा है कहा है दुर्गध ? अरे भैया तू तो कैसा है ? नाक में कुछ कमी है क्या ?

किंतु दुर्गध दिखती कहा है ? दुर्गंध दिखती है क्या, बता ! पतली है या मोटी ? लबी है या छोटी ? दुनिया मे कौन ऐसा आदमी होगा, एक तो बताओ जिसने दुर्गंध देखी हो ?

भला आदमी। दुर्गंध क्या आख से दिखती है ? उसकी पहचान तो नाक से होती है।

भैया ! आपको मुझे यही समझाना है। अरूपी आत्मा क्या चर्मचक्षु से ज्ञात होती है ? कभी नहीं वह तो ज्ञानचक्षु से शास्त्रचक्षु से ज्ञात होगी।

अत शास्त्रज्ञान प्राप्त कर आत्म दर्शन करें।

जैन समाज के विवाद एवं एकता की ओर

लेखक : श्री भगवानदास पल्लीवाल, जयपुर

सम्पूर्ण भारत वर्ष में जैन समाज के करीबन ४०, ५० लाख व्यक्ति है। सम्पूर्ण जैन समाज मुख्यतः दो विचारधाराओं मे विभिक्त है।

(१) श्वेताम्बर विचारधारा

एवं

(२) दिगम्बर विचारधारा

श्वेताम्बर समाज में भी मुख्य रूप से तीन आमनाये है।

(i) स्थानकवासी आमनाये

(ii) तेरापंथी आमनायें

(iii) मूर्तिपूजक आमनाये

दिगम्बर समाज मे भी मुख्य रूप से दो विचारधारायें है।

(१) बीसपंथी एवं (२) तेरापंथी

स्थानकवासी एवं तेरापथी आमनाओं में मूर्ति-पूजा नहीं की जाती। श्वेताम्बर समाज मे मूर्ति-पूजक एवं दिगम्बर समाज के सम्पूर्ण समाज मे मूर्तिपूजा ही सर्वोपरि है।

सम्पूर्ण जैन समाज चौबीस तीर्थंकरों का ही मानने वाला एवं चौबीसवे तीर्थंकर भगवान महावीर के मुख्य उपासक के रूप मे ही जाना जाता है। [illegible] जिसे णमोकार मंत्र कहते है के [illegible] दोनों [illegible] सर्वोपरि सिद्धान्त [illegible] है। अहिंसा के सिद्धान्त मे पूर्ण आस्था [illegible] मे [illegible] की ओर गिर रहा है जिसका भान महज स्वार्थ का चश्मा चढा होने पर नही हो रहा है। अगर भान हो भी रहा है तो उसको विकृति की ओर जाने से रोकने का साहस करने वालों की कमी है।

प्रेम सौहार्द से आपसी रंजिश कटुता की ओर बढ़ने का मुख्य कारण एक ही है। वह है जैन समाज के विभिन्न आमनाओं के पोषक समाज के कर्णधार व्यक्तियो के आपसी हितों का टकराव। जिन्होंने समाज को एक ऐसी भूलभुलैया मे ढकेल रखा है जिससे उनके स्वार्थ पूर्ण रूप से सिद्ध होते रहे।

सम्पूर्ण दिगम्बर समाज एवं श्वेताम्बर समाज में मूर्तिपूजा के लोग ही जैन मंदिरो के उपासक है।

अतः मुख्य रूप से जैन समाज में दिगम्बर समाज एवं श्वेताम्बर समाज मे मंदिरो का विवाद उनकी सेवापूजा की विधि मूर्ति के बाहरी साजसज्जा के भेद, दिगम्बर समाज मे मूर्तियों के नग्नता के चिन्ह एव श्वेताम्बर समाज मे लगोट, कन्दोरा, माला आदि के स्पष्ट चिन्ह, श्वेताम्बर समाज मे मूर्तियों के नेत्र खुले हुए एवं सम्मुख दृष्टि होना एवं दिगम्बर समाज मे नेत्र अर्ध खुले होना [illegible] आदि का व्यवहार न करना आदि स्पष्ट [illegible] धार्मिक ग्रन्थो आदि मे स्पष्ट उल्लेख होने पर भी आपसी विवादो मे समाज के दोनो [illegible] [illegible]

जाने लगी एव इन्हीं वातो को मुख्य मुद्दा वना लिया गया। धीरे धीरे ये वातें समय-समय के साथ नई नई वातो को लेकर लडाई का मैदान तैयार कर लिया गया।

धीरे धीरे मदिरो की मूर्तियो को आगे लाकर, मदिरो की विपुल सम्पत्तियों पर निगाह जाने लगी, स्वार्थ टकराये, मनमुटाव वढते गये। धर्म की आराधनायें एक ओर रह गई। कट्टरता आती गई। मदिरो के अनाधिकृत कब्जे किये जाने लगे, जिससे सम्प्रदाय विशेष के लोग धर्म की आस्थाओं से भटककर सम्पत्ति उपासक होते गये।

अत भगवान महावीर के उपासक, एक ही धर्म के पालक, एक ही सिद्धात पर अमल करने वाले, अहिंसा पर पूर्ण आस्था रखने वालो मे मन मुटाव का मुख्य मुद्दा अपुल सम्पत्तियो को हथियाना हो गया एव अपनी अपनी परिधियो की कट्टरता मे ही अपने आपको ही 'जैनी' कहने लगे। उनकी निगाहो मे अपने ही अन्य भाई अजैन जैसे लगने लगे एव उनसे वे वसा ही व्यवहार करने लगे।

मदिरो की उपासना के भेदो को आगे लाकर सम्पत्तियो के झगडे शुरू हुए एव मदिरो के लिए भगवान को न्यायालयो म बैठाने लगे।

भारत वर्ष मे आज दिगम्बर एव श्वेताम्बर समाज मे निम्न मुख्य चार मदिरो पर ही काफी लम्बे अरसे से न्यायिक वाद चल रहे हैं।

(१) श्री केसरियानाथ जी—राजस्थान

(२) श्री महावीर जी—राजस्थान

(३) श्री अन्तरिक्ष जी—महाराष्ट्र

(४) श्री मक्सी जी—मध्यप्रदेश

केसरियानाथ जी —के विवाद मे जैन समाज के दोनो ही सम्प्रदाय के व्यक्ति लड रहे हैं लेकिन फायदा दूसरे समाज के व्यक्ति उठा रहे हैं वह स्थान आज पडो एव पुजारियो के कब्जे में जा रहा है।

श्री महावीर जी तीर्थ —प्रसिद्ध पत्रिका 'कल्याण' जो गोरखपुर मे प्रकाशित होता है के तीर्थांक अक एव विशेषाक ३१वें वर्ष का जो जनवरी १९५७ मे प्रकाशित हुआ था के पृष्ठ सख्या ५४० पर पडित श्री कैलाशचद्रजी शास्त्री (एक दिगम्बर भाई) ने निम्न लिखा है—

"पश्चिमी रेलवे के मथुरा नागदा लाइन पर श्री महावीर जी नामक स्टेशन है वहाँ से यह क्षेत्र चार मील है। गाव का नाम चान्दन गाव है। यह अतिशय क्षेत्र है। यहाँ अनेक विशाल धर्मशालायें हैं और मध्य मे विशाल मन्दिर है जिसम मूलनायक महावीर जी की मूर्ति विराजमान है। यह मूर्ति पास की ही भूमि को खोदकर निकाली गई थी। एक चमार की गाय जब चरने के लिए टीले पर जाती थी तो उसके थन से दूध वहीं पर झर जाता था। एक दिन चमार ने यह दृश्य देखा। रात्रि मे उसे स्वप्न हुआ। दूसरे दिन उसने उस मूर्ति को खोदकर निकाला और वही विराजमान कर दिया। कुछ दिनो के पश्चात् भरतपुर राज्य के दीवान जोधराज किसी राजकीय मामले में पकडे जाकर उधर से निकले। वे जैन थे। उन्होंने इस मूर्ति के दर्शन करके यह सकल्प किया कि यदि मैं तोप के मुँह से वच गया तो तेरा मदिर वनवाऊगा। राजकीय दण्ड मे उन पर तीन वार गोला दागा गया और तीनों वार वच गये। तव उन्होंने तीन शिखरो का मदिर वनवाया। मीना, गूजर आदि सभी जातियाँ इस मूर्ति को पूजती हैं। दूर-दूर से जैन एव जनेत्तर स्त्री पुरुष उसके दर्शनो के लिए आते हैं।

दिल्ली जिन ग्रन्थ रत्नावली जो दिगम्बर जन सरस्वती भण्डार नया मदिर धर्मपुरा दिल्ली के ग्रन्थों की सूची है। जिसे श्री कुन्दनलाल जैन ने

लिखा एवं भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन दिल्ली ने प्रकाशित किया के पृष्ठ संख्या ३७ पर संख्या १०८ पर अस्गरांग टीका जो श्री जोधराज जी दीवान भरतपुर ने लिखवाई का उल्लेख निम्न है :—

लिपिकृतं मिश्र आसारामेण नगर बरौली मध्ये। लिखापित श्वेताम्बराम्नाय विजयगच्छे पल्लीवालान्वये जैनधर्म प्रतिपालक धर्ममूर्ति सुश्रावक श्री दीवान जोधराज जी तनेंदं पुस्तके लिखपित। डंगिहा गोत्रे वासी हरसाणा का सुसवासी दीधका

देखो आ. सू. पृ. ६
जि. र को पृ. २४ (v)

दिगम्बर समाज के अनुसार ही उक्त मन्दिर जोधराज जी दिवान ने बनवाया जो श्वेताम्बर थे।

उक्त मंदिर पर दोनों, ही सम्प्रदायों का न्यायिकवाद करीब ४०-४५ साल से चल रहा है। जिसमें दिनाक १०-९-८५ की सुप्रीमकोर्ट ने फैसला देकर डिस्ट्रिक्ट जज, जयपुर को आदेश दिया है कि इस केस को एक साल के अन्दर सुनकर फैसला करें। श्वेताम्बर समाज की ओर से ११ गवाहों के बयान दर्ज हो चुके हैं। केस में आशातीत प्रगति चल रही है।

यह कितनी विडम्बना वाली बात है कि जैन धर्म के उपासक मंदिरों के सूचनापट्ट पर यह अंकित करावें कि सिर्फ दिगम्बर आमनाओं से ही सेवापूजा की जा सकती है। सच्ची बात को विवादों में समाज को गुमराह किया जा रहा है।

चीजें स्पष्ट है लेकिन लोगों के दिल साफ नहीं। अतः न्यायालयों के जाल में फंसे हुये हैं जिससे समाज का लाखों रुपया, जिसका सदुपयोग समाज के उत्थान में किया जा सकता था, कोर्ट बाजी में खर्च हो रहा है। यह खर्चा या तो अनाधिकृत कब्जे मंदिरो पर करने में या किये हुए अनाधिकृत कब्जों को हटाने में हो रहा है।

इस ओर दोनों ही सम्प्रदायों के लोग मूकदर्शक बने हुए हैं। दिल में सबके एक ही बात की टीस है कि सम्पूर्ण भारत में मंदिरों के बारे में [illegible] न्यायिकवाद आपसी बातों से हल किये जाने चाहिए लेकिन अफसोस समाज के लोग समाज के कर्णधारों की ओर टुकर-टुकर देख रही है लेकिन पहल कोई नहीं करना चाहता।

मंदिरों के जिस पैसों को समाज के उत्थान, प्रगति एवं भलाई के लिए खर्च होना चाहिए वह पैसा वह भी समाज द्वारा मंदिरों को भेंट किया हुआ पैसा चन्द लोगो के स्वार्थ के लिए न्यायिकवाद पर खर्च हो रहा तब भी समाज विशेष सो रहा है।

चर्चा है कि एक सम्प्रदाय विशेष ने इन्हीं विवादों के लिए करीब एक करोड़ रुपये का फन्ड का निर्माण कर लिया है या इस ओर प्रयत्नशील है। धन्य है भगवान महावीर के उपासक, चेले एवं समाज के कर्णधार।

आज समय की पुकार है। जैन समाज के हर सम्प्रदायो के नवयुवकों को आगे आकर अपनी-अपनी आस्थाओं में भी रहकर, समाज द्वारा उपार्जित धन को सदुपयोग करके के लिए समाज के अग्रगणी व्यक्तियों पर जोर डाले, उनके स्वार्थो को उजागर करें तथा सही रास्ते पर लाकर चल रहे विवादों को निपटाने के लिए पहल करें तभी वे सच्चे जैन धर्म के अनुयायी एवं पालक बनने का श्रेय ले सकते हैं।

समय की पुकार एकता की ओर है। सवाल है पहल कौन करे ?

इस ओर बम्बई से चालित भारत जैन महा मण्डल के अन्तर्गत जैन एकता समन्वय समिति का गठन होना जो इस ओर पूरी कोशिश से पहल कर रही है। तथा इसमें सम्पूर्ण भारत के हर सम्प्रदायों के प्रतिष्ठित व्यक्ति शामिल हैं। भगवान महावीर से यही कामना है कि उक्त समिति को इसमें सफलता मिले तथा जैन समाज के प्रबुद्ध वर्ग को सदबुद्धी देवे जिससे वे इस ओर पहल कर सकें। जागृति पैदा कर सकें।

इसी आशा, कामना के साथ जैन समाज से [illegible] की एक सी [illegible] । [ ]

गुरु की महत्ता

लेखक प पू मुनि श्री अरुण विजयजी के
शिष्य हेमन्तविजय जो

अनादि काल मे इस ससार मे भटकती हुई यह आत्मा क्यो मुक्त नही हो पा रही है ? इसका सबसे मूल कारण जो ढू ढने बैठे तो यही मिलेगा जो भगवान महावीर स्वामी ने भगवती सूत्र मे कहा है कि "अन्नाण खु महाभय" अज्ञान ही बडा भयकर शत्रु है। इसके जरिये हम इस चार गति रूप ससार मे भटक रहे हैं।

हमारे मे पडे हुए अज्ञान रूपी अधकार को दूर करने के लिए कौन समर्थ हो सकता है ? तो कहते है कि अज्ञान रूपी अ धकार को दूर करने के लिए सबसे पहले तो अनत ज्ञानी अरिहत परमात्मा का उपकार हमारे पर है ? इस पाचवे आरे मे भले खुद अरिहत परमात्मा न हो लेकिन उनके बनाए हुए मार्ग पर चलने वाले जो साधु महाराज हैं वो हमारे बडे गुरू हैं, वो अरिहत परमात्मा का बनाया हुआ ज्ञानदीप हमारे पास जलाते हैं—उससे हमारा अज्ञान रूपी अ धकार दूर चला जाता है।

हम पहले 'गुरु" शब्द का अर्थ देख लें। गुरू शब्द बना कैसे। एकाक्षरी कोष मे गु=अ धकार रु=रुकनार,=रोकनार, जो अ धकार को रोकते हैं उन्हे हम गुरू कहें—यहीं अच्छा है। अ धकार कैसा तो कहते है कि अज्ञान रूपी अ धकार को जो जीवन म से नाश करते हैं इनको हम गुरु कहते हैं।

गुरू महाराज अज्ञान रूपी अ धकार को दूर कैसे करते हैं ? उत्तर देते हुए कहते हैं कि ज्ञान-रूपी दीप को जलाकर अ धकार को दूर करते है। ज्ञानदीप को जलाते हैं—"सा विद्या या विमुक्तये" जो ज्ञान इस भयकर ससार मे से मुक्त करने वाला हैं वैसा ज्ञानदीप प्रगटाकर अज्ञान रूपी अ धकार का नाश करते हैं।

ऐसे महान उपकारी गुरू की जीवन मे बहुत बडी आवश्यकता पडती है क्यो कि आज के जमाने में माता, पिता और शिक्षक की ओर से लडके को कुछ भी अच्छे सस्कार मिलना असभव सा हो गया है। इसलिए हमारे जीवन रूपी बाग में सुसस्कार रूपी गुलाब का फूल-पुष्प उगाने वाले सिर्फ धर्मगुरु ही कामयाब बन सकते हैं।

ऐसे महान उपकारी गुरू का वर्णन मैं किन शब्दो मे कर सकता हू फिर भी थोडा बहुत प्रयत्न करता हूँ।

गुरु बिना ज्ञान नही मिल सकता है। कितने बडे बडे ग्रथ पढ जावे फिर इनका रहस्यार्थ, गूढार्थ को समझने के लिए किसी गुरू का ही सहारा लेना पडेगा

सच्चे अर्थ में देखे तो गुरू कैसे होना चाहिए। ये भी देखना अनिवार्य है। कहीं ऐसा न हो जाय कि मेरे ही जैसा मौज-शौक-मेहफिल करने वाले न हो क्योंकि हमें इस संसार रूपी समुद्र को तैर कर मोक्ष में पहुचना है। जिन्होंने मोक्षमार्ग को अच्छी तरह जान लिया है और जानते हुए इसी मार्ग पर चलने का दृढ़ विश्वासी हो तो खुद तैरना है और दूसरे को तैरने का सही मार्ग दिखाते हों वही सही गुरू कहलाएगा। ऐसे गुरू ने संसार का सब कुछ त्याग किया हो। अपने कुटुम्ब परिवार का त्याग किया हो। क्योंकि—"चारित्र विण नहीं मुक्ति" ये सब त्याग करके चारित्र लेना और आराधना, कर्मनिर्जर करके ही मोक्ष में जा सकते हैं। वही मोक्ष का राजमार्ग हे। ऐसे महान त्यागी गुरू हमारे गुरू है।

ऐसे महान् त्यागी वैरागी गुरू हमारा जीवन कभी बिगड़ने नहीं देते हैं। किन्तु बिगड़े हुए को सुधार ने का सबसे बड़ा काम करते हैं। ऐसे गुरु पारसमणी के जैसे हैं। पारसमणी के सत्संग में, आया हुआ खराब से खराब लोहा भी शुद्ध सोना बन जाता है। ठीक वैसे ही गुरू के संग में, सत्संग में और चरणों में आया हुआ कोई भी मनुष्य का जीवन इतना पवित्र और शुद्ध बनकर एक दिन मोक्ष में विराजमान हो जाता है। ऐसा पवित्र और शुद्ध जीवन बनाने के लिए भी गुरु की आवश्यकता काफी ज्यादा रहती है।

परम उपकारी गुरू एक दीपक के समान है. जैसे दीपक खुद जलकर सामने वाले को प्रकाश देता है वैसे ही गुरु की शरण में आये हुए शिष्य पढाने में अपना खून पसीना एक करके, इतनी ज्यादा मेहनत करते है कि शिष्य के जीवन में रहा हुआ अज्ञान रूपी अंधकार को हटाकर एक ज्ञान का पुंज प्रगटा देते हैं।

ऐसे ज्ञानचक्षु देने वाले महान गुरू का महत्व मे तो क्या बता सकता हूं। गुरू विण ज्ञान नही। बिना ज्ञान का जीवन अंधकार मय हो जाता है। गुरु जीवन को ज्ञान और सुसंस्कार से भर देते हैं। सुसंस्कार जीवनकी सबसे बड़ी पूंजी है। सुसंस्कार ज्ञान साथ जब मिश्रित होता है तब जीवन उन्नत मार्ग की ओर प्रस्थान करता है। □

"पुकार"

रचयिता—शान्ती देवी लोढा

नही सुनोगे नाथ आज यदि तुम भी करुण पुकार,
इस धरती के दु खी जनो के कौन हरेगा भार ?

पचतत्व का पुतला मानव करता अत्याचार,
नही सोचता एक दिवस जाना होगा उस पार ।

धन के मेद मे पागल होकर खोता पूर्ण विवेक,
इतना ज्ञान नही रह जाता कौन बुरा अरु नेक ।

व्यर्थ तनिक सी बातो पर ही आता उसको रोष,
मुक्त-हस्त से लुटा डालता है मणिमय निज कोष ।

प्रियजन कोई बिछुड गया यदि करता हाहाकार,
सभी जायेंगे उसी राह पर रह करके दिन चार ।

व्यथ लोभ, लालच, मद, मत्सर मे फसता निशि-भोर,
लगे हुए हैं उसके पीछे काम, क्रोध, भय चोर ।

विषय वासना मे डूबा है जिसका आर न पार,
अमृत समझे पान कर रहा जो है विष की धार ।

जन जन के तन मन मे भर दो प्रभु ! भक्ति भरपूर,
प्राणी मात्र के हृदय कमल से रहो न प्रभु ! तुम दूर ।

जैन रत्न व्याख्यान वाचस्पति, कवि कुल किरीट पूज्य आचार्य देव श्री मद विजयलब्धि सुरीश्वरजी महाराज

द्वारा

शंका-समाधान

संकलनकर्ता : श्री आत्माचन्दजी भण्डारी

(१) **शंका**—मन्दिर में पूजा करने वाले के लिये कौनसी पद्धति होनी चाहिये ?

समाधान—प्रभु के मन्दिर में प्रवेश करते प्रथम द्वार के सामने परमात्मा के मुखारविन्द के दर्शन होते ही दोनों हाथ जोड़ कर मस्तक के लगाकर श्री जिनेश्वर देव को प्रणाम करना चाहिये । प्रभु के दर्शन होते ही मस्तक पर हाथ जोड़ 'नमो जिणाणं' कहना चाहिये । और वही पर पहिले निसीह' कहना कि जो 'निसीहि' मे संसार सम्बन्धी कोई भी चिन्ता प्रभु के मन्दिर में करने का निषेध है ।

उसके पश्चात जिनालय में चारों तरफ दृष्टि डालकर देखना । किसी प्रकार की जिनालय मे अपवित्र चीज पड़ी हो तो सफाई करके या करवा कर 'निसीहि' कहना चाहिये । इस 'नीसीहि' में जिनालय सम्बन्धी शुद्धि का कार्य भी त्याग करना होता है । केवल जिनेश्वर देव की पूजा सिवाय दूसरे तमाम कार्यो को छोड़ना है । इसके बाद जिनेश्वर भगवान की जहां तक बन सके वहां तक अपने ही द्रव्य से केसर चन्दन, धूप दीप अक्षत, आदि उत्तम वस्तुओ से अष्ट प्रकारी, सतर भेदी, इक्कीस प्रकारी आदि शक्ति अनुसार पूजा करनी चाहिये ।

पूजा करते समय पुरुषों को धोत्ती और उत्तरासन ये दो वस्त्र धारण करना चाहिये । उत्तरासन रूप खेस के आठ पट करके मुखकोश बांधकर पूजा करनी चाहिये । इस पूजा के पहिले स्वयं के ललाट पर केसर का तिलक करना चाहिये । इस तिलक का मतलब यह है कि हे प्रभु ! मैं आपकी आज्ञा को शिरोधार्य करता हूं और यह तिलक चिन्ह रूप है । इस प्रकार आज्ञाधीन बनने के पश्चात् प्रभु की पूजा करने की लायकात आती है । इस बात को तिलक सिद्ध करता है ।

प्रभु का अभिषेक करने के पहिले मनुष्य स्नान करता है । इससे शुद्धि होने के पश्चात् प्रभु पूजा हो सकती है ऐसा सङ्केत है । इस प्रकार से ही, पहिले स्वयं तिलक करके परम पवित्र प्रभु आज्ञा पालन का नियम बिना पूजा करने के लायक नहीं हो सकता । प्रभु पूजा के समय मौन धारण करना चाहिये ।

उस भरी मुकुट गहना आदि जो होते है वे जिस प्रभु की पूजा जिस कारण है यह समझाने के लिये है न कि प्रभु पूजा के समय उपयोग करने के लिये ।

प्रभु पूजा स्वस्तिक आदि करने के पश्चात् तीसरी निसीहि कहकर चैत्यवन्दन अवश्य करना चाहिये। तीसरी निसिहि का अर्थ यह है कि अब से प्रभु की अङ्ग पूजा, अग्र पूजा आदि त्याग करके अब मैं भाव पूजा में प्रवेश करता हूँ।

चैत्य वन्दन करते समय अगर कोई सुन्दर राग से भाव बढ़े ऐसा स्तवन गाता हो तो उसका स्तवन पूरा होने बाद स्वयं को गम्भीर भाव से स्तवन बोलना चाहिये। स्तवन खूब भाव की वृद्धि करता है। इसी लिये शास्त्र में कहा है "अनन्त गीय वाइये" प्रभु का गीत वाद्य के साथ में सुन्दर भाव से गाते समय अनन्त फल मिलता है। खास जिनेश्वर देव के पूजा में पाँच अभिगम और दशत्रिक साचव वाना है। उसका ज्ञान चैत्य-वदन बोल से मिलता है।

(२) शंका–मन्दिर जाते समय रास्ते में व्यापार व अनेक प्रकार की बातें करें तो क्या होता है?

समाधान–जिन दर्शन आदि का फल श्री 'पउम चरिय' में बताया है। फल घट जाता है और आत्मा पर पाप का पुंज चढ़ जाता है।

(३) शंका–मन्दिर में दर्शन करने जाते हैं तब तीन बार 'निसीहि' कहते हैं। ये किस लिये?

समाधान–जिनालय में प्रवेश करते समय जो प्रथम 'निसीहि' कहते हैं उसमें संसार की सम्बन्धी किसी प्रकार की चिंता करने का निषेध है। जिनालय में किसी प्रकार की अशातना हुई हो तो उसे दूर करने के लिये कोई आरंभ समारंभ करना पड़े तो तमाम करके दूसरी 'निसीहि' बोलते हैं। वहां जिनालय की शुद्धि करते समय हुई हिंसा का त्याग उसके पश्चात प्रभु की केसर चन्दन, पुष्प आदि से पूजा करने के बाद तीसरी निसीहि, कहते हैं। उसमें द्रव्य पूजा का निषेध करना होता है। इस तीन निषेधों का सूचकी तीन निसीहि कहते हैं।

(४) शंका–तीसरी 'निसीहि' कह कर भाव पूजा में लगने के पश्चात यदि कोई भगवान की पूजा बराबर न करता हो तो उसको समझा सकते हैं क्या?

समाधान–जिन पूजा में विघ्न में कोई हर्ज नहीं।

(५) शंका–भगवान की तीन प्रदक्षिणा करने में पहिले या बाद में स्तुति करनी चाहिये?

समाधान–प्रथम श्री वीतराग भगवान के दर्शन कर फिर प्रदक्षिणा करके फिर स्तुति करनी चाहिये।

(६) शंका–मन्दिर में पुरुष दाईं तरफ और स्त्री बाईं तरफ खड़े रहते हैं तो कौनसी अपनी या भगवान की?

समाधान–जिनवर देव की।

(७) शंका–भगवान के दाईं ओर पुरुष और बाईं ओर स्त्री को स्तुति, पूजन करने का कहा है - इसमें अगर भूल होवे तो दोष लगता है क्या?

समाधान–शास्त्र कही हुई विधि में अगर भूल होवे तो दोष लगता है।

(८) शंका–प्रातः देव पूजा में सिर्फ धूप तथा वासक्षेप से पूजा करने का कहा है तो संसारी क्यों करें? कई तो अशुद्ध स्नान करके शुद्ध वस्त्र पहन कर प्रभुजी का स्पर्श न करते हुये ऊपर से वासक्षेप की पूजा करने का कहते हैं। परन्तु शुद्ध वस्त्र अर्थात् धोये हुये वस्त्र चल सकते हैं या पूजा के वस्त्र ही पहनना होता है। हमेशा पहनने का कमीज, कोट, टोपी, पगड़ी भी चल सकती है या नहीं?

समाधान–वास क्षेप पूजा (प्रात की पूजा) शुद्ध होकर धोये हुये वस्त्र पहन कर कर सकता है।

पूजा के ही कपड़े पहने ऐसा नही। कोट कमीज आदि ऊपर के वस्त्र अशुद्ध नही गिने जाते।

(९) **शंका**—संवत्सरी अथवा वरसीदान देने वाले को प्रतिदिन एक पैसा जिनालय के बाहर निकलते समय सामने मिले उसे देने का निश्चय करे तो सामने मिलने वाला व्यक्ति जैन ही होवे ! क्या यह सही है ?

समाधान—इस प्रकार की भावना वाली आत्मा केवल जैन को ही पैसा देवे ऐसा मानना नहीं चाहिये। □

भव वैराग्य

सर्वगुण और सर्वधर्म 'भववैराग्य' पर आधारित हैं, इसलिए जीवन ने सर्वप्रथम 'भववैराग्य' को प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिये। उसे प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित चार वातों पर ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक है—

(१) भवस्वरूप का चिन्तन

(२) कर्म विपाक का विचार

(३) आत्मा के शुद्ध स्वरूप का भान

(४) परमात्मा की आज्ञा के प्रति वहुमान। ये चारों वातें यदि मन में रचपच जाय तो भव वैराग्य की प्राप्ति भी निकट ही समझो। फिर दूसरे धर्म अथवा गुणों के लिए मेहनत नहीं करनी पड़ेगी। अनायास ही गुण आजायेंगे और धर्म की ओर प्रवृत्ति होगी।

गणधर गौतम स्वामी ने प्रभु महावीर से पूछा हे भगवन ! मुझे कसे चलना चाहिये ? कैसे खडा होना चाहिये ? कैसे बैठना चाहिये ? कैसे सोना चाहिये ? कसे खाना चाहिये ? कैसे बोलना चाहिये ? ये क्रियायें हैं भगवन् ! मैं कैसे करू जिससे पाप और कर्म बन्धन से मैं बच सकू । भगवान ने फर्माया—सावधानी से चलो, सावधानी से खडे होवे । सोने बैठने व खाने की क्रियाओ मे सावधान रहो, उपयोग रखो तो पाप और कर्म के बंध से तुम बच जाओगे ।

एक सुन्दर सजी हुई कार के ब्रेक न हो तो क्या कोई उसमें यात्रा करना पसन्द करेगा ? यदि आपके बोलने पर बुद्धि और विवेक का ब्रेक नही है तो कितना ही चटपटा आप बोलें लोग उसे सुनना ही नही चाहेगे ।

पांडवो के नव निर्मित महल मे कौरवो को आमन्त्रित किया गया और वहा की कला ने पानी को जमीन सदृश्य दिखाया और दुर्योधन उसमे गिर गया । द्रोपदी के मुह से केवल इतनी सी अविवेक-पूर्ण भाषा निकली कि अन्धे के बच्चे भी अन्धे होते हैं और खूब हसी, इसका परिणाम हुआ महाभारत ।

कई बार अविवेक के कारण अच्छे सिद्धान्तो को भी गालिया निकाली जाती है, उनकी बेदर-कारी की जाती है । एक कथानक से हम इस तथ्य को जान सकेंगे ।

एक गाव मे दशहरे का समारोह चल रहा था, पास ही एक कुआ था । अधिक भीड होने से एक व्यक्ति कुए मे गिर गया, वह तरना नही जानता था । कसे भी उसने अपना सर पानी मे ऊपर निकाला और चिल्लाया 'मुझे बचाओ मैं डूब रहा हू' एक दार्शनिक उधर से गुजर रहा था—उस व्यक्ति की आवाज सुन कर उसने कहा 'मेरे दोस्त जीवन मे सुख से दुख की पर्तें ज्यादा हैं-फिर तुम्हें बचाने से मुझे क्या लाभ । पूर्व जन्म मे तुमने अवश्य ही किसी को कुए मे धकेला होगा और इसीलिये इस जन्म मे तुम कुए मे गिरे हो । हरेक व्यक्ति को अपने कर्मों का फल भोगना ही चाहिये । इसलिये शान्ति से कर्म का फल भोगो । तुम यहा कर्मों से मुक्त हो जावोगे और निर्वाण को प्राप्त हो जावोगे । वह कह कर वह चला गया ।

थोडी देर बाद एक नेताजी वहा आये । वह भाषण देने के लिये कोई मसाला चाहते थे । वह यहाँ उनको मिल गया । उन्होंने कुए मे गिरे हुए उस व्यक्ति से कहा हिम्मत रखो और शाँत रहो । थोडे दिनो मे असेम्बली की बैठक होगी उसमे मैं एक प्रस्ताव रखूगा कि भारत के गावो मे कुओ के चारो ओर दीवारें बनाई जानी चाहिये । उस व्यक्ति ने कहा मैं नही जानता कब बठक होगी, कब प्रस्ताव पास होगा और कब दीवारें बनेगी । यह प्रस्ताव किसी कीमत पर भी मेरी जिन्दगी को तो नही बचा सकेगा । नेताजी ने कहा तुम केवल अपने स्वार्थ की सोच रहे हो । मैंने तुमसे ज्यादा स्वार्थी व्यक्ति नही देखा । एक सज्जन व्यक्ति वह है जो दूसरो के हित की बात सोचता है । डूबे हुये व्यक्ति ने कहा वास्तव मे आप सच्चे विचारक हैं कृपया मुझे बाहर निकलने मे मदद कीजिये । नेताजी ने कहा मैं एक या दो के हित मे नहीं सोचता मैं सबका हित हो ऐसा सोचता हूँ । "समाज की सेवा भगवान की सेवा है" यह मेरा सिद्धान्त है । व्यक्ति ने कहा आप जन साधारण के हित की बात सोचते रहो पर मुझे तो बचाओ मैं मर रहा हूँ । 'नेताजी बोले' एक व्यक्ति की मृत्यु का कोई महत्व नही और तुम्हारे इस तरह मर जाने से तो मेरे प्रस्ताव मे और ताकत आ जावेगी । मैं कह सकूंगा कि सरकार के द्वारा कुओ पर दीवार नही बनाये जाने से एक व्यक्ति मर गया और यह प्रस्ताव

अवश्य ही पास हो जावेगा। कानून बन जावेगा और तुम एक 'शहीद' घोषित हो जावोगे। तुम्हारे लिये यह बहुत बडी उपलब्धि होगी। तुम्हारी मूर्तियां बनेगी और लोग मालायें चढायेंगे। व्यक्ति बोला भाई मुझे शहीद नहीं बनना है मुझे तो कैसे भी बचाओ।

थोडी देर में एक ईसाई पादरी उधर से गुजरा उसने घटना देखी और बडा प्रसन्न हुआ। उसने एक रस्सा डाला और आदमी को बाहर निकाला। व्यक्ति ने कहा तुमने मेरी जिन्दगी को बचाया है तुम बडे दयालु हो। पादरी ने कहा भाई मैंने कोई दयालुता नही दिखाई है वास्तव में तुम बड़े दयालु हो कुए में गिरकर तुमने मानव की सेवा का महान अवसर मुझे दिया है। जोसिस ने कहा है मानव की सेवा भगवान की सेवा है। आज कुए से निकाल कर मैंने प्रभु की सेवा की है। यदि तुम फिर से कुए मे गिर सको तो मुझे पुनः प्रभु की सेवा करने का अवसर मिले और यह कह कर उसने फिर उसे कुए में धकेल दिया और फिर निकालने में मदद की। व्यक्ति ने कहा तुम क्या कर रहे हो तुम मुझे मारने का प्रयास कर रहे हो इतना कह कर वह भाग गया। ये घटनायें केवल इसलिये बनती हैं कि सिद्धान्तों का सही स्वरूप जाना नही जाता। एक व्यक्ति में कोई विवेक और बुद्धि नही है अगर वह दूसरे को अपने कार्य से प्रसन्नता नहीं दे सकता।

बुद्धि की सार्थकता इसी में है कि वह अच्छाई और बुराई में भेद कर सके। हमें अपनी बुद्धि (विवेक) का उपयोग सही तत्व को स्वीकार करने और उसे व्यवहारिक जीवन में प्रयोग करने में करना चाहिये एक बुद्धिशाली व्यक्ति अच्छा ही कर सके यह जरूरी नही है वह आमतौर पर बिना विचारे दूसरों का अनुकरण करते हैं। □

श्रद्धान्जली

(1) पुज्य आचार्य श्रीमद विजय भुवनचन्द्र सूरीजी महाराज (देहलीवाला) ५५ वर्ष का दीर्घ संयम पालते हुये ८७ वर्ष की आयु में कालधर्म हो गया।

(2) इसो प्रकार पुज्य आचार्य भगवन्त श्रीमद विजय मंगल प्रभसूरीजी महाराज साहब का अहमदाबाद में समाधि पूर्वक काल धर्म हो गया। पुज्य आचार्य भगवन्त पुज्य आचार्य श्री विजय नीति सूरीश्वरजी महाराज साहब के समुदाय के गच्छाधिपति थे। वे बडे सरल, भद्रिक एवं सोम्य प्रकृति के थे।

(३) यही नहीं दिल्ली की वल्लभ स्मारक की पुण्य भूमि में पंजाब केसरी पुज्य आचार्य श्रीमद विजय वल्लभ सूरीश्वरजी के समुदाय को विद्वान साध्वी श्री मृगावती श्री जी का भी दिनांक १८-७-८६ को काल धर्म हो गया। आपकी प्रेरणा एवं मार्गदर्शन से ही वल्लभ स्मारक का नव निर्माण दिल्ली में चल रहा था।

(4) इसके अतिरिक्त जयपुर में पुज्य मुनि पुण्यचन्द्र विजय जी तथा बीकानेर में खरतर गच्छीय पुज्य साध्वी श्री विजयेन्द्र श्रीजी महाराज का भी काल धर्म हो गया है। अतः शासन देव से प्रार्थना है कि आप सभी की आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

सम्पादक मण्डल

धर्म का स्वरूप

धम कोई तर्क का विषय नही है, क्योकि धर्म कोई विचार नही है। धर्म काई विचार की अनुभूति भी नही है, किन्तु निर्विकार-चैतन्य से जन्य बोध है।

विचार इन्द्रियजन्य हैं। निर्विचार-चैतन्य अतीन्द्रिय है। निर्विचार चैतन्य जब चरम विंदु पर पहु चता है तव आत्मा का साक्षात्कार होता है तव आत्मा के सम्वन्ध मे केवल 'विचारणा' व्यथ है—साधना ही सार्थक है। वह साधना आत्मा को निर्विचार स्थिति की ओर ले जाती ह।

विचारो के पीछे भी वुद्धि रही हुई है किन्तु विचारो मे ग्रस्त और व्यस्त व्यक्ति उसे (धर्म को) जान नही सकता है।

विचार पराश्रित हैं, ज्ञान की अग्नि स्वय की है। विचारो की एक सीमा है इन्द्रियो की एक सीमा है, अत उनसे जो जाना जाता है वह सीमायुक्त ही होता है। असीम अन्नत को जानने के लिए उनसे ऊपर उठना पडता है इन्द्रियो से परे, चित्त की विचार शून्य अवस्था मे जिसका साक्षात्कार होता है, वही अन्नत असीम और अनादि आत्मा है।

आत्मा को जानने की आख भी अनोखी है, और वही समाधि और योग है। चित्त-वृत्तियों के विसजन से वे वन्द आखें खुलती हैं और समस्त जीवन अमृत प्रकाश से आलो-कित और रुपान्तरित हो जाता है—वहा विचार नही किन्तु दर्शन है।

जहा विचारवृत्ति और चित्त नही है वहा दर्शन है। शून्य द्वारा पूर्णता का दर्शन होता है। वस, 'मात्र देखना' इस विन्दु पर स्थिरत्व आने के साथ ही विचार क्रमश विलीन होने लगते हैं।

जिसे 'पूर्ण' वनने की तीव्र उत्कण्ठा जगी है व उसे भौतिकता से रिक्त और शून्य वनना चाहिये। जो शून्य वनता है, वही पूर्णता प्राप्त करता ह और अध्यात्मिक दृष्टि से पूणता सिद्ध करता है।

धर्म (यह) मनुष्य जीवन का चरम साहस है, क्योकि वह, स्व की विभाव दशा को शून्य और विसर्जित करने का माग है। धम (यह) भयभीत लोको की दिशा नही हैं। स्वर्ग के लोभ और नरक के भय से आक्रान्त लोगो के लिए धर्म पुरषार्थ नही है किन्तु

उन समस्त प्रलोभनों और भयों से मुक्त बने लोकों के लिए हैं, जो इतने निर्भय और साहसिक हैं, वे ही पूर्ण स्वरूप सागर के निमंत्रण को सहर्ष स्वीकार कर सकते हैं।

अच्छी वस्तु को पकड़ने के लिए, हाथ में रही खराब वस्तु को छोड़ने की जरूरत रहती है, उसी पूर्णता को पाने के लिए अपूर्ण, नाशवन्त और चंचल ऐसी सर्व बाह्य वस्तुओं की आसक्ति का समूल त्याग करना पड़ता है।

'मै' बिन्दु नहीं, किन्तु सिन्धु हैं इस सत्य को सार्थक करने के लिए हमें विलीन होना पड़ेगा, क्योंकि सच्चा विराम पूर्ण में हैं। ☐

भगवान अरिष्टनेमि : ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में

लखिका कु सरोज कोचर,

न्यायशील, उदार प्रजावत्सल हरिवशीय प्रतापी राजा समुद्रविजय की धमशीला महारानी शिवादेवी की कुक्षि से श्रावण शुक्ला पचमी के दिन चित्रा नक्षत्र के योग म पुत्ररत्न का जन्म हुआ। वालक उत्तम स्वर मे युक्त, एक हजार आठ शुभ लक्षणो धारक, गौतम गोत्री, श्याम कान्ति वाले, मनोहर मुखाकृति से युक्त शारीरिक सहनन वज्र सा दृढ और सस्थान आकार समचतुरस्र था। वालक के गभ काल मे माता-पिता सब प्रकार के अरिष्टो से बचे तथा माता ने अरिष्ट रत्नमय चक्रनेमि का दर्शन किया इसलिये इस बालक का नाम अरिष्टनेमि रखा गया।

कुमार अरिष्टनमि अद्वितीय शक्तिशाली थे अभी वे युवा भी नही हो पाये थे कि एक बार श्री कृष्ण के शस्त्रागार मे पहुच गए। आयुधशाला मे घूमते हुए उनकी दृष्टि पाचजन्य शख पर गयी। दिव्य शखध्वनि को सुनकर श्रीकृष्ण आश्चयचकित ही नही हुए अपितु शीघ्र ही आयुधशाला मे आये। कुमार अरिष्टनेमि द्वारा धनुष की टकार सुनकर विस्मय का कोई पार नही रहा। इस प्रकार एक नहीं अनेक स्थलो पर श्रीकृष्ण को कुमार अरिष्ट नमि की अद्भुत बलशीलता का परिचय मिला।

इसी प्रकार करुणावतार भगवान पर दुख निवारण हेतु सवस्व न्योछावर कर दने वालो मे अग्रगण्य थे। राजमती से विवाह करने हतु उग्रसेन के राजभवन के समीप जब कुमार अरिष्टनेमि की बारात पहुँची तब पशु पक्षियो का करुण क्रन्दन सुनकर उनका हृदय द्रवित हो उठा। इस विषय मे जानकारी लेने पर उन्ह ज्ञात हुआ कि विवाह के उपलक्ष मे जो विशाल भोज दिया जा रहा हैं उसमे इन्ही पशु-पक्षियो का मास प्रयुक्त होगा। ऐसी स्थिति मे पशु पक्षियो को बन्धन मुक्त करवाकर रथ को द्वारिका की ओर लौटाने का आदेश दिया। नेत्रो से अविरल अश्रुधारा, अत्यधिक अनुनयपूवक माता पिता ने कुमार को रोकने का प्रयत्न किया। तब विरक्तकुमार ने कहा अम्ब तात। जिस प्रकार ये पशु पक्षी बन्धना से बन्धे हुऐ है। मैं अब अपने आपको कम बन्धन से सदा-सवदा के लिये मुक्त करने हेतु कम बन्धन काटने वाली शिव-सुख प्रदायनी दीक्षा ग्रहण करूगा। चित्रा नक्षत्र की श्रवण शुक्ला पष्ठी को दीक्षा ग्रहण की। शुक्ल-ध्यान से भगवान ने समस्त घातिकर्मो को क्षीण किया और आश्विन कृष्ण अमावस्या की अर्धरात्री से पूर्व, चित्रा नक्षत्र के योग मे केवल ज्ञान को प्राप्त किया। आषाढ शुक्ला अष्टमी की मध्य रात्रि मे, चित्रा नक्षत्र के योग मे आयु, नाम, गोत्र और वेदनीय कर्मो का नाश कर निर्वाणपद प्राप्त कर सिद्ध बुद्ध और मुक्त हो गए। अरिहन्त अरिष्टनेमि तीन सौ वर्ष तक कुमारावस्था मे रह चौवन दिनो तक छद्मस्थ रुप से साधनारत रहे और लगभग सात सौ वष केवली रुप मे विचरण किया। इस प्रकार कुल आयु एक हजार वर्ष की थी।

किन्तु विडम्बना है कि करुणावतार पर दुःख निवारण करने में तत्पर, शरणागत वत्सल सिद्ध बुद्ध मुक्तप्रभु अरिष्टनेमि जिनका दुसरा नाम नेमिनाथ भी हैं ऐसे तीर्थंकर श्रेणी मे अधिष्टित प्रभु के चचेरे भाई श्रीकृष्ण को ऐतिहासिक पुरुष मानते है किन्तु भगवान अरिष्टनेमि को इतिहासकार एकमत होकर ऐतिहासिक पुरुष नहीं मानते है। जबकि जैन साहित्य के अतिरिक्त जैनेतर साहित्य मे अरिष्टनेमि का उल्लेख है जिसकी एक झलक प्रस्तुत की जा रही है। विस्तारमय के कारण पूर्ण विवरण नही दिया जा रहा है।

ऋग्वेद में अरिष्टनेमि शब्द अनेक स्थानों पर प्रयुक्त हुआ है। यजुर्वेद, सामवेद में भी अरिष्टनेमि का उल्लेख है। छान्दोग्योपनिषद के अनुसार श्री कृष्ण के गुरु घोर अंगरिस ऋषि थे और ज्ञातृ धर्म कथा में अरिष्टनेमि को अंगरिस का गुरु माना है।

महाभारत में 'अरिष्टनेमि' का उल्लेख है। रैवत के उद्यान में यादवी द्वारा रंगरेलियां करने का उल्लेख है। जहां मनोरंजन हेतु कृष्ण अर्जुन के साथ जाते। इसी स्थान पर हरिवंश पुराण के आधार पर कुमार अरिष्टनेमि कृष्ण और उनकी पटरानियां जल क्रीडा करते थे। महाभारत के शान्ति पर्व में अरिष्टनेमि ने राजा सगर को उपदेश दिया है। इस ग्रन्थ में तार्क्ष्य शब्द अरिष्टनेमी के पर्यायवाची रुप में प्रयुक्त हुआ है।

उपर्युक्त कतिपय तथ्यों एंव अरिष्टनेमि तथा श्रीकृष्ण के जीवन की घटनाओं का अवलोकन करने पर हम यह कह सकते है कि निःसन्देह भगवान अरिष्टनेमि ऐतिहासिक रहे है। हरिवंश में महाभारतकार वेदव्यास ने श्रीकृष्ण और अरिष्टनेमी को चचेरे भाई कहा है। □
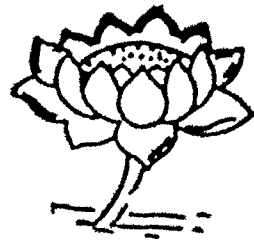
श्री आत्मानन्द जैन सेवक मण्डल, के प्रगति के चरण एवं गतवर्ष की गतिविधियां

☐ महामन्त्री अशोक शाह

श्री आत्मानन्द जैन सेवक मण्डल—श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ, जयपुर का ही एक अ ग है। यह मण्डल युवकों का वह सगठन है जो समाज मे धार्मिक एव सामाजिक स्तर पर तो काय कर ही रहा है, नवयुवको में धार्मिक त्रिया कलापो के प्रति अभिरुचि जाग्रत कर सक्रिय सामाजिक सेवा का अवसर भी प्रदान कर रहा है। मण्डल द्वारा विगत वर्ष में किए गए कार्य कलापो का सक्षिप्त दिग्दशन प्रस्तुत कर रहा हू ।

आचार्य भगव त का शुभागमन एव चातुर्मास—

गत वष प० पू० आचार्य भगवन्त श्री मद्-विजय कलापूण सूरीश्वरजी म० सा० का ठाणा ६ एव साध्वीवृ द के साथ चातुर्मास था आपके शुभागमन पर भव्य सामयूया का आयोजन श्री सघ द्वारा किया गया था जिसमे मण्डल न सक्रिय भूमिका निभाते हुए नगर-प्रवेश जुलूस के सफल सचालन मे सम्पूण योगदान किया, स्थान-स्थान पर तोरण द्वार बनाए गए, जगह २ पर गवलिया की गई, बैंडबाजे और लवाजमे के साथ यह भव्य जुलूस आत्मान द सभा भवन पहु चा जहा पर मण्डल द्वारा वाद्य-वादन सहित स्वागत किया गया ।

आचाय भगवन्त के चातुर्मास काल मे धर्माराधना के विभिन्न कायक्रम सम्पन्न हुए, प्रत्येक रविवार को विशेष अनुष्ठान, एकासणा आदि के आयोजन हुए जिसमे मण्डल के सदस्यों ने न केवल कार्यक्रमो के सफल और सुचारू क्रिया वयन मे सहयोग प्रदान किया अपितु स्वय भी भाग लेकर अपूव योगदान किया ।

अ जनशलाका प्रतिष्ठा महोत्सव—

जयपुर मे यह पहला अवसर था जबकि अ जनशलाका-प्रतिष्ठा महोत्सव का इतने विशाल रूप मे आयोजन किया गया। श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ, जयपुर द्वारा नवनिमित श्री सीमन्धर स्वामी जिनालय, जनता कालोनी, जयपुर मे जिन प्रतिमाओ के विराजमान कराने के साथ साथ विभिन्न सघों द्वारा निर्मित जिनालयो मे विराजित की जाने वाली प्रतिमाओ की अ जनशलाका कराने की व्यवस्था भी श्री सघ द्वारा की गई जिसमे श्री सघ के समस्त सदस्यो का एकनिष्ठ और सक्रिय सहयोग तो प्राप्त हुआ है, मण्डल के समस्त कायकर्ताओ ने भी रात दिन एक करके हर गतिविधि मे सम्पूण सहयोग प्रदान किया। यह आचार्य भगव त महान लब्धि, पुण्य प्रताप एव आशीर्वाद का ही फल था कि इतना वृहद् काय शानदार ढग मे सम्पन्न हुआ। मण्डल द्वारा इस अवसर पर किए गए कार्यो

एवं सदस्यों के अथक परिश्रम, लगन एवं एकनिष्ठ सेवा भावना के प्रति प० पू० आचार्य श्री कलापूर्ण सूरीश्वरजी म० सा० एवं पू० मुनिराज श्री कलाप्रभ विजयजी महाराज ने संतोष व्यक्त करते हुए अपना सम्पूर्ण आशीर्वाद प्रदान किया।

इस अवसर पर श्री आत्मानन्द सभा भवन में मण्डल द्वारा पुंडरिकीणी नगरी का भव्य निर्माण किया गया जहां पर अंजनशलाका का महान कार्य सम्पन्न हुआ। पुंडरिकीणी नगरी की संरचना, सजावट और कलापूर्ण संयोजन अद्‌भुत थे और वास्तविक पुंडरिकीणी नगरी का साक्षात् स्वरूप परिलक्षित कर रहे थे, जो जयपुरवासियों के लिए दुर्लभ एवं अलभ्य अवसर था। आचार्य भगवन्त सहित सभी के द्वारा मण्डल के इस अभिनव कार्य की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की गई।

अंजनशलाका—प्रतिष्ठा महोत्सव के अन्तर्गत भगवान के दीक्षा-कल्याणक का भव्य एवं विशाल जुलूस का आयोजन किया गया था जिसमें भी मण्डल के सदस्यों ने अथक परिश्रम कर भरपूर सहयोग प्रदान किया। सम्भवतः इस श्री संघ के अन्तर्गत यह पहला ही अवसर था जब कि इतने विशाल जुलूस का आयोजन किया गया। मण्डल द्वारा भी इसमें दो जीवन्त झांकियां सम्मिलित की गई जिसमें एक झांकी तो वह थी जिसमें भगवान को डराने के लिए राक्षस अपने कन्धों पर बिठा कर डरावनी आवाज में किलकारियां करता है और राक्षसी दांत और विकराल रूप दिखाकर भगवान को डराने का प्रयास करता है। दूसरी झांकी वह थी जिसमें इन्द्र देवता भगवान को गोद में लेकर मेरु पर्वत लेजाकर भव्य महोत्सव करते हैं।

यों तो मण्डल द्वारा समस्त आयोजनों में ही पूर्णरूपेण भाग लिया गया लेकिन विशेष रूप से अंजनशलाका की रात्रि को एवं तदुपरान्त प्रातः काल भगवान के जिनालय में प्रवेश एवं फिर प्रतिष्ठा के आयोजन में व्यवस्था को सुचारु बनाए रखने में उल्लेखनीय योगदान किया गया। मण्डल के कार्यकर्ताओं के ही अथक परिश्रम का परिणाम था कि इतनी विशाल भीड़ को नियन्त्रित रखने, सभी को प्रतिष्ठा की क्रियाओं में भाग लेने और दर्शनों का सहज सुलभ और सुगमता से लाभ लेने के अवसर प्राप्त हो सके।

इस अवसर पर आयोजित अभिनन्दन समारोह में मण्डल द्वारा जनता कालोनी मंदिर के संयोजक श्री सुरेश मेहता एवं पूर्व-संयोजक श्री शान्तिकुमार सिंघी का बहुमान किया गया।

खरतरगच्छ संघीय आयोजित प्रतिष्ठा महोत्सव

खरतरगच्छ संघ द्वारा मोहनबाड़ी, गलता रोड़ पर नवनिर्मित देरासर जिसमे दिवंगत साध्वी श्री विचक्षण श्री जी म० सा० की प्रतिमाजी प्रतिष्ठित की गयी है, इस हेतु आयोजित प्रतिष्ठा महोत्सव में भी इस मण्डल की सेवाये ली गई। मण्डल को यात्रियों के आवास व्यवस्था का दायित्व सौंपा गया। मण्डल के कार्यकर्ताओं ने सम्पूर्ण आयोजन के दौरान रातदिन अथक परिश्रम कर इस दायित्व को भली प्रकार निभाया जिसमे श्री श्वेताम्बर जैन युवा संगठन, जवाहर नगर के कार्यकर्ताओं का भी सहयोग प्राप्त हुआ। इन युवा कार्यकर्ताओं की कड़ी मेहनत का ही फल था कि बाहर से आए हुए यात्रियों की आवास व्यवस्था सुचारु रूप से सम्पन्न हुई और चोरी आदि की एक भी वारदात नहीं हो सकी। यात्रियों को चिकित्सा सुविधा तथा अन्य वांछित सेवायें भी उपलब्ध कराई गई।

मण्डल के कार्य की खरतरगच्छ संघ द्वारा सराहना तो की गई साथ ही ११०१) रु का अनुदान एवं चांदी के दो [illegible] बहुमान भी किया गया।

यात्राओं का आयोजन

मण्डल द्वारा प्रति वष की भांति विगत वर्ष मे यात्राओं का भी आयोजन किया गया ।

एक दिवसीय यात्रा—

प० पू० आ० श्री कलापूर्णसूरीश्वर जी के शुभ आशीर्वाद एव प्रेरणा से अबकी बार एक दिवसीस यात्रा के रूप मे श्री महावीर जी तीथ की यात्रा आयोजित की गई। चूंकि श्वेताम्बर समाज द्वारा श्री महावीर जी तीर्थ की यह प्रथम यात्रा का आयोजन था जिसके कारण श्री सघ के भाई बहिनो म इतना उत्साह जागृत हुआ कि दस बसें ता पूर्ण रूपेण भर कर गई ही, फिर भी अनेका इस लाभ से वचित रह गए। निर्धारित समय के आधा घण्टे के कायकाल म ही समस्त बसो को जयपुर से प्रस्थान करा दिया गया। प्रथम पडाव मे मण्डावर पहुंचे जहाँ मण्डावर श्री सघ ने बैण्ड बाजो से यात्रियो की अगवानी की तथा सव भक्ति एव सघ पूजन का लाभ लिया। वहा से प्रस्थान कर मिरस (छोटा महावीर जी) पहुंचे। यहाँ पर वाद्य यत्रो सहित सामूहिक स्नात्र पूजन का भव्य आयोजन सम्पन्न हुआ। दोपहर के भोजन के बाद हिण्डौन पहुंचन पर हिण्डौन श्री सघ ने बहुत ही शानदार तरीके से यात्रियो का स्वागत किया जो कल्पनातीत है। साथ ही वहाँ सघ द्वारा अल्पाहार एव सघ पूजन द्वारा यात्रियो की भक्ति की गई। हिण्डौन से रवाना होकर स यकाल महावीर जी पहुंचे जहाँ पर उस क्षेत्र क विधायक श्री हरिशचन्द्र जी पल्लीवाल न स्वागत समारोह मे यात्रियो का स्वागत किया।

सूर्यास्त म कुछ ही समय शेष रहने म अति-शीघ्र सायकालीन भोजन से निवृत होकर सभी यात्री एव वहाँ के निवासी एक जुलूस के रूप मे पल्लीवाल धमशाला से रवाना होकर मन्दिरजी की तरफ बढे। जुलूस मे करीब १५०० व्यक्ति थे जो सभी सामूहिक रूप से गाने बजाने मे मशगूल थे। जुलूस मे श्री महावीर स्वामी की जय-जयकार के नारो ने वहा के वातावरण को गुजायमान कर दिया। वास्तव मे वह दृश्य देखने लायक ही रहा और वे क्षण सभी यात्रियो के मन मे अविस्मरणीय ही रहगे। वहाँ दुकानदार एव अन्य जैनेतर लोग जुलूस के इस अपूव दृश्य को विस्फारित नेत्रा स देख रहे थे। इस विशाल जुलूस के मन्दिरजी मे पहुंचने पर वहा पाव रखने को जगह न थी—सभी लोग दशन को लालायित थे। फिर भी सभी लोगो ने पूर्ण अनुशासनबद्ध तरीके मे मन्दिर मे प्रवेश किया। भगवान के दशन कर एव वहाँ का दृश्य देखकर लोग भाव विभोर हो उठे। इस प्रकार निर्विघ्न यात्रा पूरी करते हुये बसें रात्रि मे वापस जयपुर लौटीं।

त्रि दिवसीय यात्रा

इसी प्रकार एक और त्रि-दिवसीय यात्रा का आयोजन किया गया जिसमे नवनाकोडा, मुछाला महावीर जी, रणकपुरजी, विमलपुर, जवाई बाध, सीवानी, गटसिवाना, राता महावीर जी, नाकोडा पाश्वनाथ तीथ, जालौर आदि तीर्थों की यात्रा करते हुए अतिम पडाव मे कापरडा तीर्थ पहुंचे। इस यात्रा के समय पर पूज्य आचाय ह्रींकार सूरीश्वरजी म सा आ श्री दर्शनसागरजी म सा आ श्री सुशीलसूरीश्वरजी म सा, आ श्री कांति-सागरजी म सा एव ब्यावर में मुनि श्री कीर्तिचन्द्र विजयजी म सा आदि गुरूजनो के दशन वदन का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ।

उपरोक्त सभी आयोजनो मे मण्डल के काय कर्ताओं न तो अपना कत्तव्य निभाया है लेकिन इनके सफल सचालन एव क्रियान्विति मे सघ के गणमान्य बुजुर्गो, भूतपूव एव वतमान पदाधिकारियो का जो मागदशन एव आशीर्वाद प्राप्त होना रहा है उसके लिए मण्डल के पदाधिकारी विशेष रूप से आभारी हैं। ☐

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ, जयपुर
वार्षिक रिपोर्ट १९८५–८६

महासमिति द्वारा अनुमोदित

प्रस्तुतकर्ता : श्री नरेन्द्रकुमार लुनावत
संघ मन्त्री

परम पूज्य शासन प्रभावक मुनिराज श्री 'अरुण विजय जी म० साहब, मुनि मण्डल, साध्वी जी म० साहब एवं उपस्थित साधर्मी भाइयों एवं बहिनों, अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी के जन्म वाचना उत्सव के इस शुभ अवसर पर श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ का वर्ष १९८५-८६ का वार्षिक कार्य विवरण संघ की महा समिति की ओर से आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुये आज मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है।

विगत चातुर्मास—जैसा कि आपको विदित है गत वर्ष अध्यात्मयोगी परम आदरणीय पूज्य आचार्य भगवन्त श्रीमद विजय कला पूर्ण सूरीश्वर जी महाराज साहब आदि ठाणा ९ तथा पूज्य साध्वी श्री किरणलता श्री जी महाराज साहब आदि ठाणा ५ का चातुर्मास था। उनके चातुर्मास काल के पर्युषण पर्व के पूर्व का विवरण आपके समक्ष पिछले वर्ष की रिपोर्ट में पेश किया जा चुका है। उनके बाद आपकी ही पावन निश्रा में पर्युषण पर्व बड़े हर्ष एवं उत्साह पूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुए। [illegible] पूज्य आचार्य भगवन्त को जन्म वाचन के दिन समर्पित किया गया तथा बड़े उत्साह व उमंग के साथ १४ सपनों की बोलियां भी हजारों मण की बोली गई व जन्म की प्रभावना का लाभ श्रीमान जयन्तीलाल मगलभाई शाह ने लिया। पर्युषण पर्व के बाद आसोज माह की ओलीजी की आराधना आप श्री की निश्रा में सानन्द सम्पन्न हुई।

जयपुर शहर के उपनगर जनता कालोनी में गत कई वर्षों से श्री सीमन्धर स्वामी भगवान के शिखर बद्ध मन्दिर का निर्माण कार्य चालू था। सकल संघ की भावना श्री सीमंधर स्वामी भगवान के बिम्ब एवं अन्य बिम्बों की अंजन शलाका पूज्य आचार्य भगवन्त के कर कमलों से कराने की हुई। तदनुसार आचार्य भगवन्त से विनती की गई और उन्होंने सहर्ष ही इस हेतु स्वीकृति प्रदान कर दी। समय बहुत कम होने, साथ ही पिछले सौ पचास वर्ष में कभी अंजनशलाका का प्रसंग यहां पर नहीं आने पर भी जयपुर संघ ने यह महान कार्य सम्पन्न कराने का साहस किया तथा मन्दिर के निर्माण कार्य को प्रतिष्ठा के योग्य बनाने का कार्य तीव्र गति से प्रारम्भ कराया गया। इस कार्य के सम्पादन में जनता कालोनी मन्दिर के संयोजक श्री सुरेन्द्र कुमार जी [illegible] में प्रशंसनीय रही है [illegible]

धयवाद प्रेषित करती है। अन्त में श्री अजन शलाका एव प्रतिष्ठा महोत्सव दिनाक २-१२-८५ से ६-१२-८५ तक कराने का निश्चय हुआ एव इस काय का सफल सचालन हेतु जिन शासन रत्न श्री कुमारपाल वी शाह बम्बई वालो का माग दशन लिया गया जिन्होंने हिडोन पल्लीवाल क्षेत्र के जिन मन्दिरो के जीर्णोद्धार का विराट काय भी सम्पन्न कराया है। इस काय के सफल सचालन हेतु निम्न सात सदस्यो की एक समिति बनाई गई—

१ श्रीमान् शिखरचदजी पालावत
२ ,, कपिलभाई शाह
३ ,, नरेन्द्र कुमार लुनावत
४ ,, हीराचदजी चौधरी
५ ,, हीराचदजी वद
६ ,, डाक्टर भागचदजी छाजेड
७ ,, सुरेश कुमारजी मेहता

उक्त समिति ने फिर विभिन्न कार्यों के लिए १७ उपसमितिया गठित की एव प्रत्येक उपसमिति क लिए एक सयोजक मनोनीत किया। अजन शलाका प्रतिष्ठा महोत्सव के भव्य कायक्रम की श्री सघ आमत्रण पत्रिका भी बहुत सुदर छपाई गई एव भारत के सकल जैन श्वेताम्बर सघो को प्रेषित की गई इस अजन शलाका प्रतिष्ठा महोत्सव कायक्रम मे हम जो समाज के सभी सदस्यो का सहयोग व सहकार मिला है उसके लिए भी यह महा समिति सकल सघ का आभार व्यक्त करती है।

चातुर्मास के अतिम दिन अथात् कार्तिक सुदी १४ को पूज्य आचाय भगवत की निश्रा म करीबन २०-२८ भाई बहना ने श्रावक के १२ व्रत एव इससे कम व्रतो की प्रतिज्ञा भगवान की साक्षी म नाण रचा कर ली। यही नही उसी दिन श्री सघ की बृहत उपस्थिति मे लोगो ने वोसराने की भी क्रिया आचाय भगवत की निश्रा मे की। उक्त दोनो ही आयोजन जयपुर मे कई वर्षों बाद बडे ही उत्साह पूण वातावरण मे सम्पन्न हुए।

अन्त मे कार्तिक सुदी १५ को पूज्य आचाय भगवत साधु मण्डल सहित चातुर्मास परिवतन हेतु श्रीमान् सुभाषचदजी छजलानी के निवास स्थान पर एव पूज्य साध्वी श्री किरणलता श्री जी म सा श्री राजेन्द्रकुमार जी लुनावत के निवास स्थान पर पधारे। आचाय भगवत ने पगले अपने निवास स्थान पर कराने का लाभ श्रीमान् केशरीचदजी गोलेछा २ श्रीमान बाबूलाल मणिलाल शाह ३ श्रीमान रतनराजजी प्रकाशचन्दजी सिंघी ४ श्रीमान विमलरमल जी जीतमलजी शाह ५ श्रीमान सरदार मलजी जी लुनावत ६ श्रीमान कपिल भाई शाह ७ श्रीमान पारसदास जी चितामणिजी टढ्ढा ८ श्रीमान शिखरचदजी पालावत, ९ श्री हीरा चदजी टढ्ढा, १० श्री राजेन्द्रसिंहजी लोढा, ११ श्री हीराचदजी वद १२ लक्ष्मीचन्द जी भसाली, १३ श्री हीराचदजी कोठारी एव श्री राजरूपजी टाक आदि ने लिया।

इस प्रकार पूज्य आचाय भगवन्त का यह चातुर्मास जयपुर मे बडा ही ऐतिहासिक एव चिर स्मरणीय रहा। उक्त चातुमास काल म आपके दशनाथ बम्बई, अहमदाबाद, बडौदा, नासिक, उज्जैन, मेडता रोड, मद्रास, फलोदी एव कच्छ क विभिन्न नगरो से करीबन चार हजार श्रावक श्राविका पधारे जिनकी साधर्मी भक्ति का लाभ भी जयपुर श्री सघ को मिला। इस सम्पूर्ण चातुर्मास काल मे करीबन ५०-६० सघ पूजा बाहर से आये हुए एव स्थानीय श्रावक श्राविकाओ ने की जो जयपुर तपागच्छ सघ क इतिहास मे एक अपूव घटना थी।

अजन शलाका एव प्रतिष्ठा महोत्सव—

चातुर्मास पूण होने पर जनता कालोनी के

नव निर्मित भव्य शिखर बद्ध जिन मन्दिर में महा विदेह क्षेत्र विराजित विहरमान परमतारक श्री जिनेश्वर भगवंत श्री सीमंधर स्वामी, श्री पद्मनाथ स्वामी, केवलज्ञानी स्वामी तथा श्री सुपार्श्वनाथ भगवान आदि जिन बिम्बो की प्राण प्रतिष्ठा स्वरूप अंजन शलाका एवं प्रतिष्ठा महोत्सव का कार्य प्रारभ हुआ।

अंजनशलाका एवं प्रतिष्ठा विधि विधान के लिए मांडवला के सुश्रावक श्री चम्पालालजी अपनी मन्डली सहित पधारे और जयपुर के कुशल विधिकारक श्री धनरूपमलजी नागोरी एव श्री ज्ञानचन्दजी भंडारी के सहयोग से उक्त कार्य बड़ी शालीनता एवं सुन्दर रूप से सम्पन्न हुआ। वडनगर गुजरात से श्री विनोदकुमारजी रागी की संगीत मन्डली एव श्री लक्ष्मीचन्द जी भन्साली के नेतृत्व में श्री जैन नवयुवक मंडल की संगीत मंत्री तथा आत्मानन्द पाठशाला की बालिकाओ ने प्रभुभक्ति एवं कल्याणक प्रसंगों में गीत, संगीत एवं नृत्य का कार्यक्रम प्रस्तुत कर महोत्सव को बड़ा आकर्षक बना दिया था। आत्मानन्द जैन सेवक मन्डल के सदस्यों ने भी अपनी सेवाएं देकर संघ की अपूर्व भक्ति की। तखतगढ़ के श्री रूपदास जी शर्मा द्वारा पंच कल्याणक की स्टेज रचना, विविध रंगी कलात्मक सजावट एवं लाईट डेकोरेशन बड़ा ही आकर्षक रूप से प्रस्तुत किया गया।

इस महोत्सव का मंगल कार्यक्रम दिनांक २६-११-८५ को कुंभ स्थापना, अखंड दीपक स्थापना, ज्वारारोपण, स्नात्र पूजा आदि से प्रारंभ हुआ। दिनांक २-१२-८५ को प्रातः वेदिका पर प्रतिमाओं की स्थापना एवं वेदिका पूजन, क्षेत्रपाल पूजन तथा पुष्पमालती नगरी का उद्घाटन हुआ। दोपहर में श्री पार्श्वनाथ पंच कल्याणक पूजा व जलयात्रा का वरघोड़ा निकला। दिनांक ३-१२-८५ को प्रातः नवग्रह एवं दश दिक्पाल पूजन तथा दोपहर में श्री बीस स्थानक पूजा हुई।

दिनांक ४-१२-८५ को प्रातः च्यवन कल्याणक उत्सव, माता पिता एवं इन्द्र इन्द्राणी की स्थापना, चौदह स्वप्न दर्शन आदि एवं च्यवन कल्याणक का भव्य वरघोड़ा निकला। दिनांक ५-१२-८५ को जन्म कल्याणक उत्सव, छप्पनदिक कुमारी महोत्सव, मेरु शिखर पर ६४ इन्द्रों द्वारा अभिषेक एवं जन्म कल्याणक का वरघोड़ा निकला। दिनांक ६-१२-८५ को प्रियवंदा दासी द्वारा पुत्र बधाई, नाम स्थापना, पाठशाला गमन, लग्न महोत्सव, राज्याभिषेक का विशिष्ट कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। दिनांक ७-१२-८५ को दीक्षा कल्याणक का भव्य वरघोड़ा निकला जिसमें हाथी, घोड़े, ऊंट, नृत्य मण्डली व झांकियां तथा जयपुर का प्रसिद्ध दो घोड़ों का रथ भी था। इसी दिन दीक्षा कल्याणक विधि भी हुई। दिनांक ८-१२-८५ को केवल ज्ञान कल्याणक विधि एवं वरघोडा एवं निर्वाण कल्याणक विधि एवं वरघोड़ा निकला और रात्रि को पूज्य आचार्य भगवन्त ने अंजनशलाका विधि की क्रिया सम्पन्न की।

दिनांक ९-१२-८५ को प्रातः ७ बजे जन उपयोगी भवन से श्री सीमंधर स्वामी आदि जिन प्रतिमाओं का जनता कालोनी जिन मन्दिर में प्रवेश हेतु वरघोड़ा, मन्दिर के गर्भगृह में प्रवेश तथा प्रातः १० बजे परमतारक देवाधिदेव श्री सीमंधर स्वामी एवं श्री सुपार्श्वनाथ भगवान आदि जिन बिम्बों की प्रतिष्ठा, ध्वजदण्ड, कलश एवं यक्ष यक्षिणी स्थापना का कार्यक्रम विधि विधान सहित बड़े ही उमंग एवं उल्लास पूर्ण वातावरण में हुआ। इस अवसर पर प्रातः १० ३० बजे संघ के कार्यवाहक श्रावक श्राविकाओं का अभिनन्दन एवं सम्मान समारोह भी सम्पन्न हुआ जिसमें मुख्य अतिथि मोहनलालजी [illegible] में। "जिनेश्वर सीमंधर भगवान" पुस्तक का विमोचन भी हुआ। [illegible] १२ बजे [illegible]

जैन श्वेताम्बर सघ का साधर्मी वात्सल्य आयोजित किया गया। उक्त सभी कायक्रम जनता कालोनी मन्दिर के पास बने भव्य पडाल मे सम्पन्न हुए।

उक्त महोत्सव के अवसर पर सघ के भाग्यशाली श्रावक श्राविकाओ ने बडे उत्साह एव उमग के साथ विभिन्न प्रतिमाओ के प्रतिष्ठा कराने का लाभ लिया जिनके नाम इस प्रकार हैं—

१ श्रीमान बाबूलालजी तरमेमकुमारजी जैन—श्री सीमधर स्वामी भगवान की प्रतिष्ठा की कराने का लाभ।

२ श्री ज्ञानचदजी सुनीलकुमार सचेती—श्री पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिष्ठा कराने का लाभ।

३ श्री केवलचन्दजी मेहता—श्री सीमधर स्वामी की छोटी प्रतिमा की प्रतिष्ठा कराने का लाभ।

४ श्री कल्याणमलजी कस्तूरमलजी शाह— श्री पद्मनाथ स्वामी की प्रतिष्ठा कराने का लाभ।

५ डा० भागचन्द जी छाजेड—श्री सुपार्श्वनाथ भगवान की प्रतिष्ठा एव ध्वज दण्ड कराने का लाभ।

६ श्री सूरजमलजी बुद्धसिहजी वैद—श्री केवल ज्ञानी स्वामी की प्रतिष्ठा कराने का लाभ।

दिनाक १० १२ ८८ को इस नवनिर्मित एव प्रतिष्ठित मदिर के द्वार उद्घाटन की क्रिया श्रीमान डा भागचन्द जी छाजेड के द्वारा सम्पन्न हुई। इस प्रकार यह अजनशलाका एव प्रतिष्ठा महोत्सव अति भव्यता एव शालीनता से सम्पन्न हुआ जिसकी याद सदैव ही चिर स्मरणीय रहेगी। इस अजन शलाका एव प्रतिष्ठा महोत्सव पर कुल व्यय रु २,१७,२५१)०६ हुआ जिसमे साधर्मी वात्सल्य का व्यय भी सम्मिलित है।

इस अवसर पर विभिन्न सस्थाओ को तपा सघ की ओर से भेंटव स्वरूप २२५००/— दिया गया।

पूज्य आचार्य भगवत एव साध्वी जी महाराज साहब का विहार

अजन शलाका प्रतिष्ठा महोत्सव की समाप्ति के तुरन्त बाद ही पूज्य आचार्य भगवन्त श्री कला पूर्ण सूरीश्वर जी म सा ने अपने शिष्य परिवार सहित श्री फल वृद्धि पार्श्वनाथ तीथ (मेटतारोड) उपधान तप कराने हेतु जयपुर से विहार किया। आपको उपाश्रय से सुराना फाम तक पहुचाने सैकडो श्रावक श्राविकाओ ने उपस्थित होकर अपनी गुरु भक्ति का परिचय दिया। यही नहीं फलवृद्धि पार्श्व नाथ तीर्थ मे आचार्य भगवत के प्रवेश के दिन भी एक बस जयपुर से वहा गई तथा वहा आपकी गुरु पूजा एव सघ पूजा का लाभ लिया। उपधान तप के माला-महोत्सव के दिन भी इसी प्रकार एक बस पुन जयपुर से मेडता रोड आपके पुन दर्शन वन्दन करने गई क्योकि आप वहा से शीघ्र ही कच्छ के लिए विहार करने वाले थे।

इसी तरह पूज्य साध्वी श्री किरणलता श्री जी म सा आदि ठाणा ५ जिनकी सम्मेत शिखर जी तीर्थ की यात्रा करने की तीव्र भावना थी उनका भी उनकी भावनानुसार शिखरजी तीथ यात्रा करन हेतु वहा तक की सम्पूर्ण व्यवस्था कर उनको भी सकुशल विहार कराया।

वर्तमान चातुर्मास की स्वीकृति

प्रसिद्ध जैनाचाय स्व श्रीमद विजय धर्म सूरीश्वर जी महाराज (काशी वाले) के पट्ट प्रभावक आचाय देव श्रीमद विजय भक्ति सूरिश्वरजी महाराज के प्रशिष्य परमपूज्य मुनिराज श्री [illegible] विजय जी महाराज साहब के उदयपुर चातुर्मास की प्रसिद्धि सुनकर सघ की महासमिति ने उनका आगामी चातुमास जयपुर मे करान का विचार किया। तदनुसार सघ के अध्यक्ष श्री शिखर चन्द जी पालावत, उपाध्यक्ष श्री कपिल भाई शाह, सघमत्री नरेन्द्र कुमार लूनावत पुज्य मुनिराज श्री अरुण विजय जी

म सा से आगामी चतुर्मास जयपुर में करने की विनती करने हेतु उदयपुर गये। पूज्य मुनिराज ने इस सम्बन्ध में उनके आचार्य भगवन्त श्रीमदविजय प्रेमसूरिजी म. सा. से बम्बई में सम्पर्क करने की आज्ञा प्रदान की। तदनुसार संघ के अध्यक्ष श्री शिखर चन्द जी पालावत बम्बई गये एवं पूज्य आचार्य भगवन्त श्री प्रेमसूरिजी महाराज साहब से मुनिराज अरुण विजय जी म. सा को जयपुर मे चातुर्मास करने की आज्ञा प्रदान करने की विनती की। अन्त में पूज्य आचार्य भगवन्त ने जयपुर श्री संघ पर अत्यन्त कृपा करके मुनिराज श्री अरुण विजय जी म सा. को आगामी चातुर्मास जयपुर में करने के निर्देश, पत्र द्वारा दे दिये।

तत्पश्चात् पूज्य मुनिराज श्री अरुण विजय जी महाराज से जो उस समय उदयपुर से पैदल संघ लेकर राता महावीर जी तीर्थ पर पधार चुके थे पत्र व्यवहार किया गया। अंत में चैत सुदी १५ को जयपुर संघ का एक प्रतिनिधि मण्डल जिसमें सर्व श्री कपिलभाई शाह (उपाध्यक्ष) नरेन्द्र कुमार लुनावत (संघ मंत्री) विमल कान्त जी देसाई (शिक्षण मन्त्री) श्री सुरेश कुमार जी मेहता एवं चिमनभाई मेहता (सदस्य महासमिति) एव श्री मनोहरमल जी लुनावत राता महावीर जी तीर्थ कार द्वारा गये और पूज्य मुनिराज से आगामी चतुर्मास जयपुर में करने की पुनः विनती की। पूज्य मुनिराज ने जयपुर श्री संघ की विनती को मान देकर आचार्य भगवन्त की आज्ञा आने के कारण वहां उपस्थित श्री संघ के सन्मुख आगामी चातुर्मास जयपुर मे करने की स्वीकृति प्रदान कर दी और फिर जयपुर संघ की ओर से जय बुलादी गयी।

राता महावीर जी तीर्थ पर उस समय हमारे संघ के सौभाग्य से आपके ही समुदाय की साध्वी श्री लावण्य श्री जी महाराज साहब की शिष्या पूज्य साध्वी श्री नय प्रज्ञा श्री जी आदि ठाणा ६ भी विराजमान थे। जयपुर संघ ने उनसे भी आगामी चातुर्मास जयपुर में करने की विनती की। हमारे संघ की विनती को स्वीकार कर उन्होंने भी सहर्ष जयपुर चातुर्मास करने की स्वीकृति प्रदान कर दी और उनकी भी वहीं पर जयपुर चातुर्मास की जय बुलादी गई। इस प्रकार यह बड़े ही प्रबल पुण्योदय एवं सौभाग्य की बात है कि इस वर्ष भी संघ को साधु साध्वी महाराज दोनो के चातुर्मास का लाभ मिल रहा है।

पूज्य मुनिराज श्री अरुण विजय जी ठा० ३ तथा साध्वी श्री नय प्रज्ञा श्री जी ठाणा ६ राता महावीर जी से उग्र विहार कर पाली, सोजत, ब्यावर, अजमेर होते हुए दि० ८-७-८६ को जयपुर पधारे। मार्ग में आपसे आगेवान श्रावक श्राविका बराबर सम्पर्क करते रहे। जयपुर नगर में प्रवेश के पूर्व पूज्य मुनिराज ने जयपुर शहर की विभिन्न कॉलोनियों में करीबन एक सप्ताह तक अनेक विषयों पर प्रवचन देकर लोगों को जैन धर्म की विशेषता बतलाई जिससे लोगों को काफी जानकारी मिली एवं काफी असर भी पड़ा। उक्त कार्यक्रम में श्री मोतीचन्दजी कोचर, श्री शिखरचन्दजी पालावत, श्री सरदारचन्द जी भण्डारी श्री सुशीलकुमारजी छजलानी, श्री शान्तिलाल बच्चुभाई शाह आदि ने अपने निवास स्थान पर आपके प्रवचन कराकर संघ पूजा एवं संघ भक्ति का अपूर्व लाभ लिया। साथ ही श्री जैन श्वे० संघ जवाहर नगर ने मुनिराज का सार्वजनिक प्रवचन कराने का लाभ लिया।

पूज्य मुनिराज एवं साधु साध्वी मंडल का चातुर्मासार्थ नगर प्रवेश

परम पूज्य मुनिराज श्री अरुण विजयजी तथा उनके शिष्य मुनि श्री धनपाल विजय जी एवं मुनि श्री हेमन्त विजयजी म० सा० तथा साध्वी श्री नय प्रज्ञा श्री जी आदि ठाणा ६ का दिनांक १६-७-८६ को राजस्थान चैम्बर भवन के प्रांगण से सकल संघ की ओर से स्वागत किया गया। फिर

वहा से आपका नगर प्रवेश का भव्य जुलुस हाथी घोडे बैंड एवं सैंकडो साधर्मी भाई बहिनो के साथ रवाना होकर नया दरवाजा, वापू बाजार, जौहरी बाजार होता हुआ तपागच्छ मन्दिर, घी वालो का रास्ता पहुचा। मार्ग मे आपके स्वागत हेतु स्वागत द्वार बनाये गये थे तथा विभिन्न अगेवान श्रावकों ने गहुलिया कर गुरु भक्ति की। मन्दिर मे सामूहिक दर्शन व चैत्यवदन करने के पश्चात् आप आत्मानन्द सभा भवन में पधारे एव आपका मगला चरण हुआ। इसके पश्चात् सघ मत्री नरेन्द्र कुमार लुनावत एव सघ के अध्यक्ष श्री शिखरचन्दजी पालावत ने आपका सघ की ओर से अभिनन्दन किया तथा स्वागत भाषण पढा तथा जयपुर मे चतुर्मास करने हेतु कृतज्ञता प्रकट की। तत्पश्चात् पूज्य मुनिराज का "चातुर्मास मे धर्म के महत्व' विषय पर विद्वता पूर्ण प्रवचन हुआ। उस दिन सघ की ओर से सामूहिक आयम्बिल की तपश्चर्या एव नवपद जी की पूजा का भी आयोजन किया गया। अन्त मे जयपुर श्री सघ एव बम्बई के एक भाई की ओर से सघ पूजा की गई।

चातुर्मासिक आराधनाए —

परम पूज्य मुनिराज श्री अरुण विजय जी म० सा० एव अन्य साधु साध्वी महाराज साहब के जयपुर नगर प्रवेश के दिन से ही सम्पूर्ण चातुर्मास काल मे अखण्ड अट्ठम तप की लगातार तपस्याए चल रही हैं, जिनकी समाप्ति पर एक साथ प्रभावना के रूप मे प्रत्येक तपस्वी को ज्ञानवर्द्धक सामग्री दी जावेगी जिसके लिए समाज के कुछ व्यक्तियो ने आर्थिक योगदान देने का आश्वासन भी दिया है। दिनाक २३-७-८६ को पूज्य मुनिराज को "श्री सूक्त मुक्तावली सूत्र" वोहराने का लाभ सघ के उपाध्यक्ष श्री कपिनभाई शाह ने तथा श्री विपाक सूत्र" वोहराने का लाभ श्री सुकनराजजी मुलतानमलजी बम्बई वालो ने लिया। उसी दिन से पूज्य मुनिराज के प्रात ८ ३० बजे से ९ ३० बजे तक आत्मानन्द सभा भवन मे उक्त दोनो सूत्रो पर सरल भाषा मे विद्वतापूर्ण, ओजस्वी, सारगर्भित एव मार्मिक प्रवचन हो रहे हैं जिन्हें सुनने के लिए लोग सदा लालायित रहते हैं।

पूज्य मुनिराज की निश्रा मे सम्पूर्ण चातुर्मास काल मे आने वाले रविवारो को चातुर्मासिक रविवारीय धार्मिक शिक्षण शिविर का आयोजन किया गया है जिसका उद्घाटन श्रीमान मोहनलाल जी श्रीमाल द्वारा ता० २७ ७-८६ को हो चुका है। उक्त शिविर मे पूज्य मुनिराज प्रति रविवार को प्रात ९ बजे से १२-३० बजे तक एव मध्याह्न २ बजे से ४ बजे तक प्रवचन देते हैं। इन प्रवचनो मे जैन धर्म, दर्शन व कर्म विज्ञान के विभिन्न विषयो को पूज्य मुनिराज ब्लेक बोर्ड के माध्यम से चित्रो द्वारा तर्क युक्ति पूर्वक समझाते हैं। इस शिविर मे करीबन २०० भाई बहिन भाग ले रहे हैं, जिनके मध्याह्न के भोजन की व्यवस्था भी समाज के विभिन्न भक्तिवर्ताओ द्वारा की जाती है। प्रति रविवार के प्रवचन की एक पुस्तिका भी समाज के विभिन्न लोगो के आर्थिक सहयोग से प्रकाशित की जाती है। सघ के दानवीर दातागणों से निवेदन है कि शिविर मे भाग लेने वाले शिविरार्थियो की साधर्मी भक्ति का एव प्रति रविवार को छपनेवाली पुस्तिका हेतु आर्थिक सहयोग प्रदान करने की कृपा करें। अब तक जिन महानुभावो ने इन कार्यो मे सहयोग दिया है उनकी नामावली इस प्रकार हैं—

साधर्मी भक्ति के सहयोग कर्ता

१ श्री शिखरचन्दजी पालावत

२ श्री विजयराजजी लन्नुजी

३ श्री राजबहादुरसिहजी नरेन्द्रकुमारजी भण्डारी

४. श्री सुशीलकुमारजी छजलानी—(आयंबिल द्वारा भक्ति)

५. श्री कपिलभाई के० शाह

पुस्तक प्रकाशन में सहयोगी —

१. श्री पतनमलजी नरेन्द्र कुमार लुनावत

२. श्री विजयराजजी लल्लुजी

३. श्री राजवहादुरसिंहजी नरेन्द्रकुमार जी भण्डारी

४. श्री सरवरचन्दजी भण्डारी

५ श्री राजमलजी सिंघी

पूज्य मुनिराज एवं साध्वी जी महाराज साहब की प्रेरणा से अब तक सामूहिक आयम्बिल एकासने अट्ठम, वीरभाना तप के बेले एवं दीपक उन्होदरी व्रत के एकासने आदि की तपस्यायें हो चुकी है जिनका समाज के विभिन्न व्यक्तियों ने लाभ लिया है।

पिछले चातुर्मास से अब तक की मुख्य मुख्य उल्लेखनीय घटनाओं का विवरण देने के पश्चात् अब मैं इस संघ की स्थायी गतिविधियों का विवरण आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूं—

1. श्री सुमतिनाथ जिन मन्दिर

घी वालों का रास्ता, जयपुर—

करीबन 259 वर्षीय प्राचीन जयपुर नगर के इस भव्य जिनालय की व्यवस्था बहुत ही सुन्दर ढंग से सम्पन्न होती रही है। यहां की व्यवस्था एवं मन्दिर के आकर्षण से प्रभावित होकर दर्शन व पूजन करने वालों की संख्या प्रतिवर्ष बढ़ती ही जा रही है। इस मन्दिर के मुख्य आकर्षण मूलनायक श्री सुमति नाथ भगवान, श्री महावीर स्वामी भगवान की स्वर्णोत्तम प्रतिमा, श्री जय वर्धन पार्श्वनाथ भगवान एवं अधिष्ठायक श्री मणिभद्र जी हैं। इस वर्ष इस खाते में कुल आय 145884.22 रु. की एवं व्यय 73098.71 रु का हुआ है। इस राशि में से मन्दिर का जीर्णोद्धार कार्य भी सम्पन्न कराया गया है। जिसमे मूल गंभारे व मन्दिर में चित्रकारी का कार्य एवं मूल गंभारे में छज्जे पर चांदी का काम कराया गया है। इसके अतिरिक्त सामूहिक स्नात्र महोत्सव का प्रतिदिन जो आयोजन होता रहा है वह भी सुचारु रूप से चल रहा है। इस आयोजन में भाग लेने वाले सभी भाई बहिन धन्यवाद के पात्र हैं। इसके अलावा कुछ पूजा सामग्री भेट स्वरूप भी प्राप्त होती है।

इस वर्ष महावीर स्वामी के मन्दिर के बायें कक्ष में विराजित श्री कुंथुनाथ भगवान की चांदी की आंगी मय मुकुट व कुण्डल के श्रीमान सरदारमल जी लूनावत से भेट स्वरूप प्राप्त हुई है जिनका वजन अनुमानित 2250 ग्राम है। महासमिति उनके लिए उन्हे धन्यवाद प्रेषित करती है। इसके अतिरिक्त महावीर स्वामी की प्रतिमा हेतु मुकुट व सोने का तिलक आदि भी भेंट स्वरूप प्राप्त हुआ है।

अंजनशलाका व प्रतिष्ठा महोत्सव पर हुई आय में से इस वर्ष इस खाते से बाहर सहायता के रूप में रु. ३५०००/ भेजने का भी निर्णय लिया गया है साथ ही अंजन शलाका प्रतिष्ठा महोत्सव पर हुई जीवदया की आय में से भी रु. ३४०५०) बाहर सहायतार्थ भेजा गया है।

2. श्री सीमन्धर स्वामी मन्दिर, जनता कालोनी, जयपुर

जैसा कि आपको विदित है एवं पहले बताया जा चुका है कि पिछले वर्ष 9 दिसम्बर 1985 को इस देरासर की अंजनशलाका एवं प्रतिष्ठा पूज्य आचार्य भगवन्त श्री मद् विजय कलापूर्ण सूरीश्वर जी म. सा. के कर कमलों से सम्पन्न हुई। इसमें

बाद से इस जिनालय की व्यवस्था सुन्दर रूप से बराबर चल रही है एव आराधको की सख्या भी दिन प्रतिदिन बढती ही जा रही है। इस मन्दिर की नियमित व्यवस्था आदि मे इस वष कुल व्यय 6175 33 र व आय 2472 55 रु की है। साथ ही इस मन्दिर के निर्माण काय पर इस वष 2,06,211 31 रु व्यय हुआ। इस प्रकार अब तक इस मन्दिर के निर्माण काय मे 5,93,570 86 रु व्यय हुआ ह।

इस सम्बन्ध मे आपको यह भी सूचित करता हू कि मकराने मे मारबल का पत्थर समय पर प्राप्त न हो पाने के कारण हाल फिल-हाल कुछ समय से इस मन्दिर का बाकी निर्माण काय नही हो पा रहा है, परन्तु महासमिति इस बारे मे पूरी जागरूक है एव आशा करती है कि शीघ्र ही इस मन्दिर का निर्माण काय पुन शुरू किया जायगा। साथ ही मैं महासमिति की ओर से सघ के सभी भाई बहिनो से निवेदन करता हू कि जिन महानुभावो ने इस मन्दिर निर्माण हेतु राशि आश्वस्त की थी वे कृपया उक्त राशि मन्दिर जी की पेटी पर शीघ्र निशीघ्र जमा कराने का कष्ट करें ताकि निर्माण काय को गति दी जा सके।

3 श्री रिखबदेव स्वामी का मन्दिर बरखेडा—

इस तीथ की व्यवस्था भी वष भर सुचारु रूप से सम्पन्न होती रही है। इस वष इस तीथ की कुल आय 2225 50 र व व्यय 4814 75 र हुआ। ता 6 4 86 को यहा का वार्षिकोत्सव सम्पन्न हुआ जिसमे प्रातकालीन पूजा सेवा के बाद सदैव की भाति ऋषभदेव पच कल्याणक पूजा पढाई गई एव 12 बजे से साधर्मी वात्सल्य का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। इस वर्ष यहा का मेला खर्च 7124 रु हुआ जबकि आय 9178 रु हुई एव इस प्रकार इस बार की इस मेले से रु 2054 की शुद्ध बचत हुई जो एक सतोषप्रद विषय है। वतमान मे श्री राकेश कुमार जी मोहनोत महासमिति द्वारा मनोनीत इस मन्दिर की उपसमिति के सयोजक है।

4 श्री शान्तिनाथ स्वामी जिनालय चन्दलाई—

इस जिनालय की व्यवस्था भी वष भर सुन्दर रूप से सम्पन्न होती रही है। सम्वत् 2039 म जीर्णोद्धार एव पुन प्रतिष्ठा होने के बाद से यहा वार्षिकोत्सव मगसर बुदी 5 को पृथक् रूप से मनाया जाता है परन्तु अजन शलाका प्रतिष्ठा महोत्सव होने की वजह से अबकी बार वार्षिकोत्सव नहीं मनाया जा सका, हालाकि वार्षिकोत्सव के दिन ध्वजा व स्नात्र पूजा व पूजा आदि विधिवत रूप से पढाई गई है।

इस वष म इस मन्दिर के पास की जमीन पर एक चबूतरा आदि का निर्माण कराया गया ह जिसम करीबन 2792/— र व्यय हुआ। इस मन्दिर की इस वष की आय 896 50 रु हुई एव व्यय 1615/ र हुआ। इस मन्दिर की उपसमिति के सयोजक श्री ज्ञान चन्द जी भडारी है।

५ श्री वर्द्धमान आयम्बिल शाला—

श्री वधमान आयबिल शाला का काय भी वष भर सुचारु रूप मे सम्पन्न होता रहा है। इस सीगे मे इस वर्ष कुल आय २६८६६ ०७ र व व्यय २५,६४६ ११ रु० का हुआ एव इस प्रकार इस खाते म इस वष ६४६ ८६ की शुद्ध बचत हुई, जो कि एक विशेष गौरव की बात है क्योंकि पिछले वष इस खाते मे टूट रही थी। स्थायी मिति खाते मे इस वर्ष ११५३७ र की आय हुई।

यहा पर जो फोटो आदि लगाने की योजना ह इसके अतगत इस वष १५७६८/— रु० की आय हुई। इस प्रकार जो शेड निर्माण पर राशि व्यय की गई है उसमे से काफी रकम प्राप्त हो चुकी हैं। परन्तु फिरभी आपसे इसमे अधिक आर्थिक सहयोग

की अपेक्षा है ताकि यह खाता आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ हो सकें। यह आर्थिक सहयोग आप अपने फोटो लगवाकर, स्थायी मिति लिखवाकर या एक मुश्त सहायता देकर प्रदान कर सकते है। आसोज मास की ओली जी की आराधना यथावत चिमनभाई शाह जोरावरनगर वालों की ओर से सम्पन्न हुई एवं चैत्र मास की ओली की आराधना एक सद्गृहस्थ की ओर से सम्पन्न हुई।

६. विभिन्न साधु साध्वीगण का आगमन —

इस वर्ष पिछले चातुर्मास काल से लेकर अब तक निम्नलिखित साधु साध्वी महाराज साहब यहाँ पधारे जिनकी वैयावच्च भक्ति एवं विहार की व्यवस्था का लाभ इस संघ को मिला—

१. साध्वी श्री पदम यशा श्री जी म० सा० ठा० ४

२. आचार्य विजय श्री भद्रंकर सूरीश्वर जी म० सा० ठा० ५

३. साध्वी श्री आत्म प्रभा श्री जी म० सा० ठा० ५

४. साध्वी श्री सर्व भद्रा श्री जी म० सा० ठा० ६

५. साध्वी श्री शुभोदया श्री जी म० सा० ठा० ७

६. साध्वी श्री लब्धि गुणा श्री जी म० सा० ठा० ५

७. पन्यास श्री श्रेयांस विजय जी म० सा० ठा० ३

इसके अतिरिक्त इस वर्ष पन्यास श्री श्रेयांस विजय जी म० सा० के शिष्य मुनि श्री पुण्यचन्द्र विजय जी का अचानक हृदय गति रुक जाने से ता. १२-४-८६ को जयपुर में कालधर्म हो गया। आप करीबन ४-५ दिन जयपुर विराजकर अजमेर की ओर विहार कर सुराना फार्म पधारे थे कि अचानक तबियत बिगड़ जाने एवं हृदय गति रुक जाने के कारण कालधर्म हो गया। जयपुर संघ के अगेवानों ने वहां जाकर इस सम्बन्ध में सम्पूर्ण व्यवस्था की एवं ता० १३-४-८६ को आपका जयपुर में विधिवत अग्नि संस्कार किया गया। जयपुर श्री संघ इस अवसर पर मुनि श्री पुण्यचन्द्र विजय जी को श्रद्धांजलि अर्पित करता है एवं शासन देव से प्रार्थना करता है कि उनकी आत्मा को शान्ति प्रदान करे। उनकी पुण्य स्मृति में उनकी एक फोटो इस हाल में भी लगाई गई है। उनके आत्म श्रेयार्थ अष्टान्हिका महोत्सव उवसग्गहरं महापूजन सहित, श्री संघ की ओर से सम्पन्न हुआ।

७. साधारण— इस खाते में मुख्य रूप से व्यय के मद साधु साध्वियों की वैयावच्च व विहार व्यवस्था, मणिभद्र स्मारिका प्रकाशन, साधर्मी भक्ति, उद्योग शाला एवं कर्मचारियों का वेतन आदि है। इस वर्ष इस खाते में कुल आय रु० ८४३४९.२७ हुई एवं व्यय रु० ७४६९२.८४ का हुआ। इस प्रकार इस खाते में इस वर्ष भी करीबन रु. ९६५६.४३ की बचत रही। इस वर्ष इस खाते में मणिभद्र भण्डार से रु० ७०००/— की भेंट भी प्राप्त हुई। इस प्रकार यह खाता इस वर्ष भी टूट से मुक्त रहा जो एक संतोषप्रद विषय है।

इस खाते के अन्तर्गत चलने वाली उद्योग शाला भी वर्ष भर सुचारू रूप से चल रही है साथ ही साधर्मी भक्ति का कार्यक्रम भी पूर्ववत चालू है। इस वर्ष साधर्मी भक्ति एवं सहायता पर कुल ४८०२.८५ का व्यय हुआ।

८. ज्ञानखाता— इस खाते में पुस्तकालय ज्ञान भण्डार एवं धार्मिक पाठशाला के व्यय शामिल है।

इस वर्ष इस खाते मे कुल आय रु० १४७१३ ८५ हुई एव व्यय रु० १६४३४-८१ का हुआ। इस वष पुस्तकालय हेतु नई पुस्तकें रु० २५०२-३० की क्रय की गई। साथ ही दैनिक, साप्ताहिक, मासिक पत्र पत्रिकाऐ एव वातोपयोगी साहित्य भी मगाया जाता है। इसके अतिरिक्त सघ द्वारा सचालित धार्मिक पाठशाला भी नियमित रूप से चल रही है। धार्मिक पाठ शाला का अधिक से अधिक उपयोग हो उसके लिए आप अपने बालक वालिकाओ को अधिक से अधिक सख्या मे धार्मिक पाठशाला मे भेजे ऐसी आपसे आग्रह भरी विनती है। इसके अतिरिक्त ४ काच की स्टील की आलमारिया भी ग्र थ मडार हेतु खरीदी गई है। इस वप इस खाते से 'मन मिले भीतर भगवान" पुस्तक भी प्रकाशित कराई गई है।

६ सार्धमिक भक्ति कोष– पिछले वष पुज्य आचाय श्रीमद विजय कलापूर्ण सूरीश्वर जी म० सा० की प्रेरणा से इस काय हेतु जो कोष स्थापित किया गया था उसमे मार्च ८६ तक र २८५६३ २१ की प्राप्ति हो चुकी है एव शेष अभी उगाही। वाकी है। इस सम्बन्ध मे विस्तृत योजना विचाराधीन है एव शीघ्र ही नियमित भोजन शाला बाहर से आने वाले साधर्मिक बधुओ के लिए शुरू की जा रही है।

१० मणिभद्र प्रकाशन—

इस सस्था के मुख पत्र "मणिभद्रस्मारिका" के २७ व अक का प्रकाशन भी पूर्ववत सुन्दर ढग से सम्पन्न हुआ। इस अक के प्रकाशन मे कुल व्यय र १६३२५-५५ व कुल आय विज्ञापन आदि से र० १३०००/—की हुई। इस प्रकार इस वप इस स्मारिका पर टूट रही जो कि मुख्य रूप से कागज व छपाई आदि की दरो म वृद्धि हो जाने के कारण रही। महा समिति इस हेतु जागरूक है एव विज्ञापन आदि से आय बढाकर अब इस प्रकार की टूट न हो इस हेतु प्रयत्नशील है।

११ सोढाला मन्दिर हेतु भूमि की प्राप्ति—

श्रीमान प्रकाश चन्द्र जी मेहता की मातु श्री श्रीमती रतन देवी मेहता ने सोढाला मन्दिर एव उपाश्रय निर्माण हतु एक जमीन अजमेर रोड पर जो करीबन २८५ वग गज है, श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ को एक भेंट पत्र दिनांक २१-६-८६ द्वारा भेंट कर दी है। उसके लिए महासमिति उनका बहुत बहुत आभार प्रकट करती है एव विश्वास दिलाती है कि शीघ्र ही वहा मन्दिर व उपाश्रय का निमाण कराया जायेगा।

१२ श्री रिखबदेव भगवान मन्दिर ट्रस्ट मे तपागच्छ सघ को प्रतिनिधित्व—

अपने यहा स्थित आगरे वाले मन्दिर के ट्रस्ट श्री रिखबदेव भगवान मन्दिर ट्रस्ट मे ट्रस्ट के अध्यक्ष श्रीमान् सेठ निहालचन्दजी नाहटा ने तपागच्छ सघ के अध्यक्ष व सघ मन्त्री को ट्रस्टी मडल मे लेकर प्रतिनिधित्व दिया है। अब तपागच्छ सघ के अध्यक्ष तथा सघ मन्त्री उनके ट्रस्ट मण्डल मे सदैव ट्रस्टी रहेंगे। महासमिति इसहेतु श्रीमान् निहालचन्द जी साहब नाहटा को हार्दिक धन्यवाद देती है। इस ट्रस्ट की एक सभा मे जो रायपुर मे गत अप्रेल मे हुई थी उसमे सघ के अध्यक्ष व सघ मन्त्री भाग भी ले चुके हैं।

13 आर्थिक स्थिति—वतमान मे सघ की आर्थिक स्थिति काफी सुदृढ है। जनता कालोनी मन्दिर के निर्माण कार्य एव अजन शलाका एव प्रतिष्ठा महोत्सव का व्यय होने के बावजूद भी सस्था के समस्त काय सुचारु रूप से सम्पन्न होते रह हैं। इस वप की कुल आय रु 816304 69 हुई। जिसमे बरखेडा मन्दिर, स्थायी मिती

आयंबिल शाला एवं स्थायी मिती जोत खाते की आय रु. 14,014.50 भी शामिल है।

इस वर्ष कुल व्यय 6,67,781.93 हुआ जिसमें बरावेड़ा मन्दिर की व्यय भी शामिल है। इस प्रकार इस वर्ष मे करीबन रु. 1,48,522.76 की शुद्ध बचत हुई। इस प्रकार इस वर्ष की आय एक रिकार्ड है जो कि करीबन पिछले तीन वर्षो की आय के बराबर है। इसी प्रकार स्थायी जमायें जो जनवरी 1985 में करीबन रु. 2,33,000 की थी अब बढ़कर 3,98,000 रु. की हो गई है।

14. आत्मानन्द सेवक मण्डल—श्री आत्मानन्द जैन सेवक मण्डल का कार्य भी वर्ष भर सराहनीय रहा। वर्तमान मे इसके अध्यक्ष श्री शीतल शाह एवं मन्त्री श्री अशोक जैन है। पिछले चातुर्मास से लेकर अब तक के सम्पन्न हुए सभी कार्यक्रमो विशेषकर मेलों की व्यवस्था, अंजनशलाका व प्रतिष्ठा महोत्सव की व्यवस्था एवं विचक्षण श्री जी म. सा के मूर्ति स्थापना समारोह एवं विभिन्न समारोहों आदि मे इनका कार्य प्रशंसनीय रहा। साथ ही पिछले वर्ष करीबन 10 बसें एक दिवसीय यात्रा के रूप मे श्री महावीर जी तीर्थ ले जाने का कार्य भी मण्डल द्वारा सफल रूप से सम्पन्न हुआ। इसके लिए मण्डल के सभी सदस्य बधाई के पात्र हैं।

15. अंकेक्षक—वर्तमान महासमिति संघ के अंकेक्षक श्री राजेन्द्र कुमार जी नतर बी. ए. के प्रति भी अपना आभार प्रकट करती है जिन्होंने कई वर्षों [illegible] इस संस्था के हिसाब किताब आदि का आडिट व इन्कमटैक्स संबंधी कार्य भी निःस्वार्थ भाव से [illegible]या है एवं वर्तमान में भी वे यह कार्य कर रहे है। [illegible]मिति इस सेवा के लिए उन्हे धन्यवाद प्रेषित करती है। उनके द्वारा प्राप्त आडिट रिपोर्ट एवं आय व्यय विवरण मूल रूप से प्रकाशित किया जा रहा है। इस वर्ष की आयकर सम्बन्धी रिर्टन भी पेश की जा चुकी है।

16. कर्मचारी वर्ग—इस संघ के अधीन समस्त कर्मचारी वर्ग का कार्य भी वर्ष भर सन्तोषजनक रहा है और उन्ही के सहयोग से संघ की सभी गतिविधियां सुचारु रूप से सम्पन्न होती रही हैं। साथ ही महासमिति भी उनकी सेवाओं और कठिनाइयों दोनों के प्रति सजग रही है और पिछले वर्षो की भांति इस वर्ष भी उनके वेतनों में वृद्धि कर उन्हे आर्थिक लाभ पहुँचाया गया।

कर्मचारी वर्ग का जो सहयोग हमे मिलता रहा है उसके लिए महासमिति की ओर से मै कर्मचारी वर्ग को भी धन्यवाद देता हूं।

अन्त में इस वर्ष के सफल कार्य संचालन मे प्राप्त सहयोग के लिये यह महासमिति समस्त श्री संघ का आभार व्यक्त करती है कि जिन्होंने पिछले चातुर्मास काल में हुए कार्यक्रमों एवं उसके बाद हुए अंजन शलाका प्रतिष्ठा महोत्सव मे इस संस्था को तन मन धन से सहयोग दिया।

साथ ही महासमिति टांक धर्मशाला पूरे चतुर्मास काल मे उपयोग हेतु देने के लिए श्रीमान राजरूप जी साहब टांक की भी बहुत आभारी है एवं खरतरगच्छ संघ ने भी जो सहयोग हमें अंजन शलाका प्रतिष्ठा महोत्सव पर दिया है उसके लिए भी हम उनका आभार प्रकट करते है।

इसके अतिरिक्त श्री [illegible] को [illegible] संघ भी [illegible] एवं जैन युवक मण्डल को महावीर [illegible] किया था

प्रस्तुत कार्यक्रम हेतु विशेष रूप मे धन्यवाद देती है और आशा करती है कि आप सब का सहयोग इसी प्रकार भविष्य मे भी मिलता रहेगा।

इन्ही शब्दो के साथ मैं सन् 1985-86 का यह वार्षिक विवरण व आय व्यय का लेखा प्रमुख घटनाओ सहित आपकी सेवा मे सादर प्रस्तुत कर अपना वक्तव्य समाप्त करता हूँ।

॥ जय मणिभद्र ॥

"Fillers-Pr" Mani Bhadra

(1) Have freedom of thought and not of expression

-"quotedin Reader s Digest

(2) Speak little about what you know and keep quiet about what you don t know

– 'Sadi Nicolas Carnot

(3) No body has any other right than of doing our's duty

– 'Auguete Comte

(4) Let the other fellow find out who you are He will remember it longer

–"Wall Street Journal'

(5) Flattery is all right if you don t in hole

– Adlai Stevenson

आडिटर्स-रिपोर्ट

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ
घी वालों का रास्ता,
जयपुर ।

विषय : दिनांक 31-3-85 को समाप्त होने वाले वर्ष का अंकेक्षण प्रतिवेदन ।

(1) हमें वे सभी सूचनाएें व स्पष्टीकरण प्राप्त हुए हैं, जिनकी हमें अंकेक्षण हेतु हमारी जानकारी के लिये आवश्यकता थी ।

(2) संस्था का चिट्ठा व आय-व्यय खाता जिनका उल्लेख हमने हमारी रिपोर्ट में किया है, लेखा पुस्तकों के अनुरूप है ।

(3) हमारी राय में, जैसा कि संस्था की पुस्तकों से प्रकट होता है, संस्था ने आवश्यक पुस्तकें रखी है ।

(4) हमारी राय में "प्राप्त सूचनाओं एवं स्पष्टीकरण के आधार पर बनाया गया चिट्ठा व आय-व्यय का हिसाब सच्चा व उचित चित्र प्रस्तुत करता है ।

वास्ते : चतर एण्ड कम्पनी
जौहरी बाजार, जयपुर
दिनांक : 27.8.86

चार्टर्ड एकाउन्टेन्टस्,
R. K. Chatter (C.A.)
Prop.
For Chatter and Company

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ

घी वालो का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर

आय-व्यय खाता

(दिनाक 1–4–85 से 31–3–86)

गत वर्ष की रकम	व्यय		चालू वर्ष की रकम	गत वर्ष की रकम	आय		चालू वर्ष की रकम
64,903 97	श्री मन्दिर खर्च खाते नामे		73,099.36	99,210 36	श्री मन्दिर खाते जमा		1,45,884 22
	श्री आवश्यक खर्च	45,157 34			भेंट खाता	90,212 46	
	श्री विशेष खच	27,942 02			पूजन खाता	9,531 58	
					किराया खाता	720 00	
					ब्याज खाता	13,752 43	
					चदलाई	896 50	
					जोत	408 50	
					जीर्णोद्धार	30,362 75	
4,255 60	श्री मणिभद्र भण्डार खच खाते नामे		2,141 75	11,064 54	श्री मणिभद्र भण्डार खाते जमा		10,952 86

	श्री आवश्यक खर्च	38,962.90			खाते जमा		
	श्री विशेष खर्च	35,729.94			भेंट खाता	48,625.30	
					वैयावच्च	10,609.00	
					किराया	4,888.00	
					मणिभद्र प्रकाशन	8,672.00	
					उद्योग शाला	795.00	
					खर्च खाते जमा	172.80	
					ब्याज खाता	10,587.17	
2,142.09	श्री ज्ञान खर्च खाते नामे		19,434.81	12,624.98	श्री ज्ञान खाते जमा		14,713.85
	श्री आवश्यक खर्च	7,657.51			भेट खाता	11,643.50	
	श्री विशेष खर्च	11,777.30			ब्याज	2,815.35	
					साहित्य प्रकाशन	255.00	
23,216.20	श्री आयम्बिल खर्च खाते नामे		25,950.07	16,578.16	श्री आयम्बिल खाते जमा		26,896.07
	श्री आवश्यक खर्च	25,670.07			भेट खाता	21,147.35	
	श्री विशेष खर्च	280.00			ब्याज खाता	3,033.00	
					किराया खाता	2,715.72	
3,666.00	श्री जीवदया खर्च खाते नामे		34,057.85	5,100.68	श्री जीव दया खाते जमा		48,321.60
46.00	श्री गुरुदेव खर्च खाते नामे		12.00	1,886.81	श्री गुरूदेव खाते जमा		448.76
205.25	श्री शासनदेवी खाते नामे			930.42	श्री शासनदेवी खाते जमा		796.94
3,807.02	श्री जनता कालोनी मन्दिर खर्च खाते नामे		6,175.33	1,728.85	श्री जनता कालोनी मन्दिर खाते जमा		2,472.55

65,259 43	श्री जनता कालोनी निर्माण खाते नामे	2,06,211 31	40,860 00	श्री जनता कालोनी निर्माण खाते जमा	2,09,098 06
815 50	श्री आयम्बिल जीर्णोद्धार खाते नामे	3,940 80	8,028 00	श्री आयम्बिल जीर्णोद्धार खाते जमा	15,794 00
	श्री सात क्षेत्र खाते नामे		48 90	श्री सात क्षेत्र खाते जमा	12 25
	श्री अजन शला का प्रतिष्ठा खाते नामे	2,17,251 06		श्री अजन शालाका प्रतिष्ठा खाते जमा	2,13,956 55
53,101 65	श्री बचत सामान्य कोष मे हस्तान्तरित	1,39,323 01		श्री साधर्मिक सेवा कोष	28,593 21
2,70,456 62		8,02,290 19	2,70 456 62		8,02,290 19

शिखर चन्द पालावत
अध्यक्ष

मोतीलाल कटारिया
अर्थ मन्त्री

पुष्पमल लोढा
हिसाब निरीक्षण

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ सघ, जयपुर

वास्ते चतर एण्ड कम्पनी
चार्टेड एकाउन्टेट
आर के चतर

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ

घी वालों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर

चिट्ठा

(दिनांक 1–4–85 से 31–5–86 तक)

गत वर्ष की रकम	दायित्व		चालू वर्ष की रकम	गत वर्ष की रकम	सम्पत्तियाँ		चालू वर्ष की रकम
2,98,959.46	सामान्य कोष			26,748.45	श्री स्थायी सम्पत्ति		
	पिछला शेष	2,98,959.46	4,38,282.47		"लागत" पिछले वर्ष के अनुसार		26,748.45
	इस वर्ष का लाभ आय-व्यय खाते से लाया गया	1,39,323.01			श्री विभिन्न लेनदारियां :		
74,488.00	स्थायी मिती आयम्बिल शाला			2,474.50	श्री उगाई खाता	2,474.50	
	पिछला शेष	74,480.00		10,100.00	श्री अग्रिम खाता	19,850.00	
	इस वर्ष में जमा रकम	11,537.00	86,017.00	727.00	श्री राज० स्टेट इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड	727.00	
2,416.00	स्थायी मिती कोष जोत			4 9.00	श्री भण्डार खाता	–	
	पिछला शेष	2,416.00		788.40	श्री श्राविका संघ	–	23,051.50
	इस वर्ष में जमा रकम	252.00	2,668.00	18,423.59	श्री बरखेडा खाता		

पिछला वर्ष	विवरण		रकम
1,860 00	श्री सवत्सरी पारना कोष		1,860 00
3,844 30	श्री नवपद जी पारना		3,844 30
21,491 10	श्री श्राविका सघ खाते		
	पिछला शेष	20,702 70	
	इस वर्ष की जमा रकम	2,500 00	
		23,202 70	
	घटाया इस वर्ष का खर्चा	7,123 65	16 079 05
2,500 00	श्री ज्ञान स्थायी कोष		2 500 00
678 94	श्री रमेश चन्द भाटिया		678 94
14,062 32	श्री बरखेडा तीर्थ		—
—	श्री फरक खाता		2 10

पिछला वर्ष	विवरण		रकम
	पिछला बाकी	4,361 27	
	इस वर्ष का खर्च	4,814 75	
		9,176 02	
	घटाया इस वप की जमा रकम	2,225 50	6,950 52
2,54,398 60	श्री बंको मे व रोकड बाकी		
	(क) स्थायी जमा खाता		
	1 स्टेट बंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर	2,64,379 05	
	- बंक ऑफ बडोदा	62,400 00	
	3 देना बंक	29,417 50	3,56,196 55
935 04	(ख) चालू खाता		1,435 04
88,806 45	(ग) बचत खाता		
	1 बंक ऑफ बडोदा	1,125 54	
	2 बंक ऑफ राजस्थान	2,207 97	

		3. स्टेट बैंक ग्रॉफ बीकानेर एण्ड जयपुर 1,32,990,77	1,36,324.28
	16,391.09	(अ) रोकड़ शेष	1,225.52
4,20,292.12	5,51,931.86 4,20,292.12		5,51,931.86

नोट : उपरोक्त चिट्ठे में संस्था की पुरानी चल व अचल सम्पत्ति जैसे बर्तन, मन्दिर जी की पुरानी जायदाद व जेवरात शामिल नहीं है, क्योंकि उनका मूल्यांकन नहीं किया गया है ।

शिखरचन्द पालावत
अध्यक्ष

मोतीलाल कटारिया
अर्थ मन्त्री

पुष्पमल लोढ़ा
हिसाब निरीक्षक

वास्ते : चतर एण्ड कम्पनी
चार्टर्ड एकाउन्टेंट
आर. के. चतर

श्री जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ, जयपुर

श्री जैन श्वे. तपागच्छ संघ, जयपुर की महासमिति

(१९८५–८७)

क्र स	नाम पद एव पता		निवास	कार्यालय
१	श्री शिखरचन्द पालावत डिग्गी हाउस, १५, शिवाजी मार्ग	अध्यक्ष	४२७००	६१११०
२	श्री कपिलभाई केशवलाल शाह इ डियन वूलन कारपेट पानो का दरीबा	उपाध्यक्ष	४५०३३	
३	श्री नरेन्द्रकुमार लुणावत २१३५-३६, लुणावत हाउस, दडा मार्केट, हल्दियो का रास्ता	सघमन्त्री	४१८८२	
४	श्री मोतीलाल कटारिया दूगड बिल्डिग, एम आई रोड	अथमत्री		७४९१९
५	श्री भगवानदास पल्लीवाल चाक्सू का चौक, घी वालो का राम्ता	भण्डाराध्यक्ष	४३००१	
६	श्री खीमराज पालरेचा ग्रोसवाल मेडिकल ऐजेन्सीज, टट्टा मार्केट	मदिर मन्त्री		४२०६३
७	श्री मोतीचन्दजी चौरड़िया वेरी का वास, कु दीगरो के भेरूजी का रास्ता	आ शाला मत्री	४५७२०	
८	श्री विमलकान्त देसाई दरोगाजी की हवेली के सामने, ऊचा कुआ, हल्दियो का रास्ता	शिक्षण मत्री	४१०८०	
९	श्री राजेन्द्रकुमार लुणावत ४५५, ठाकुर पचेवर का रास्ता, रामगज बाजार, जयपुर	उपाश्रय मत्री	PP ४५११९	
१०	श्री पुष्पमल लोढा सी-११, देवनगर, टोक फाटक, जयपुर	हिसाब निरीक्षक		
११	श्री विमलकुमार लुणावत डिग्गी वालो का नोहरा, जड़ियो का रास्ता	सदस्य	४६९४५	
१२	श्री राकेशकुमार मोहनोत ४४५९, कुन्दीगरो के भैरूजी का राम्ता	सदस्य सयोजक, वरखेड़ा मदिर	४१०३८	

क्र. सं.	नाम पद एवं पता		निवास	कार्यालय
१३.	श्री ज्ञानचन्द भण्डारी दाई की गली, घी वालों का रास्ता, जयपुर	सदस्य संयोजक, चन्दलाई मन्दिर		
१४.	डा० भागचन्द छाजेड़ पांच भाइयों की कोठी, आदर्श नगर	सदस्य	४३५७०	६५३२०
१५.	श्री विनयकुमार कोचर पुलन्दरजी की गली, रामलालजी का रास्ता	सदस्य		४१३७४
१६.	श्री नरेन्द्रकुमार कोचर ४३५०, नथमलजी का चौक, कुण्दीगरों के भेरूजी का रास्ता,	सदस्य	४४७५०	
१७.	श्री गुणवन्तमल सांड विजय गच्छ मन्दिर के सामने	सदस्य	४०१५०	
१८.	श्री सुशीलकुमार छजलानी घी वालों का रास्ता	सदस्य	४२७८६	
१९.	श्री चिमनलाल मेहता जड़ियों का रास्ता, सिंघी भवन	सदस्य		
२०.	श्री सुरेशकुमार मेहता दिल्ली वालों की हवेली, गोपालजी का रास्ता	सदस्य	४७६५५	६०४१५ ६०४१७ | Ext. २०
२१.	श्री अशोककुमार जैन अचार वालों की गली, प्रभुदासजी कोटा वालों का मकान	सदस्य	४६८५१	
२२.	श्री चिन्तामणि ढढ्ढा १८८०, ऊंचा कुआं, हल्दियों का रास्ता,	सदस्य	४५११९	
२३.	श्री भंवरलालजी मूथा सिन्धी कैम्प बस स्टेण्ड के पास शनिश्चरजी के मन्दिर के सामने	सदस्य	६८५९६	६४६३८
२४.	श्री रतनराजजी सिंघी मनिहारों का रास्ता	सदस्य	४६२४४	
२५.	श्री लक्ष्मीचन्दजी भंसाली गोपालजी का रास्ता, जयपुर	सदस्य	४८६२२	४८६३६

29	श्रीमती नगीना बहन आगरा वाला	151-00
30	श्री इन्दरचन्दजी गार्प चन्दजी चौरडिया	151-00
31	श्री जसवतमलजी जगवतमलजी साड	302 00
32	श्री मोतीलालजी माणकचन्दजी	151-00
33	डा० श्री भागचन्दजी छाजेड –	151-00
34	श्री शम्भेश्वरमलजी लाडा	151-00
35	श्री ज्योती बहन	151-00
36	श्री विजयराजजी लल्लुजी	151-00

WHAT IS LIFE ?

—HARISH MEHTA

Life is a Challenge	Meet it
Life is a Gift	Accept it
Life is a Sorrow	Overcome it
Life is a Tragedy	Face it
Life is a Duty	Perform it
Life is a Play	Play it
Life is a Mystery	Unfold it
Life is a Oppurtunity	Take it
Life is a Journey	Complete it
Life is a Promise	Fulfil it
Life is a Puzzle	Solve it
Life is a Spirit	Realise it
Life is a Goal	Achieve it
Life is a Love	Enjoy it
Life is a Beauty	Praise it
Life is an Adventure	Dare it
Life is a Pleasure	Greet it
Life is an Ocean	Dive it
Life is a Meal	Eat it
Life is a Festival	Celebrate it
Life is a Sea	Sail on it
Life is a Drama	Act it
Life is a Book	Read it
Life is a Song	Sing it

सांवत्सरिक प्रतिक्रमण कर मन वचन और काय से
सबको क्षमाया, आप से, चाहें क्षमा सिर नाय के
अपराध अविनय, बन गया हो, यदि कोई इस वर्ष में
कृपया क्षमा कर दीजिये, सांवत्सरी के हर्ष में

यदि भला किसी का कर न सको
तो बुरा किसी का मत करना
अमृत न पिलाने को घर में
तो जहर पिलाने से डरना
यदि सत्य मधुर न बोल सको
तो झूंठ कठिन भी मत बोलो
यदि मौन रखो सबसे अच्छा
कम से कम विष तो मत घोलो
यदि घर न किसी का बांध सको
तो झोंपड़िया न जला देना
यदि मरहम पट्टी कर न सको
तो खार नमक न लगा देना
यदि फूल नहीं बन सकते
तो कांटे बन कर न बिखर जाना
मानव बन कर सहला न सको
तो दिल भी किसी का दुखाना ना
मुनि पुष्प अगर भगवान नहीं तो
कम से कम इन्सान बनो
किन्तु न कभी शैतान बनो
और न कभी हैवान बनो

बार-बार नर तन का पाना, बच्चों वाला खेल नहीं
जन्म जन्म के सब कर्मों का, मिलता जब तक मेल नहीं
इस जीवन का मान न करिये, इसका कुछ एतबार नहीं
दया, दान, सत्य, शील, धर्म बिनु, मनुष्य जन्म का सार नहीं

क्षमा प्रार्थी

शिखर चन्द ज्ञान चन्द 61190
तिलक चन्द अरुण कुमार 42700
पालावत परिवार, जयपुर 47285